वाणी सरोवर

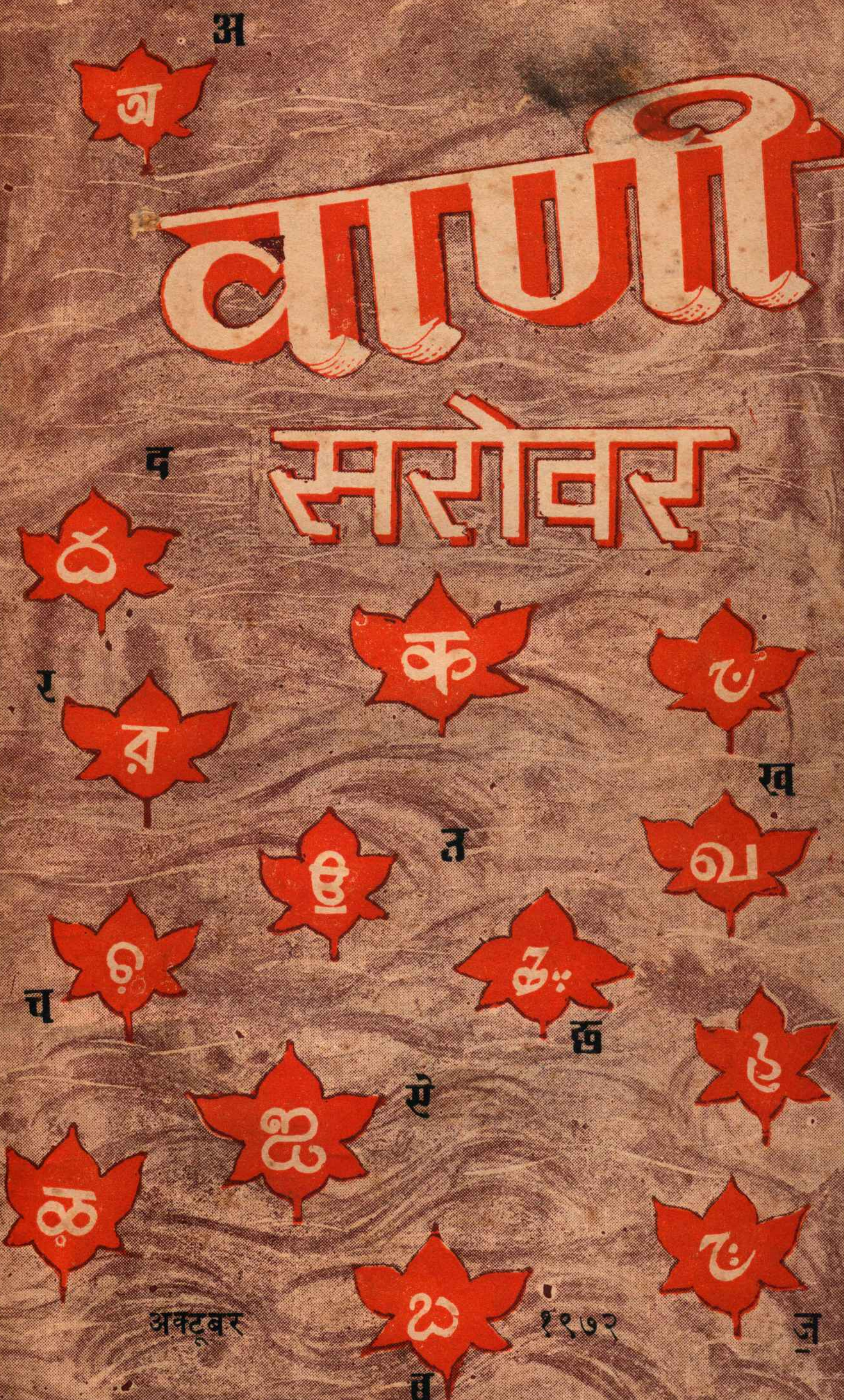

अक्टूबर १९७२

भुवन वाणी ट्रस्ट
रानी कटरा - लखनऊ ३.

[भुवन वाणी ट्रस्ट (पंजीकृत) लखनऊ का मुखपत्र (त्रैमासिक)]

वाणी सरोवर

प्रत्येक क्षेत्र प्रत्येक संत की बानी।
संपूर्ण राष्ट्र में घर-घर है पहुँचानी॥

संपादक—नन्दकुमार अवस्थी   प्रब०सं०—विनयकुमार अवस्थी

वर्ष—३   अक्तूबर, १९७२   अंक—४

विद्वत्-परिषद्

असमिया—बसन्तकुमार सैकिया
सुश्री दीप्ति बरगुहाईं

अरबी—क़ारी मुहम्मद उस्मान सिद्दीक़ी, इम्दादुल्उलूम, साबरकाठा, गुजरात

ओड़िया—सुरेशचन्द्र नन्द एम. ए. हिन्दी-ओड़िया, रा० भा० रत्न, कटक

अंग्रेजी—डॉ. एम. डी. पटियाल
प्रि. उ. भा. धर्ममहा. वि. बरेली

उर्दू—डॉ. स० असदअली एम.ए., पीएच्. डी.
सुश्री माजदा असद एम.ए. पीएच्.डी.

कन्नड़—डॉ. वी. बी. पुत्रन, एम. ए. पीएच्. डी., बंबई

कश्मीरी—डॉ. शिबनकृष्ण रैणा एम. ए., पीएच्. डी. नाथद्वारा (राज.)

गुजराती—डॉ. दीनेश हरिलाल भट्ट, एम.ए. पीएच्.डी., रा०भा० रत्न, बंबई

गुरुमुखी—डॉ० अमरसिंह खालसा, डा० आफ़ डिविनिटी (यू. एस. ए.)
प्र० संपादक 'सरदार' लखनऊ

तमिळ—वी. नटराजन एम. काम.

तेलुगु—डॉ. भीमसेन 'निर्मल', एम. ए., पीएच्.डी., रीडर, उस्मानिया वि.वि.

नेपाली—नन्दकुमार आमात्य
सुश्री तपेश्वरी देवी आमात्य

पाली—डॉ० हर्षनारायण एम.ए., पीएच्.डी.

पारसी—सुश्री नाजू दारा देबू, 'दिलनवाज़'

फ़ारसी—स० मस्ऊदहसन रिज़्वी, भारत-सरकार-सम्मानित, भू.पू. (फ़ारसी) विभागाध्यक्ष लखनऊ वि० वि०

बंगला—प्रबोध मजुमदार

मराठी—प्रा० गजानन साठे, एम.ए., मराठी-अंग्रेजी, हिन्दी, बी.टी., पीएच्. डी. (हिन्दी), बंबई
सुश्री कुसुम ताम्बे, एम. ए.

मलयाळम—के. ए. एस. अय्यर, भू. पू. उपकुलपति लख० वि० वि०

संस्कृत—बिहारीलाल शास्त्री, काव्यतीर्थ, बरेली

सिन्धी—प्रा० कु० पी. टी. आसवाणी, एम. ए. साहित्यरत्न
एन. के. केवलरामानी, सा.मं.सिं.स.

हिन्दी—रामेश्वर प्रसाद पाण्डेय 'रमेश' शास्त्री, साहित्यरत्न

वार्षिक मूल्य १०·००   एक प्रति २·५०

विषय-सूची

क्रम	विषय	लेखक	पृष्ठ
१	विद्वत्परिषद्	... ...	१
२	विषय-सूची	... ...	२
३	चिथड़े (कविता) (क्रमशः)	श्री हरनन्दन वाजपेयी	३
४	सम्पादकीय एवं समालोचना	नन्दकुमार अवस्थी	४-६
५	ऋग्वेद १।६।२ के अंश से १।६।१०	श्री बिहारीलाल शास्त्री	७-८
६	(फ़ारसी) सिर्रे अक्बर—शा. दाराशिकोह कृत ५१ उपनिषदों की व्याख्या। (क्रमशः)	अनुवादक—डॉ. हर्षनारायण एम.ए.,पीएच्.डी.	१६१-१६८
७	(मलयाळम) कवि तुञ्चत्त् एळुत्तच्छन्कृत महाभारत (क्रमशः)	सानु.लिप्य.—श्री के.ए.एस.अय्यर,भू.पू. उपकुलपति लख. वि.वि.	१६९-१७६
८	(बंगला) कृत्तिवास रामायण लं.कां.—(क्रमशः)	लिप्य.—नन्दकुमार अवस्थी, अनु.—श्री प्रबोध मजुमदार	१६९-१७६
९	(तमिऴ) तिरुक्कुरळ्—सानु० लिप्य०—सुश्री गोमती अय्यर, बी. ए.	पद्य-भावानुवाद—नन्दकुमार अवस्थी (क्रमशः)	१४५-१५२
१०	(उर्दू) गुज़श्तः लखनऊ—मौ० अब्दुल हलीम शरर, (क्रमशः)	लिप्यन्तरणकार—श्री विनयकुमार अवस्थी	१७-२४
११	(अ़रबी) रियाज़ुस्सालिहीन (ज़ादं सफ़र)—(क्रमशः)	लिप्यन्तरणकार—नन्दकुमार अवस्थी	१२९-१३६
१२	(ओड़िया) वैदेहीश-विळास—उपेन्द्र भञ्ज कृत—(क्रमशः)	सानु० लिप्य०—श्री सुरेशचन्द्र नन्द, एम.ए., कटक	१४५-१५२
१३	(मराठी) श्रीराम-विजय—श्रीधर स्वामी कृत—(क्रमशः)	अनु०—डॉ० गजानन साठे,पूना एम.ए.,अंग्रेज़ी-मराठी-हिन्दी	१०५-११२
१४	(असमिया) माधव कन्दली कृत रामायण—(क्रमशः)	सानु० लिप्य०—श्री प्रबोध मजुमदार	८१-८८
१५	(गुजराती) गिरधर-रामायण—(क्रमशः)	सानु. लिप्य०—डॉ. गजानन साठे,पूना,डॉ. दीनेश भट्ट, बंबई	७३-८०
१६	(तेलुगु) रंगनाथ रामायण—(क्रमशः)	सानु० लिप्य०—डॉ० भीमसेन 'निर्मल',एम.ए., पी.एच्. डी.	६५-७२
१७	(सिन्धी) सामीअ जा सलोक—(क्रमशः)	सानु० लिप्य०—प्रा० कु० पी. आसवाणी एम. ए. सा० र०	६५-७२
१८	(कन्नड़) पम्प रामायण—रच० अभिनव पम्प नागचन्द्र (क्रमशः)	सानु. लिप्य. डॉ. वी. बी. पुन्नन एम.ए. पीएच्. डी.	४९-५६
२९	(नेपाली) भानुभक्त रामायण—(क्रमशः)	अनु० श्री नन्दकुमार आमात्य	४९-५६
२०	(कश्मीरी) रामावतार-चरित—(क्रमशः)	सानु. लिप्य. डॉ. शिबनकृष्ण रैणा एम. ए. पीएच्. डी.	५७-६४
२१	(गुरमुखी) श्री सुखमनी साहब (गुरु अर्जुनदेव की बानी—क्रमशः)	अनु०—ख़्वाजः दिलमुहम्मद,लाहौर,लिप्य.—नंदकुमार अवस्थी	१६१-१६५

चिथड़े

१

इन्हीं विश्व के मिथ्या प्रलोभनों ने जब दूर ही से भरमाया मुझे।
छली चिन्तनों ने सुख के, निशा में, बन के जब स्वप्न रुलाया मुझे।
स्वरों में भरे व्यंग्य के वैभव ने, हँस के जब हा ! तड़पाया मुझे।
तभी अर्थ सा खोल के जीवन का चिथड़ों ने यथार्थ बताया मुझे॥

२

ये लहराये थे अंबर पे, इतना गुरु गौरव पाये हुए थे।
रूप तथा छवि के मन में बन, ये मनमोहन छाये हुए थे।
किन्तु मिटा न सके वह लेख, ललाट में जो कि लिखाये हुए थे।
आज वही ठुकरा रहे हैं, कल जो इन्हें कंठ लगाये हुए थे॥

३

था वह गौरव प्राप्त इन्हें, यह स्वर्ण सितारों से टाँके गये थे।
किन्तु न थे चिथड़े तब ये, तब ये वत-रत्नों के आँके गये थे।
गर्वित होते न क्यों, इनसे महारानियों के तन ढाँके गये थे।
शोभित होकर शाहों के भी तन पे बन शाह, जहाँ के गये थे।

४

जिसे मान दे मालिक तो भी उसे, अभिमान न हो, अस्वाभाविक है।
जिसे उच्चता प्राप्त हो, श्रेष्ठता का उसे भान न हो, अस्वाभाविक है।
समालोचना तो यहाँ की प्रथा है, ये विधान न हो, अस्वाभाविक है।
किसी को उठा देख के, द्वेषियों की, मति म्लान न हो, अस्वाभाविक है।

(क्रमशः)

—हरनन्दन वाजपेयी "हर्ष"

सम्पादकीय

गुज़श्तः लखनऊ

'वाणीसरोवर' के उर्दू स्तम्भ में मिर्ज़ा मुहम्मद हादी 'रुस्वा' का शरीफ़ज़ादः नामक शिक्षाप्रद उपन्यास समाप्त हुआ। पत्र की परिपाटी के अनुसार, उसके स्थान पर उर्दू की किसी नई रचना का आरम्भ प्रस्तुत अंक से ज़रूरी था।

विद्वज्जगत् के मूर्धन्य-प्रवर और हमारी संस्था के महान् संरक्षक पं० श्रीनारायण चतुर्वेदी ने इन पंक्तियों के लेखक को किसी ऐतिहासिक पुस्तक के शामिल करने का सुझाव दिया था। उनका कथन ठीक ही था कि ऐसा विषय पाठकों के मनोनुकूल होगा।

अस्तु, शरीफ़ज़ादः की समाप्ति पर, 'गुज़श्तः लखनऊ' का अक्तूबर, १९७२ के अंक से आरंभ हो रहा है। इसके लेखक प्रख्यात ऐतिहासिक उपन्यासकार मौलाना अब्दुल हलीम शरर हैं। पुस्तक में नव्वाबी काल के अवध का यथार्थ चित्रांकन किया गया है। बादशाह-देहली बहादुरशाह की ओर से नियुक्त, अवध के पहले सूबेदार वज़ीर-नव्वाब बुरहानुलमुल्क से लेकर अन्तिम नव्वाब वाजिद अली शाह तक का फ़ैज़ाबाद और लखनऊ, यहाँ तक कि मठियाबुर्ज (कलकत्ता) तक का तत्कालीन इतिहास; उस समय की एक विशिष्ट सभ्यता और शिष्टाचार (तमद्दुन व तहज़ीब); नव्वाबों की शिल्प-कला की ओर अभिरुचि के फलस्वरूप शाही इमारतों की तामीर; दरबार और महलों के षडयन्त्र, निदान अंग्रेजों का पदार्पण; तत्कालीन अवध और खास कर आज कहे जाने वाले 'पुराने लखनऊ' की तस्वीर; उस समय की विद्या-शिल्प-कला-वाणिज्य का विवरण; मज़हबी माहौल; आज के लखनवी मुहल्लों के नाम व उनके आबाद होने का सिलसिला; नानाप्रकार की तमाशबीनी और रंगरेलियाँ; शेरो-शायरी (लखनवी ज़बान का नया अन्दाज़); मस्नवी, मर्सिया, इन्दरसभा, वासोख़्त, हज़्ल (अश्लील काव्य), रेख़ती, उर्दू नस्र (गद्य) व नज़्म (पद्य), दीवान-कुल्यात; दास्तानगोई (तिलिस्म होशरुबा आदि); फब्ती; आवाज़ःकशी; तुकबन्दी; ख़याल-चंग; डण्डा; फेंकैती; पटा; बनेठी; बिनवट; तलवार-तेग़ा; लाठी; बाँक; बर्छा; कुश्ती; तीरन्दाज़ी; कटार; जलबाँक; (शेर, चीता, तेंदुआ, हाथी, ऊँट, गैण्डा, बारासिंघे, मेंढे, भैंसे आदि) पशुओं की लड़ाई; मुर्ग़बाज़ी; तीतर-बटेरबाज़ी; लाल-गुल्दुम-लवा-कबूतर, बुलबुलों के शौक़; पतंगबाज़ी; इल्मे मूसीक़ी (संगीत-शास्त्र); कत्थक, रहस, भाँड, तवायफ़, डोमनियाँ, सोज़ख़ानी; ढोल-ताशे, नौबत, रौशनचौकी; लखनऊ की मश्हूर रौशनी; तरह-तरह के सामिष-निरामिष खाने व मिठाइयाँ, बावर्चियों के कमाल; टोपी, पगड़ी, कुलाह, शमलः; सुन्नी, शिया, हिन्दुओं के तरह-तरह के (पहनावे); मीठी वज़ःदार बातचीत; पैदा होने से मरने तक के संस्कार, रीत-रवाज; उस वक़्त के इस्तेमाली बरतन—लोटा, गड़ुआ, पानदान, ख़ासदान, उगालदान, हुक़्क़े-नैचे; सवारियाँ, सैर-सपाटे; खिलौने व चिकन का कारोबार; नशःबाज़ी ग़रज़ कि नव्वाबी-काल का सारा समाँ (दृश्य); और अवध की नव्वाबी की बुनियाद, उरूज (उत्कर्ष) और ज़वाल (पराभव)—सब कुछ एक झाँकी के समान सामने आ जाता है।

'गुज़श्तः लखनऊ' की सलीस (मधुर) भाषा अपने लखनवी स्वरूप में देवनागरी लिपि में जैसी की तैसी प्रतिलिप्यन्तरित की गई है। उर्दू भाषा में प्रचलित फ़ारसी का लहजा, इज़ाफ़त (समास-चिह्न), इमाला, जो यत्न करने पर भी, 'शरीफ़ज़ादः' में सफल न हो पाये थे, वह प्रस्तुत पुस्तक 'गुज़श्तः लखनऊ' के देवनागरी लिप्यन्तरण में सफलता के साथ व्यवहार में लाये जा सके हैं। देवनागरी लिपि में उर्दू-फ़ारसी भाषा को उनके लहजे में पढ़ने के शौक़ीनों के लिए यह पद्धति सहायक होगी।

इस शैली में 'एकार' और 'ओकार' के ह्रस्व और दीर्घ दो प्रकार के प्रयोग—जैसा कि दक्षिण की तमिल, तेलुगु, कन्नड़, मलयाळम में भी प्रयुक्त होते हैं, बर्ते गये हैं। उदाहरण-स्वरूप, 'दीवानॆ ग़ालिब', 'दीवाने लोग'। ॆ ह्रस्व तथा े दीर्घ हैं—अर्थात् ग़ालिब का दीवान (समास), और दीवाने (पागल) लोग।

यों तो इन विशिष्ट मात्राओं के लिए दक्षिणी तथा अन्य-स्थानीय लिप्यन्तरणों में कई चिह्न अपनाये जा रहे हैं। किन्तु उनमें सबसे अधिक सरल और स्पष्ट यही हैं—ह्रस्व ॆ, ॊ और दीर्घ े, ो। सर्वप्रथम अ० भा० काशिराज न्यास ने इनको स्व-प्रकाशित 'रामचरित मानस' में प्रयुक्त किया। उनको अब पूज्य विनोबा भावे तथा भुवनवाणी ट्रष्ट द्वारा सञ्चालित देवनागरी-लिप्यन्तरण में उपयोग में लाया जा रहा है।

समालोचना

गृहचर्या में नर-नारी-सहयोग

उपर्युक्त पुस्तक हिन्दी जगत् में अपने ढंग की अद्वितीय, संस्कृतपद्य में नित्य पठनीय प्रार्थना-मंत्रों के सदृश, हिन्दी-गद्य में, सन्त भवानीशंकर द्वारा प्रस्तुत आजीवन नित्यप्रति प्रातः पठनीय गद्य मंत्रों का एक ऐसा संग्रह है जिसको नित्य १० मिनट मात्र निर्दिष्ट क्रम से पढ़ने पर, सदाचार; कर्त्तव्यपरायणता; परिवार, समाज, देश और इह तथा परलोक में सुख-शांति का मार्ग—सहज-उपलब्ध प्रतीत होता है।

जिन नवयुवकों को 'प्रार्थना-ध्यान' एक कष्टसाध्य अथवा व्यर्थ कर्म प्रतीत होता है, वे एकबार इस छोटी सी 'गद्यमंत्रावली' पर दृष्टि तो डालें। धर्म और नीति, स्वार्थ और परस्वार्थ—प्रत्येक दृष्टि से ये गद्यमंत्र सरल, मधुर, ओज-दायी और प्रिय प्रतीत होते हैं। संस्कृत के अर्थ न जाननेवाले सज्जनों को, हिन्दी-पद्य-प्रार्थना-छन्दों में संस्कृत-सुलभ निष्ठा उत्पन्न नहीं हो पाती—यह प्रायः देखा गया है। किन्तु यह गद्यमंत्र-पुस्तक एक अद्भुत सत्संगिनी है। निष्ठा की जागृति के साथ-साथ, सरलता से इनको दैनिक जीवन में ढाला जा सकता है। दो-दो, चार-चार पंक्तियों के एक-दिवसीय पाठ साक्षात् आर्ष-मंत्रों जैसे प्रतीत होते हैं। पुस्तक में, मास-पारायण-हेतु, प्रतिदिन एक पाठ के लिए, ३० पाठ दिये हैं। दूसरे मासारम्भ से उन्हीं पाठों की प्रतिदिन पुनरावृत्ति—यही गार्हस्थ जीवन की दैनिक उपासना है।

प्रकाशक—प्रो० श्री कृष्ण जी; वितरक—श्री संतजी बी० एस-सी०, एल-एल० बी०; कृते—श्री राधा मातेश्वरी सेवा समिति (रजि०) सत्संग आश्रम, ५१/२ चन्द्रनगर, उरई (उ० प्र०); मूल्य २.०० रुपया मात्र।

शरीफ़ज़ाद: (आर्यपुत्र)

मिर्ज़ा मुहम्मद हादी 'रुस्वा' का यह प्रसिद्ध उपन्यास भुवन वाणी ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित त्रैमासिक 'वाणी सरोवर' के जुलाई, १९७२ अंक में समाप्त हुआ। वह पुस्तकाकार में चार रुपया मूल्य मात्र में उपलब्ध है। जैसा कि पहले लिखा जा चुका है मिर्ज़ा रुस्वा स्वयं ही आबिदहुसैन के नाम से इस चारित्रिक उपन्यास के आदर्श नायक हैं। 'उमराव जान अदा' आदि उनकी अन्य प्रसिद्ध कृतियाँ भी उनकी 'आप-बीती' का जीता जागता इतिहास हैं।

मिर्ज़ा रुस्वा एक सामान्य दरिद्र परिवार के सदस्य और बचपन से विवाह एवं सन्तान आदि के भार से दबे हुए किशोर थे, जब उन्होंने जीवन-संघर्ष में प्रवेश किया। एक लोहार मिस्त्री की दुकान पर मुंशीगीरी और उसके बच्चे की ट्यूशन पर गुज़र करते हुए प्राइवेट परीक्षाओं द्वारा वे ग्रेजुएट तथा सरकारी इंजीनियर के पद पर पहुँचे। इसी बीच काश्तकारी, लुहारी, बाग़बानी, इनके सम्बन्ध में नई-नई मशीनों का आविष्कार, वेब्स्टर डिक्शनरी में समानार्थक उर्दू शब्दों की गढ़न्त, सामाजिक रूढ़ियों और जिहालत का खुलकर विरोध करते हुए भी दीन के पक्के, एक ज़िन्द: सामाजिक जीवन के न केवल प्रचारक वरन् उस पर निर्भीक आचरणवान्, ग़रीब दीन-दुखियों के जीवन को न केवल धन वरन् उनकी तर्ज़-ज़िन्दगी को सुधार देने में सदैव तत्पर, गाना-बजाना-शायरी को निकम्मों का व्यसन मानते हुए भी प्राच्य-पाश्चात्य—दोनों काव्यों में प्रवीण, निष्कलंक चरित्रवान् होते हुए भी तवाइफ़ों की संगति में प्रतिष्ठा और बुज़ुर्गी प्राप्त—अनेक अनमेल बातों के तालमेल स्वरूप वह अजीबो-ग़रीब व्यक्ति थे।

फ़ारसी के मूर्धन्य विद्वान् सय्यद मस्उदहसन रिज़्वी लखनवी (भारत-सरकार-सम्मानित) ने उनसे सत्संग किया है। उनका कथन है कि ऐसा मेधावी और विचक्षण व्यक्ति उन्होंने देखा ही नहीं। शतरंज उठाई, तो अकाट्य फ़ार्मूले के फ़ार्मूले तैयार! सरकारी, ग़ैर सरकारी—कोई बिद्अत (ज़ियादती) देखी कि उनकी क़लम ने उसको बेदम किया।

एक ओर तो यह अति मनोरञ्जक, सच्चे घटनाक्रम से भरा हुआ अपने ढंग का एक अनूठा उपन्यास है; दूसरी ओर अपरिपक्व, संकटों में उलझे हुए गधापचीसी की आयु वाले नवयुवकों के लिए व्यवहारिक मार्गदर्शन और सफलता की कुञ्जी का स्वरूप है।

रुस्वा साहब की मँझी हुई मीठी उर्दू ज़बान को देवनागरी लिपि में लिप्यन्तरित कर उर्दू के कठिन शब्दों का हिन्दी-अर्थ साथ-साथ दिया गया है। उर्दू भाषा का लालित्य देवनागरी अक्षरों में सर्व-सुलभ है।

—सम्पादक

नन्दकुमार अवस्थी

युञ्जन्त्यस्य काम्या हरी विपक्षसा रथे ।
शोणा धृष्णू नृवाहसा । (ऋग् १।६।२)

अर्थ--योगी लोग इस शरीर रूपी रथ में—जो विचित्र है और आत्मा का वाहन है—प्राण और अपान इन दोनों अश्वों को जोड़ते हैं जो दृढ़ और गतिशील हैं।

भावार्थ--प्राण और अपान की गति शरीर में ठीक ठीक युक्त करने से मन की चञ्चलता रुक जाती है। जैसा कि मनु जी ने कहा है:—

दह्यन्ते ध्मायमानानां धातूनां हि यथा मलाः ।
तथेन्द्रियाणां दह्यन्ते दोषाः प्राणस्य निग्रहात् । ६।७१

जैसे अग्नि में तपाने से धातुओं के मैल नष्ट हो जाते हैं वैसे ही प्राणायाम से इन्द्रियों के दोष दूर हो जाते हैं।

केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्या अपेशसे ।
समुषद्भिरजायथाः । (ऋग् १।६।३)

अर्थ--हे ईश्वर ! तुम अज्ञानियों के लिए ज्ञान और धनहीनों को धन देते हो। आप ज्ञानी भक्तों के द्वारा प्रकट होते हो। ज्ञानी और भक्त ही उसकी कृपा की अनुभूति कर पाते हैं।

आदह स्वधामनु पुनर्गर्भत्वमेरिरे ।
दधाना नाम यज्ञियम् । (ऋग् १।६।४)

अर्थ--इस शरीर से पृथक् होकर मरुत् (मरणधर्मा देही) स्वधा (अपनी प्रकृति) के अनुसार कर्मों से संगत योनि के नाम को प्राप्त करते हुए फिर गर्भ को धारण करते हैं।

विशेष--यहाँ मरुद्गण (विशेष प्राणवायु और जीवों) का वर्णन है स्पष्ट रूप से पुनर्जन्म का।

वीलु चिदारुजत्नुभिर्गुहा चिदिन्द्र वह्निभिः ।
अविन्द उस्रिया अनु । (ऋग् १।६।५)

अर्थ--हे इन्द्र ! (जीवात्मन्) दृढ़ वहन करने वाली शक्तियों से गुहा में (गर्भ में) किरनों को (चेतन शक्तियों को) तुमने पाया।

देवयन्तो यथा मतिमच्छा विदद्वसुं गिरः ।
महामनूषत श्रुतम् । (ऋग् १।६।६)

अर्थ--देवभावना वाली वाणी के समान सबको धन-ऐश्वर्य और ज्ञान का सेवन करना चाहिए ।

इन्द्रेण सं हि दृक्षसे सञ्जग्मानो अबिभ्युषा ।
मन्दू समानवर्चसा । (ऋग् १।६।७)

अर्थ--हे मरुतो ! तुम अभय इन्द्र के साथ—जो कि समान रूप से तेज को धारण करता है—मिलकर सुशोभित होते हो ।

विशेष--मरुत् (प्राण) इन्द्र (जीवात्मा) के साथ, वायु अग्नि के साथ, साधारणजन राजा के साथ ।

अनवद्यैरभिद्युभिर्मखः सहस्वदर्चति ।
गणैरिन्द्रस्य काम्यैः । (ऋग् १।६।८)

अर्थ--यह यज्ञ सब ओर से प्रकाशित और अनिन्दनीय इन्द्र के चाहे हुए गणों से युक्त तेजस्विता के साथ सम्पन्न हो ।

अतः परिज्मन्ना गहि दिवो वा रोचनादधि ।
समस्मिन्नृञ्जते गिरः । (ऋग् १।६।९)

अर्थ--सब ओर जाने में समर्थ वायु (प्राण) चमकीले द्युलोक से आवे और इसमें वाणियाँ प्रकट हों ।

भावार्थ—दिव्य वायु में दिव्य वाणी प्रकट होती है ।

इतो वा सातिमीमहे दिवो वा पार्थिवादधि ।
इन्द्रं महो वा रजसः । (ऋग् १।६।१०)

अर्थ--इस पार्थिव लोक से वा द्युलोक से वा अंतरिक्ष से संयोग-विभाग करने वाले इन्द्र (सूर्य) को हम जानें ।

विशेष--पृथिवी, अंतरिक्ष और द्युलोक में सूर्य की आकर्षण-शक्ति काम कर रही है ।

सि० अ०--जो कुछ है प्रणव है। जो वह महाशब्द ओ३म् है उस का वर्णन यह है: जो हुआ है, जो हो रहा है, और जो होगा वह सब वही है। जो तीनों कालों-भूत, भविष्यत्, और वर्त्तमान्-से परे है वह सब वही है। [१]

सर्वंह्येतद् ब्रह्म। अयमात्मा ब्रह्म। सोऽयमात्मा चतुष्पात् ॥२॥

अनु०-यह सभी ब्रह्म है। यह आत्मा ब्रह्म है। वह यह आत्मा चार पादों (कलाओं, आयामों, अंशों) वाला है। (२)

सि० अ०--जो कुछ है यही प्रणव है, जो ब्रह्म भी है और आत्मा भी है। ब्रह्म की चार मात्राएँ हैं और आत्मा की भी चार मात्राएँ हैं। [२]

जागरितस्थानो, बहिष्प्रज्ञः, सप्ताङ्ग, एकोनविंशतिमुखः, स्थूलभुग्, वैश्वानरः प्रथमः पादः ॥३॥

अनु०-जाग्रत्-अवस्था का स्थानी (अभिमानी), बहिर्मुखी प्रज्ञा वाला (बाह्य विषयों को प्रकाशित करने वाला), सात अङ्गों वाला, उन्नीस मुखों वाला, और स्थूल [विषयों] का भोक्ता वैश्वानर पहला पाद है।(३)

सि० अ०—प्रथम पाद जाग्रत् अवस्था है। वह प्रकट अवस्था है और [आत्मा] उस अवस्था में उस जगत् के सभी दृश्यों से अवगत रहता है। उस प्रथम पाद के सात अंग हैं—रसना, त्वचा, श्रोत्र, चक्षु, घ्राण, मन, और बुद्धि—और वह एतद्द्वारा दृश्यमान जगत् में उन्नीस तत्त्वों की ओर उन्मुख हो जाता है। [ये] तत्त्व ये हैं—सोलह कलाएँ जो मानव शरीर में विद्यमान हैं और तीन गुण जिन्हें सृष्टि, स्थिति, और प्रलय कहते हैं। इन के द्वारा [आत्मा] स्थूल विषयों का अनुभव करता है। सभी प्राणियों का देवता अग्नि है जिस का दूसरा नाम वैश्वानर है। जो सब का प्राणाग्नि है। जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है, वह आत्मा का प्रथम पाद है। [३]

स्वप्नस्थानो, ऽन्तःप्रज्ञः, सप्ताङ्ग, एकोनविंशतिमुखः, प्रविविक्तभुक्, तैजसो द्वितीयः पादः ॥४॥

अनु०-स्वप्नावस्था का स्थानी (अभिमानी), अन्तर्मुखी प्रज्ञा वाला, सात अङ्गों वाला, उन्नीस मुखों वाला, और प्रविविक्त [विषयों] का भोक्ता तैजस दूसरा पाद है। (४)

सि० अ०––द्वितीय पाद स्वप्नावस्था है। इस स्वप्नावस्था में, जो अन्तरंग होती है, [आत्मा] उन्हीं ज्ञानेन्द्रियों से व्यवहार करता है जिन से वह जाग्रत् अवस्था में व्यवहार करता है। अतः जाग्रत् अवस्था में [आत्मा] स्थूल पदार्थों से ऊपर कहे गये उन्नीस तत्त्वों का रस ग्रहण कर इस अन्तर्जगत् में उन उन्नीस तत्त्वों की शक्ति द्वारा सूक्ष्म पदार्थों से भोग प्राप्त करता है। इस जगत् के सभी प्राणियों के देवता का नाम तैजस है अर्थात् ज्योतिर्मय है। यह स्वप्नावस्था जिस के विषय में यह वर्णन किया गया है आत्मा का द्वितीय पाद है। [४]

यत्र सुप्तो न कञ्चन कामं कामयते, न कञ्चन स्वप्नं पश्यति, तत् सुषुप्तम्। सुषुप्तस्थान, एकीभूतः, प्रज्ञानघन एवानन्दमयो, ह्यानन्दभुक्, चेतोमुखः, प्राज्ञस् तृतीयः पादः ॥५॥

अनु०–जिस अवस्था में सोया हुआ पुरुष किसी भोग की कामना नहीं करता, न कोई स्वप्न देखता है, वह सुषुप्ति है। सुषुप्ति का स्थानी, एकीभाव को प्राप्त, आनन्दमय प्रज्ञानघन ही आनन्द का भोक्ता, चेतनोन्मुख प्राज्ञ तीसरा पाद है। (५)

सि० अ०––तृतीय पाद सुषुप्तावस्था है। यह वह अवस्था है जिस में कोई कामना नहीं रह जाती और जो कुछ स्वप्नावस्था और जाग्रत् अवस्था में दृष्टिगोचर होता है वह इस काल में तनिक भी नहीं दिखायी देता। इसे ही सुषुप्तावस्था कहते हैं। इस अवस्था में जीवात्मा और परमात्मा एक हो जाते हैं। इस दशा में [जीवात्मा] साक्षात् ब्रह्म हो जाता है जो प्रज्ञानघन है, आनन्दस्वरूप हो कर आनन्द का भोक्ता है, और ज्ञानस्वरूप हो कर सभी विषयों को जानता है। इस सुषुप्तावस्था के देवता की सञ्ज्ञा प्राज्ञ है, अर्थात् ज्ञान का अधिकरण। यह आत्मा का तृतीय पाद है। [५]

एष सर्वेश्वर, एष सर्वज्ञ, एषोऽन्तर्याम्येष योनिः सर्वस्य, प्रभवाप्ययौ हि भूतानाम् ॥६॥

अनु०–यह सर्वेश्वर है, यह सर्वज्ञ है, यह अन्तर्यामी है, और यह सब का मूल है, भूतों (स्थावर और जङ्गम जगत्) का उद्गम और लय-स्थल ही। (६)

सि० अ०––यही सब का स्वामी है और यही सर्वज्ञ है। यही सर्वान्तर्यामी है अर्थात् सब में है और रहस्यों को जानने वाला है। यही है सब का उत्पत्ति-स्थान, सब का उत्पादक, और सब का संहर्ता। [६]

नान्तःप्रज्ञं, न बहिष्प्रज्ञं, नोभयतःप्रज्ञं, न प्रज्ञानघनं, न प्रज्ञं, नाप्रज्ञम् । अदृष्टमव्यवहार्यमग्राह्यमलक्षणमचिन्त्यमव्यपदेश्य-मेकात्मप्रत्ययसारं, प्रपञ्चोपशमं, शान्तं, शिवमद्वैतं चतुर्थं मन्यन्ते । स आत्मा, स विज्ञेयः ।।७।।

अनु०–न अन्तर्मुखी प्रज्ञा वाली, न बहिर्मुखी प्रज्ञा वाली, न उभयविध प्रज्ञा वाली, न प्रज्ञानघन, न प्रज्ञ, न अप्रज्ञ । चतुर्थावस्था को अदृष्ट, अव्यवहार्य, अग्राह्य, अलक्षण, अचिन्त्य, अव्यपदेश्य, एकात्मप्रत्ययसार (ऐकात्म्यबोध ही जिस का सार है), प्रपञ्च का उपशम, शान्त, शिव, और अद्वैत मानते हैं । वही आत्मा है, वही जानने योग्य है । (७)

सि० अ०—आत्मा का चतुर्थ पाद तुरीयावस्था है । वह स्वप्न और जाग्रत् से परे है और उस सुषुप्तावस्था से भी परे है जो स्वप्न और जाग्रत् से परे है । यह वैसा ही है जैसा ऊपर वर्णित हुआ है । यह वेद का वह मंत्र-समूह है जो लिखा नहीं गया है । यह भी नहीं कहा जा सकता कि वह ज्ञान से एकीभूत हो जाता है । वह तो ज्ञानस्वरूप है । यह भी नहीं कहा जा सकता कि वह सर्वज्ञ है, और न उसे अज्ञानी ही कहा जा सकता है; क्योंकि ये दोनो गुण अपूर्ण सत्ता में होते हैं । वह दृष्टिगोचर नहीं होता । उसे गुणों से विशेषित नहीं किया जा सकता । वह अग्राह्य है, अलक्षण है, उसे मन से भी प्राप्त नहीं किया जा सकता, वह मेरी वाणी में नहीं आता, और न उसे पुरुष कह सकते हैं और न स्त्री । उसे उसी से जाना जा सकता है । सम्पूर्ण जगत् का अवसान उसी में होता है । वह आनन्दस्वरूप है । उस में द्वैत नहीं । इसे आत्मा का चतुर्थ पाद कहते हैं । यही है आत्मा और इसी आत्मा को जानना चाहिए । [७]

सोऽयमात्माऽध्यक्षरमोङ्कारो, ऽधिमात्रं पादा मात्रा मात्राश् च पादा–अकार, उकारो, मकार इति ।।८।।

अनु०–वह यह आत्मा अक्षर-दृष्टि से ओंकार है, मात्रा-दृष्टि से पाद ही मात्राएँ हैं और मात्राएँ ही पाद हैं–अकार, उकार, मकार । (८)

सि० अ०—यदि नाम-, गुण-, और अक्षर-रूप में इस आत्मा को जानना चाहो तो ओंकार-रूप प्रणव को यही आत्मा जानो । प्रणव के भी चार पाद होते हैं, जो उस की चार मात्राएँ हैं । आत्मा के जिन चार पादों का वर्णन हुआ है वे प्रणव की

चार मात्राएँ हैं, और प्रणव की जो चार मात्राएँ कही गयी हैं वे आत्मा के चार पाद हैं। वह चतुष्पाद प्रणव यह है—अकार, उकार, और मकार।

जागरितस्थानो वैश्वानरोऽकारः प्रथमा मात्रा, ऽऽप्तेरादिमत्त्वाद् वा। आप्नोति ह वै सर्वान् कामानादिश् च भवति य एवं वेद ॥९॥

अनु०—जाग्रत् अवस्था का अभिमानी वैश्वानर अकार व्याप्त अथवा आदिम होने के कारण [ओंकार की] पहली मात्रा है। निश्चय ही [वह] सम्पूर्ण कामनाओं को प्राप्त कर लेता है और आदि (प्रधान) होता है जो ऐसा जानता है। (९)

सि० अ०—अकार प्रणव का प्रथम पाद है। यह आत्मा के प्रथम पाद का प्रतिरूप है जो जाग्रत् अवस्था है और जिस का देवता वैश्वानर है। अकार के विषय में कहा जाता है कि वह सब का आदि है और सब कुछ उसी से प्राप्त होता है। जो कोई अकार को इस प्रकार जानता है वह सभी कामनाओं को प्राप्त कर लेता है और सब में प्रथम हो जाता है। [९]

स्वप्नस्थानस् तैजस उकारो द्वितीया मात्रा, उत्कर्षा-दुभयत्वाद् वा। उत्कर्षति ह वै ज्ञानसन्ततिं, समानश् च भवति, नास्याब्रह्मवित् कुले भवति य एवं वेद ॥१०॥

अनु०—स्वप्न अभिमानी तैजस उकार उत्कर्ष अथवा मध्यवर्ती होने के कारण दूसरी मात्रा है। निश्चय ही [वह] ज्ञानसन्तान का उत्कर्ष करता है, [सब के प्रति] समान होता है, और उस के कुल में कोई ब्रह्मज्ञान से हीन नहीं होता जो ऐसा जानता है। (१०)

सि० अ०—उकार प्रणव की द्वितीय मात्रा है। यह आत्मा के द्वितीय पाद का प्रतिरूप है जो स्वप्नावस्था है और जिस का देवता तैजस है। इस के विषय में कहा जाता है कि उकार सब से महान् है। प्रथम मात्रा और प्रथम मात्रा की स्तुतिआँ भी इसी में हैं। जो कोई उकार को इस प्रकार जानता है वह ज्ञान द्वारा अनन्त को प्राप्त कर लेता है और सर्वत्र समान रूप से व्याप्त हो जाता है। उकार के जानने वाले की संतान में कोई भी अज्ञानी नहीं होता। [१०]

सुषुप्तस्थानः प्राज्ञो मकारस् तृतीया मात्रा, मितेरपीतेर् वा। मिनोति ह वा इदं सर्वमपीतिश् च भवति य एवं वेद ॥११॥

अनु०—सुषुप्ति का अभिमानी प्राज्ञ मकार नाप अथवा लय के कारण तीसरी मात्रा है। निश्चय ही वह इस सब को नाप लेता है और [उस का] लयस्थान हो जाता है जो ऐसा जानता है। (११)

सि० अ०—मकार प्रणव की तृतीय मात्रा है। यह आत्मा के तृतीय पाद का प्रतिरूप है जो सुषुप्तावस्था है और जिस का देवता प्राज्ञ है और 'म्'। इस के विषय में कहा जाता है कि यह सब को नाप लेने वाला है और सब का संहर्त्ता है, क्यों कि सुषुप्तिकाल में सब कुछ विलीन हो जाता है। जो कोई मकार को इस प्रकार जानता है वह सब को नाप लेने वाला और सब को विलीन कर देने वाला होता है। [११]

अमात्रश् चतुर्थो,ऽव्यवहार्यः, प्रपञ्चोपशमः, शिवो,ऽद्वैतः।
एवमोङ्कार आत्मैव। संविशत्यात्मनाऽऽत्मानं य एवं वेद ॥१२॥

अनु०—अमात्र चतुर्थावस्था है, अव्यवहार्य, प्रपञ्चोपशम, शिव, अद्वैत। इस प्रकार ओङ्कार आत्मा ही है। [वह] आत्मा से आत्मा में प्रवेश करता है जो ऐसा जानता है। (१२)

सि० अ०—ऊपर तीन मात्राओं की मीमांसा के अवसर पर प्रणव की चतुर्थ अर्द्धमात्रा की मीमांसा नहीं हुई है। उस का कारण यह है कि उसे मात्रा कह ही नहीं सकते। वह तो सर्वरूप है, उस में सभी विलीन हो जाते हैं, उसे वाणी में नहीं लाया जा सकता, वह आनन्दमय है, और उस में द्वैत का अवकाश नहीं। वही आत्मा यह प्रणव है और यह प्रणव वही आत्मा है। जो कोई प्रणव को इस प्रकार जानता है वह आत्मा हो जाता है और स्वतः अपने में स्थित हो जाता है। जो कोई प्रणव को इस प्रकार जानता है वही ज्ञानी है, वही ज्ञानी है। [१२]

समाप्त हुई अथर्ववेदीया माण्डूक्योपनिषद्

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा! भद्रं पश्येमाक्षभिर् यजत्राः,
स्थिरैरङ्गैस् तुष्टुवांसस् तनूभिर् व्यशेम देवहितं यदायुः।
स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः, स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः,
स्वस्ति नस् ताक्ष्र्यो अरिष्टनेमिः, स्वस्ति नो बृहस्पतिर् दधातु।

ॐ शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

॥ इति माण्डूक्योपनिषत् समाप्ता ॥

ॐ

तैत्तिरीयोपनिषद्

(कृष्णयजुर्वेदीय-तैत्तिरीयारण्यक-प्रपाठकाः ७–९)

शान्तिपाठः

ॐ शं नो॑ मि॒त्रः, शं वरु॑णः॒, शं नो॑ भवत्वर्य॒मा,
शं न॒ इन्द्रो॒ बृह॒स्पति॒ः, शं नो॒ विष्णु॑रुरुक्र॒मः ।

(ऋग्वेद १.९०.९)

नमो ब्रह्मणे । नमस् ते वायो ! त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि । त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि, ऋतं वदिष्यामि, सत्यं वदिष्यामि । तन् मामवतु, तद् वक्तारमवतु । अवतु माम्, अवतु वक्तारम् ।

ॐ शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!!

शीक्षावल्ली[1]

प्रथमोऽनुवाकः

ॐ शं नो॑ मि॒त्रः, शं वरु॑णः॒, शं नो॑ भवत्वर्य॒मा,
शं न॒ इन्द्रो॒, बृह॒स्पति॒ः, शं नो॒ विष्णु॑रुरुक्र॒मः ।

---

१ तैत्तिरीयोपनिषद् में तीन वल्लियाँ हैं–शीक्षावल्ली, ब्रह्मानन्दवल्ली (दाराशिकोह के शब्दों में, 'आनन्दवल्ली'), और भृगुवल्ली । इन में दाराशिकोह ने केवल अन्तिम दो वल्लियों की टीका पूर्ण की है, शीक्षावल्ली के प्रथम अनुवाक के अतिरिक्त शेष भाग को उस ने छोड़ दिया है । हो सकता है कि उसे संपूर्ण शीक्षावल्ली उपलब्ध न हुई हो । शीक्षावल्ली के प्रथम अनुवाक को भी उसने ब्रह्मानन्दवल्ली का 'शीक्षाध्याय' माना है, और ब्रह्मानन्दवल्ली के शेष भाग को 'ब्रह्मवल्ली' । ब्रह्मानन्दवल्ली और भृगुवल्ली को भी उस ने एक ही उपनिषद् के भाग न मान कर, स्वतंत्र उपनिषदें मानी हैं । इस का एक आधार भी है । प्रत्येक वल्ली के आदि और अन्त में शान्तिपाठ प्राप्त होता है, जिस के कारण वे आपाततः एक-दूसरे से स्वतंत्र प्रतीत होती हैं ।

नमो ब्रह्मणे। नमस् ते वायो ! त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि।
त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि, ऋतं वदिष्यामि, सत्यं वदिष्यामि।
तन् मामवतु, तद् वक्तारमवतु। अवतु माम्, अवतु वक्तारम्।

ॐ शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!! ॥ १ ॥

अनु०–मित्र (सूर्यदेव) हमारे लिए सुखकर हो, वरुण हमारे लिए सुखकर हो, अर्यमा हमारे लिए सुखकर हो, इन्द्र तथा बृहस्पति हमारे लिए सुखकर हों, विस्तीर्ण पादविक्षेप (डग) वाला विष्णु हमारे लिए सुखकर हो।

ब्रह्म को नमस्कार है। हे वायो ! तुम्हें नमस्कार है। तुम्हीं प्रत्यक्ष ब्रह्म हो। तुम्हीं को मैं प्रत्यक्ष ब्रह्म कहूँगा, ऋत कहूँगा, सत्य कहूँगा। वह मेरी रक्षा करे, वह वक्ता (उपदेष्टा, आचार्य) की रक्षा करे। रक्षा करे मेरी, रक्षा करे वक्ता की। (१)

ॐ शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!!

सि० अ०—उपनिषद् की यह प्रथम स्तुति है—'हे मित्र (अर्थात् हे मैत्री के देवता) ! हे वरुण (जल के देवता) ! हे अर्यमन् (दिन के देवता) ! हे इन्द्र (देवताओं के राजा) ! हे बृहस्पते (ज्ञानियों के गुरु बृहस्पति) ! हे विष्णो (सब से महान्) ! इस ब्रह्मज्ञान द्वारा हमारा मंगल कर।

हे ब्रह्मन् ! तुझे नमस्कार ! हे वायो ! तुझे नमस्कार ! तू प्रत्यक्ष ब्रह्म है। तुझे मैं प्रत्यक्ष ब्रह्म कहता हूँ, तुझे सत्य कहता हूँ, तुझे कर्मों का फल कहता हूँ। तू मुझे अपनी शरण में [ले कर मेरी] रक्षा कर, वक्ता और श्रोता को अपनी शरण में [ले कर उन की] रक्षा कर। गुरु को अपनी शरण में [ले कर उन की] रक्षा कर, प्रवचन और श्रवण का जो फल होता है उसे अपनी शरण में [रख कर उन की] रक्षा कर, प्रवचन और श्रवण से जो प्रकाश प्राप्त होता है उसे अपनी शरण में [रख कर उस की] रक्षा कर। हमें परस्पर शत्रुता में न डाल। [1]

ॐ शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!!

द्वितीयोऽनुवाकः

शीक्षां व्याख्यास्यामः। वर्णः, स्वरः, मात्रा, बलम्, साम, सन्तानः। इत्युक्तः शीक्षाध्यायः ॥ १ ॥

अनु०—हम शिक्षा (उच्चारणशास्त्र) की व्याख्या करेंगे। [अकारादि] वर्ण, [उदात्तादि] स्वर, [ह्रस्वादि] मात्रा, [शब्दोच्चारण में प्राण का प्रयत्नरूप] बल, [एक ही नियम से उच्चारण-रूप] साम, [तथा] सन्तान (संहिता) [ये ही इस अध्याय के विषय हैं]। इस प्रकार शीक्षाध्याय कहा गया। (१)

तृतीयोऽनुवाकः

सह नौ यशः। सह नौ ब्रह्मवर्चसम्। अथातः सꣳहिताया उपनिषदं व्याख्यास्यामः, पञ्चस्वधिकरणेषु—अधिलोकमधिज्यौतिषमधिविद्यमधिप्रजमध्यात्मम्। ता महासꣳहिता इत्याचक्षते॥ अथाधिलोकम्—पृथिवी पूर्वरूपम्, द्यौरुत्तररूपम्, आकाशः संधिः, ॥ १ ॥

अनु०—हम [शिष्य और आचार्य] दोनों को साथ-साथ यश प्राप्त हो। हमें साथ-साथ ब्रह्मतेज प्राप्त हो। अब हम [इन] पाँच अधिकरणों में संहिता (वर्णों की सन्धि) की उपनिषद् (रहस्य) की व्याख्या करेंगे—अधिलोक, अधिज्यौतिष, अधिविद्य, अधिप्रज, और अध्यात्म। उन्हें महासंहिता कहते हैं॥ अब अधिलोक (लोकसम्बन्धी) [दर्शन] कहा जाता है—[संहिता का] प्रथम वर्ण पृथिवी है, अन्तिम वर्ण द्युलोक है, मध्यभाग आकाश है, (१)

—वायुः संधानम्। इत्यधिलोकम्॥ अथाधिज्यौतिषम्—अग्निः पूर्वरूपम्, आदित्य उत्तररूपम्, आपः संधिः, वैद्युतः संधानम्। इत्यधिज्यौतिषम्॥ अथाधिविद्यम्—आचार्यः पूर्वरूपम्, ॥ २ ॥

अनु०—और वायु सन्धान (जोड़)[1] है। यह अधिलोक दर्शन कहा गया॥ अब अधिज्यौतिष [दर्शन] कहा जाता है—प्रथम वर्ण अग्नि है, अन्तिम वर्ण आदित्य है, मध्यभाग अप्-तत्त्व (जल) है, और विद्युत् सन्धान है। यह अधिज्यौतिष कहा गया॥ अब अधिविद्य [दर्शन] कहा जाता है—प्रथम वर्ण आचार्य है, (२)

---

१ जिस शब्दोच्चारण-रूप प्रयत्न से सन्धि घटित होती है उसे भी सन्धान कहते हैं।

ऍन्नस्तिकन् परञ्ञुळ्ळतु केट्टॉरु
दन्तशूकोत्तमन्मारुमुरचॅय्तु । २६७
इक्कथ चॉल्कयुं केळ्क्कयुं चॅय्वोर्क्कुं
दुःखं वरा विषमॉन्नुमकप्पॅटा । २६८
अन्धनाय् तङ्ङळिलेकन् कटिक्किलु-
मन्तं भविक्कयिल्लॅन्नुं विषमॅटो । २६९
ऍन्नुरगन्मार् कॉट्टुत्तु वरङ्ङळुं
नन्नाय् सुखिच्चु वसिच्चाररिञ्ञालुम् २७०
धर्म्मस्थितिपिळयातॆ जरत्कारु-
तन्मकन् नागेन्द्रसोदरियाकिय- २७१
निर्म्मलगात्रि जरत्कारु पॅट्टुट-
नुण्टाय तापसनस्तिकनॅङ्ङळॆ- २७२
क्कुण्ठततीर्त्तु पालिक्कॅन्नु चॉल्लिया-
लुण्टाकयिल्लॉरु सर्प्पभयमव-
क्किण्टल् मट्टुळ्ळवयुं वरा निर्ण्णयम् । २७३
आशीविषभयमुण्टाकयिल्लॅन्नु-
माशीर्व्वचनवुं चॉन्नारुरगन्मार् । २७४
अस्तिकनिङ्ङनॆ नित्यसुखत्तोटु
पुत्रमित्रार्त्थकळत्रमित्रादियो- २७५

उनका वर्णन करें या उनको सुनें उनमें किसी को भी सर्प जाति के द्वारा कोई भय नहीं होना चाहिए।" आस्तीक का यह वचन सुनकर नागों ने निवेदन किया—"जो इस कथा को सुनावें या सुनें उनको दुःख न होगा, उन [के शरीर में] में [सर्पों का] विष न प्रवेश करेगा। यदि हम लोगों में से कोई अन्धा होकर काट भी ले तो भी विष के द्वारा [काटे जाने वाले मनुष्य का] अन्त नहीं होगा। २६०-२६९ जब सर्पों ने इस प्रकार वर प्रदान किया, तो वे आस्तीक अत्यन्त सुखी (प्रसन्न) हो गये। अगर कोई यह प्रार्थना करे कि—'जरत्कारु का पुत्र आस्तीक, जिसे नागेन्द्र की बहिन निर्मल शरीर वाली जरत्कारु ने जन्म दिया, वह धर्म-स्थिति का उल्लंघन न करके और दुःख को दूर करते हुए हमारी रक्षा करें'—तो उसको सर्पों से कोई भय न होगा और निःसन्देह अन्य दुःख भी न होंगे, तथा आशीविषों (सर्पों) से कोई भय पैदा न होगा। सर्पों ने इस प्रकार आशीष दी। इस प्रकार आस्तीक स्थायी सुख के

टुत्तमकीर्त्त्या वसिच्चु चिरकालं
मुक्तियुं वन्नु पुनरॅन्तरिञ्ञालुम् । २७६
आस्तिकमाकिय पुण्यकथ नित्य-
मास्तिक्यमोटु चॉन्नालुं गतिवरुम् । २७७
उग्रश्रवस्साय सूतवाक्यं केट्टु
भृग्वपत्यादिकळ् पिन्नॅयुं चोदिच्चु । २७८
पन्नगसत्रे जनमेजयनाय
मन्नवनोटु महामुनि चॉल्लिय- २७९
भारतं कृष्णकथामृतपूरितं
पारातॆ ञङ्ङळोटॉक्कप्परकॅन्नु २८०
पारं प्रशंसिच्चु सूतनॅ वर्णिच्चु
पारमार्त्थ्यात्मना चोदिच्चतुनेरं २८१
सूतनुमादरवोटु चॉल्लीटिनान् ।
मेदिनीकान्तन् जनमेजयनृपन् २८२
वेदव्यासन्मुनितन्नोटु चॉल्लिनान्
पादपद्मं नमस्ते नमस्ते सदा । २८३
मुन्नं पितामहन्मार् मम पाण्डवर्
पुण्यपुरुषन्मार् पूर्णगुणवान्मार् २८४
विश्वैकनाथनां विष्णुभगवानॅ
विश्वासभक्त्या समाराधनं चॅय्तु २८५

साथ अपने पुत्र, मित्र, अर्थ, (धन) कलत्र (स्त्री) के संग उत्तम कीर्ति पाकर चिरकाल तक रहे। जान लीजिए कि उन्होंने मुक्ति भी प्राप्त की। जो आस्तीक की इस पुण्यकथा को आस्तिक्य (श्रद्धा) के साथ सुनावेंगे उनको अच्छी गति प्राप्त होगी। २७१-२७७ सूत उग्रश्रवा का वचन सुनकर भृगु के अपत्यों (पुत्रों) ने फिर पूँछा—कि सर्पसत्र के अवसर पर महामुनि (वैशम्पायन) ने राजा जनमेजय से कृष्णकथा से भरा हुआ जो महाभारत कहा था उसे विना विलम्ब के हमें सुना दीजिए। जब उन्होंने सच्चे हृदय से सूत जी की प्रशंसा करके पूँछा तब उन्होंने सादर निवेदन किया। पृथ्वी के स्वामी राजा जनमेजय ने महामुनि वेदव्यास जी से निवेदन किया, "आप के चरणकमलों को सदैव प्रणाम हो। २७८-२८३ अतीत में मेरे पितामह पाण्डवों ने, जो पुण्यपुरुष और पूर्णगुणवाले थे, श्रद्धा और भक्ति के साथ भगवान् विश्वैकनाथ विष्णु

विश्वपवित्रयां कीर्त्ति परत्तिनार् ।
विश्वमॅल्लाटवुमॅन्न्रालवरुटॅ २८६
सल्कथयॅल्लामरुळ्चॅय्तु केळ्क्कणम् ।
दुःखमकलुवानॅन्न्रतु केट्टॉरु २८७
विष्णुकलाभूतन् कृष्णद्वैपायनन्
कृष्णकथामृतमिश्रमां भारतं २८८
तात्पर्यवानां जनमेजयनॅ नी
केळ्प्पिक्कयॅन्नु वैशम्पायननोटु २८९
कारुण्यपूर्व्वं नियोगिच्चिरुन्नॉरु
नेरं तॉळुतु वैशम्पायनमुनि २९०
आचार्यनाकिय वेदव्यासन्पद-
माशये चेर्त्तु समाधियुरप्पिच्चु । २९१
नारायणनॅयुं पिन्नॅ नरनेयुं
भारतियां वर्ण्णगात्रियॅत्तन्नॅयुं २९२
सादरमुळ्ळिल् सचराचरं जग-
द्वेदवेदांगवेदान्तादिविद्ययुं २९३
चेतसि चेर्त्तुणर्न्नैक्यभावत्तोटु-
मादिये चॉल्लिनानॅन्न्रितु सूतनुं
मोदेन चॉन्नाळिति किळिप्पैतलुम् । २९४

॥ आस्तिकं समाप्तम् ॥

का आराधन किया और अपनी पवित्र कीर्ति को फैलाया। अतएव दुःख दूर करने के लिए इस बात की आवश्यकता है कि पृथिवी के सभी स्थानों पर उनकी सत्कथा सुनाई जाय। यह सुनकर विष्णु की कला का स्वरूप कृष्णद्वैपायन ने बड़े कारुण्य (कृपा) के साथ वैशम्पायन को आज्ञा दी कि तुम प्रेममूर्ति जनमेजय को कृष्ण-कथा-मिश्रित महाभारत सुनाओ। उस समय वैशम्पायन प्रणाम करके और आचार्य वेदव्यास के चरणों को ध्यान करके योगसमाधि में प्रविष्ट हुए। और नारायण को, और नर को, वर्णगात्री (अक्षरों से निर्मित शरीर वाली) भारती (सरस्वती देवी) को, सचराचर जगत् को, और वेद, वेदांग और वेदान्त आदि विद्याओं को अपने मन में संग्रह करके, चैतन्य होकर, अद्वैत की भावना के साथ, प्रारंभ से उन्होंने सब कहा। सूतजी ने ऐसा निवेदन किया। और शुककन्या ने प्रमोद के साथ यही सुनाया। २८४-२९४

॥ आस्तीकपर्व समाप्त ॥

संभवम्

श्रीराम ! राम ! राम ! गोविन्द ! शिवराम !
श्रीमहादेव ! कृष्ण ! मुकुन्द ! नारायण । १
नारायणाय नमो नारायणाय नमो
नारायणाय नमो नारायणाय नमः । २
पारतिलोरोतरमुळ्ळ जन्तुक्कळायि-
प्पारमुळ्ळल्लपूण्टु जनिच्चु मरिप्पतुं ३
पारातॆ माट्टिक्कोळ्वानॆन्तॉरु कळिवय्यो !
पारीरेऴिनुं मूलमाकिय देवदेव ! ४
भारतमाय कथ केळ्क्कयुं चॉल्लुकयुं
पारं नन्नॆन्नु गुरुवरुळिच्चॆय्तु केळ्प्पू । ५
पारातॆ पऱयणमतु नी किळिप्पॆण्णे
भारमिल्लेतुं निनक्कॉप्पेरुं पाठमल्लो । ६
भारतीदेवियॆन्टॆ नाविन्मेल् विळङ्ङकिल्
पाराशर्यानुग्रहं कॊण्टुञान् चॉल्लीट्टुवन् । ७
भारतमॉट्टुङ्ङातॉत्ताकिय कथयल्लो ।
पारमाग्रहमॅङ्किल् चुरुक्किप्पऱञ्ञीटां ८
केळ्क्कणमल्लो महाभारतमितिहासम्
पोक्कणं दुरितङ्ङळॅप्पेरुमितिनाले । ९

सम्भवपर्वम्

हे श्रीराम! राम! राम! गोविन्द ! शिवराम ! हे महादेव ! कृष्ण ! मुकुन्द ! नारायण ! नारायणाय नमो नारायणाय नमो नारायणाय नमो नारायणाय नमः । चौदहों लोकों का मूलकारण हे देवदेव ! इस जगत् में जो तरह-तरह के जन्तु आभ्यन्तर (भीतरी) दुःखों के साथ जन्म लेते हैं और मरते हैं, हे हन्त ! उसको तुरन्त रोकनेके लिए क्या उपाय हैं? मैने गुरु के मुँह से यह सुना है कि महाभारत की कथा सुनाना और सुनना अच्छा उपाय है। इसलिए हे शुककन्ये ! तुम उसे जल्दी सुनाओ। तुम्हारे लिए यह बोझ नहीं होगा। तुम्हें तो सदैव कण्ठस्थ है। अगर देवी भारती मेरी जीभ पर विराजेगी तो पाराशर्य (वेदव्यास) के अनुग्रह से मैं कहूँगा। १-७ महाभारत तो एक अनन्त कथा है। अगर प्रबल इच्छा हो तो संक्षेप में कहूंगा, क्योंकि महाभारत इतिहास सुनने योग्य है।

मोक्षसाधनङ्ङळिल् मुन्पितिनॆन्नुतन्ने
साक्षाल् श्रीकृष्णन् परमाचार्यनरुळ्चॆय्तु । १०
वेदव्यासोक्तमाय वेदान्तसारार्थं नी—
यादिये केळ्प्पिक्कणमानन्दं वरुवानाय् । ११
आदिये केळ्प्पिनॆङ्किल् भारतमाय कथ
मोदेन पऱञ्ञीटामादिनायकलील । १२
गुरुवुं गणेशनुं वाणियुं मुकुन्दनुं
गुरुकारुण्यत्ताले तुणय्क वन्दिक्कुन्नेन् । १३
करुणाचित्तन्मारां धरणीसुरवृन्द-
चरणांबुरुहत्तॆश्शरणं प्रापिक्कुन्नेन् । १४
वसिष्ठात्मजसुतपुत्रनन्दनन्तानुं
वसिच्चीटणमुळ्ळिल् वाल्मीकिमुनीन्द्रनुं १५
रसिच्चीटणमितु केट्टु भक्तन्मार् परि-
हसिच्चीटुकिलतुं दुरितविनाशनम् । १६
भगवद्भक्तन्मारॆक्कॊण्टुळ्ळ चरितवुं
भगवच्चरितवुं तल्गुणनामङ्ङळुं १७
पऱञ्ञुं केट्टु मुळ्ळिल् ध्यानिच्चुमुळ्ळ कालं
परमानन्दं पूण्टु कळिच्चु कॊळ्क नल्लू । १८
भारतमतिल् चॊल्लातुळ्ळॊरु कथकळो
पारातॆ निरूपिक्किलॆत्रयुं कुऱञ्ञीटुम् । १९

इसके द्वारा पापों को दूर करना है। साक्षात् श्रीकृष्ण ने कहा है कि मोक्ष साधनों में सबसे पहला यही है। वेदव्यासजी का कहा वेदान्त का सार तुम प्रारम्भ से ही सुनाओ ताकि हमें आनन्द प्राप्त हो जाय। भारत की कथा प्रारम्भ से ही सुन लीजिए। मैं प्रमोद (प्रसन्नता) के साथ आदिनायक की लीला सुनाउँगा। ८-१२ गुरु, गणेश, वाणी और मुकुन्द बड़े कारुण्य (कृपा) के साथ मेरी सहायता करें, हाथ जोड़ता हूँ। करुणामय ब्राह्मणवृन्द के चरणसरोज ही मेरे लिए शरणदाता हैं। वसिष्ठजी के प्रपौत्र के पुत्र और मुनीन्द्र वाल्मीकि मेरे भीतर निवास करें! और सभी भक्त इसे सुनकर इसका अनुभव करें। अगर कोई हँसी उड़ावे तो वह भी पापनाशक होगी। भगवान् के भक्तों के चरित, भगवान् के चरित, उनके गुण और नाम सुनाते, सुनते और ध्यान करते हुए परमानन्द अनुभव करते हुए समय बिताना सबसे अच्छा है। १३-१८ विचार

अक्कथयॉक्कच्चॉल्वानुळ्क्काम्पिल् निरूपिक्किल्
मुख्यनां वेदव्यासन्तानॉळिन्ञारुमिल्ल । २०
अञ्चितमाय महाभारतमितिहास-
मञ्चामतॉरुवेदमॆन्ऩत्ते चॉल्ली मुनि । २१
अङ्ङनॆयिरिप्पॉरु भारतकथयिप्पो-
ळिङ्ङनॆ चॉल्वानुळ्ळल् नाणमाकुन्ऩितय्यो । २२
ऍन्ऩालुमवरवर्क्करिवान्तक्कवण्णं
नन्ऩायिप्परऱ्कॆन्ऩुवन्ऩीटुमरिन्ञवर् । २३
ऍङ्किलो केट्टुकॉळ्विन् दोषङ्ङळॉक्क मऱ-
च्चॆङ्कलुळ्ळॉरु गुणं ग्रहिच्चुकॉळ्विन् निङ्ङळ् । २४

सोमवंशराजोल्पत्ति

जनमेजयनृपन् तन्नुटॆ यागत्तिङ्कल्
मुनिनायकन् वेदव्यासनुमॆळुन्ऩळ्ळि । १
अन्ऩेरं पैतामहन्मार् गुणं केट्टमूलं
मन्नवनपेक्षिच्चु भारतकथ केळ्प्पान् । २
वैशद्यमोटुमिवन्तन्नॆ नी केळ्प्पिक्कॆन्ऩु
वैशम्पायननोटु वेदव्यासनुं चॉन्नान् । ३

करो तो बहुत ही कम ऐसी कथाएँ मिलेंगी जो महाभारत में न कही गयी हों। और विचार किया जाय तो महामुनि वेदव्यास के अतिरिक्त वहाँ की सारी कथायें सुनानेवाला और कोई नहीं है। मुनिजी (वेदव्यास) ने कहा है कि यह शोभन इतिहास महाभारत पाँचवाँ वेद ही है। ऐसी महाभारत की कथा को इस प्रकार (संक्षेप में) कहने में मुझे अपने मन के भीतर लज्जा प्रतीत होती है। फिर भी जाननेवाले इतना ही कर सकते हैं कि कथा ऐसे सुनाना कि सब अपने अपने ढंग से समझें। इसलिए सुन लीजिये और दोषों को त्याग करके मुझ में जो गुण हों उनको ग्रहण कर लीजिए।२४

चन्द्रवंश के राजाओं की उत्पत्ति

राजा जनमेजय के याग में मुनियों में श्रेष्ठ वेदव्यासजी पधारे। तब अपने पैतामहों (परबाबाओं) के गुण सुनने के लिए राजा ने उनसे भारतकथा सुनाने की प्रार्थना की। वेदव्यासजी ने वैशम्पायन से कहा "तुम ही इनको विशदरूप से सुनाओ"। तब विशिष्ट-योग्यता वाले मुनि

वैशिष्ट्यमुळ्ळ मुनि वन्दिच्चु नृपनोटु-
संशयं तीरुं वण्णं संक्षेपिच्चरिळियिच्चु । ४
विस्तरिच्चरुळिच्चॅय्तीटणमॅन्नु नृपन्
चित्तकौतुकत्तोटु पिन्नॅयुं चोदिच्चप्पोळ् ५
सत्यज्ञानानन्तानन्दात्मकपरब्रह्म-
तत्त्वज्ञानाय वैशम्पायननरुळ्चॅय्तु । ६
धाताविन् मकनाय दक्षनु मकळराय्
चेतोहारिणिकळायरुपतुण्टायतिल्
अदिति पॅट्टुण्टायि सूर्यनॅन्नरिञ्ञालुम् । ७
अवनु मकन् मनुववन्टॆ मकनिळन्
अवनुमॉरु पॅण्णाय् चमञ्ञु विधिवशाल् ८
मुन्पिनाल् विरिञ्चन् तन् पुत्रनामत्रिकण्णिल्
संभविच्चितु चन्द्रनवन्टॆ मकन् बुधन् । ९
इळयाय् चमञ्ञुळ्ळॉरिळनॅक्कण्टमूल-
मिळकी बुधनुटॆ मानसमतुकालम् । १०
इळ पॅट्टुण्टाय्वन्नु चॉल्लॅळुं पुरूरवा-
विळयॆ वळिपोलॆ रक्षिच्चानवन् मुन्नम् । ११
अवनुमकनायुस्साकिय नृपवर-
नवनीभरणं चॅय्तिरुन्नान् चिरकालम् । १२
नहुषनाय नृपतीश्वरनवन्मकन्
नहुषन्तन्टॆ मकनायतु ययातियुम् । १३

(वैशम्पायन) ने हाथ जोड़कर राजा को संदेह दूर करने के लिए संक्षेप में सुनाया। जब राजा ने फिर विस्तार से सुनाने के लिये कुतूहल से प्रार्थना की तब सत्यज्ञानानन्तानन्दात्मक (सत्य ज्ञान तथा अनन्त आनन्द स्वरूप) परब्रह्म को जाननेवाले वैशम्पायन ने कहा। ६ जान लीजिए कि धाता के पुत्र दक्ष की साठ मनोहारिणी पुत्रियाँ हुईं। उनमें से अदिति ने सूर्य को जन्म दिया। उसका पुत्र मनु और उसका पुत्र इल जो विधिवश एक कन्या बन गया। पहले ही ब्रह्मा के पुत्र अत्रिकण (अत्रि ऋषि) का पुत्र चन्द्र पैदा हुआ और उसका पुत्र बुध। जब बुध ने इल को देखा जो इला हो गया था तब उसके मन में विकार होने लगा। इला ने (चन्द्रवंश में) विख्यात (राजा) पुरूरवा को जन्म दिया जिसने इला का यथोचित पालन किया। उसके पुत्र नृपवर आयु ने चिरकाल

पारिटं परिपालिच्चिरिक्कुं कालत्तिङ्कल्
नारिमारिरुवरॅ वेट्टितु ययातियुम् । १४
दितिजाचार्यनाय शुक्रमामुनियुटॅ
सुतयायिटुं देवयानियॅ वेट्टु मुम्पिल् १५
दितिजाधिपनाय वृषपर्व्वाविन्मक-
ळतिसुन्दरियाय शर्म्मिष्ठ रण्टामवळ् १६
अतुरण्टिलुमायिट्टञ्चु पुत्रन्मारुण्टाय्
यदुवुं तुर्व्वशुवुं देवयानिक्कु मक्कळ् १७
शर्म्मिष्ठात्मजन् द्रुह्यु रण्टामतनुद्रुह्यु
धर्म्मिष्ठनाय पूरुवायतु मून्नामवन् । १८
यदुविन् परम्पर यादवन्माराय् वन्नु
पितृशापत्तालिल्लातायितु नृपचिह्नम् । १९
पूरुविन् परम्पराजातन्मार् पौरवन्मार्
पूरुविन् भार्य्यक्कन्नु कौसल्ययॅन्नु नामम् । २०
अवळ् पॅट्टुळ्ळ जनमेजयनॅन्न नृप—
नवन्टॅ पत्निक्कु पेरनन्तयॅन्नाकुन्नु । २१
प्राचिन्वानॅन्न नृपनवळ् पॅट्टुण्टायतु
प्राचियां दिक्कु जयिच्चतिनालॅन्नु नामम् । २२
अवन् तन्नुटॅ पत्नियश्मकियल्लो केळ्प्पि-
नवळ् पॅट्टुण्टायितु शय्यातियॅन्न नृपन् । २३

तक पृथिवी का पालन किया। १२ उसका पुत्र था राजा नहुष और नहुष का पुत्र हुआ ययाति। जब ययाति पृथिवी का राज कर रहा था तब उसने दो स्त्रियों से विवाह किया। पहले दैत्यों के आचार्य महामुनि शुक्र की पुत्री देवयानी से विवाह किया। और उसकी दूसरी स्त्री हुई दैत्यों के राजा वृषपर्वा की पुत्री अतिसुन्दरी शर्मिष्ठा। इन दोनों स्त्रियों से पांच पुत्र पैदा हुए। यदु और तुर्वशु देवयानी के पुत्र हुए और शर्मिष्ठा का पहला पुत्र था द्रुह्यु, दूसरा अनुद्रुह्यु और तीसरा पुत्र हुआ धर्मिष्ठ पूरु। यदु के वंशज यादव कहलाते हैं और पिता के शाप के कारण उनके नृपचिह्न नष्ट हुए। १९ पूरु के वंशज पौरव कहलाते हैं। पूरु की पत्नी का नाम था कौसल्या। उसके पुत्र राजा जनमेजय की पत्नी का नाम था अनन्ता। प्राची दिक् को जीतने के कारण उसके पुत्र का नाम प्राचिन्वान् हुआ।

ज्ञाति-जन-सेवनेते एह अनुरक्त ❋ एकबार श्रुतिमात्रे शास्त्राभ्यासे शक्त
साम दाम भेद दण्ड ए चारि उपाये ❋ अत्यन्त निपुण आर मन्त्रणा-निचये
धर्म्मशास्त्र अर्थशास्त्र कामशास्त्रे धीर ❋ अश्वपृष्ठे गजस्कन्धे रथे महास्थिर
धनुक-धारणे आर बाण-विमोचने ❋ इहार समान नाहि रावण विहने
खड्ग-चर्म्म-युद्धे आर गदा-प्रहरणे ❋ इहार समान नाहि ए लंका-भुवने
इहारइ बाहुर बल करिया आश्रय ❋ निरवधि लंकापुरी आछये निर्भय
इहार प्रभाव प्रशंसये सर्व्वजन ❋ देवता - दानव - यक्ष - विद्याधरगण
एह घोर तप करि अनेक वरष ❋ विधातारे करियाछे आपनार वश
ताँर स्थाने पाइयाछे एइ दिव्ययान ❋ आर पाइयाछे नानाविध अस्त्र-बाण
पाइयाछे दिव्य एक कवच अभेद्य ❋ हइयाछे सुरासुर-निकटे अवध्य
एह जिनियाछे बहु देवता-दानवे ❋ यक्ष-विद्याधर-नाग-किन्नरादि सबे
करेछिल एह बाणे वज्रेर स्थम्भन ❋ वरुणेर पाश क'रेछिल निवारण
लंकामाझे एह सब वीरेर प्रधान ❋ देव-दैत्य-जयी शूर वीर बलवान
आदरेते अतिकाय-नाम राखे बाप ❋ कुमार-भागेते नाहि एमन प्रताप
एह रणे यावतीय कपि-भल्लगणे ❋ संहार करिबे शरजाले एइक्षणे
अतएव इहार करिते संहरण ❋ करिते हइबे अति शीघ्र आयोजन ८८

इसका जन्म धान्यमालिनी की कोख से हुआ है। यह युद्ध में अपने पिता के समान है। पात्र-मित्रों-सम्बन्धियों की सेवा में यह तत्पर है। एक बार सुन कर ही यह कठिन शास्त्रों में पारंगत हो गया। साम, दाम, दंड, भेद—इन चारों उपायों में यह बड़ा ही निपुण है। धर्मशास्त्र, और कामशास्त्र में यह निष्णात (चतुर) है। अश्वारोहण और गजारोहण में, धनुष पकड़ने और बाण चलाने में यह दक्ष है। खड्ग-चर्म युद्ध में और गदायुद्ध में लंका में इसकी कोई तुलना नहीं। इसी के बाहुबल के भरोसे लंकापुरी निर्भय बनी हुई है। देवता-दानव-यक्ष-विद्याधर सभी इसके प्रभाव की प्रशंसा करते हैं। इसने बहुत वर्षों तक घोर तपस्या करने के बाद विधाता को अपने वश में किया। उस तपस्या के कारण उसको यह दिव्य-ज्ञान और अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्र मिले। इसको एक अभेद्य कवच मिला है जिस कारण यह सुरासुर के निकट अवध्य बन गया है। इसने बहुत सारे देवता-दानव-यक्ष-विद्याधर-नाग-किन्नरादि पर विजय प्राप्त की है। इसने बाण से वज्र का निवारण किया था, और वरुण के पाश को भी रोका था। लंका में यह सारे वीरों में श्रेष्ठ है—यह देव-दैत्य-विजयी, शूर-वीर और बलवान है। पिता ने दुलार से इसका नाम अतिकाय रखा, राजपुत्रों में इसके समान पराक्रमी दूसरा कोई भी नहीं है। यह रण में अपने बाणों से सारे कपि और रीछों का संहार कर डालेगा। अतः इसको रोकने केलिए शीघ्र व्यवस्था करनी पड़ेगी ॥ ८८ ॥

एइरूपे विभीषण कन रघुवरे * अतिकाय प्रवेशिल समर-भितरे
सम्मुखेते विभीषण करि निरीक्षण * प्रणाम करिया ताँरे कहिछे वचन
अतिकाय बले, खुड़ा, शुनह उत्तर * रात्रिदिन सेव तुमि देव गदाधर
तोमार समान श्रेष्ठ हबे कोन जन * तोमा-प्रति बड़ प्रीत देव नारायण
अतिकाय बले, खुड़ा, निवेदि तोमारे * आमारे करुन दया देव-गदाधरे
एत कहि अतिकाय खुड़ा विभीषणे * चालाइया दिल रथ राम-विद्यमाने
अतिकाय बले, शुन जगत्-गोसाँइ * मम प्रति केन तव दया हय नाइ
अतिकाय बले, शुन देव-नारायण * स्थान दिओ श्रीचरणे, एइ निवेदन८९
स्तव शुनि स्तब्ध हये कन गदाधर * परम धार्मिक तुमि लंकार भितर
तुमि आर तोमार पितृव्य विभीषण * दुइजने राज्य दिब मारिया रावण
अतिकाय बले, राज्ये नाहि प्रयोजन * युद्ध करि कलेवर करिब पातन
एखन ओ-पदे करि एइ निवेदन * आमार सहित युद्ध दिबे कोन जन
वानरेर संगे आमि ना करिब रण * पशुजाति युद्धेर कि जाने कपिगण
वानरेर सम्भावना वृक्ष ओ प्रस्तर * कटाक्षे मारिते पारि सकल वानर
सुग्रीव-राजारे देखि वकेर समान * लक्ष्मण बालक, रणे कि जाने सन्धान
जोड़ हाते बले वीर, शुनह श्रीराम * तोमार सहित आमि करिब संग्राम९०

जिस समय विभीषण ने रघुवर से ये सारी बातें बताईं उसी समय अतिकाय ने रणक्षेत्र में प्रवेश किया। सामने विभीषण को निरख कर उनको प्रणाम कर अतिकाय कहने लगा, चाचा रातोंदिन तुम देव गदाधर की सेवा करते हो, तुम्हारे समान बड़भागी दूसरा कौन होगा। नारायण तुमसे अत्यन्त प्रसन्न हैं। अतिकाय ने कहा, चाचा, तुमसे निवेदन करता हूँ कि देव-गदाधर मुझ पर कृपा करें। अपने चाचा विभीषण से इतना कहकर अतिकाय अपना रथ राम के सम्मुख ले गया। अतिकाय ने कहा, संसार के स्वामी सुनो, मेरे प्रति तुम कृपा क्यों नहीं करते हो। हे देव-नारायण तुमसे इतना ही निवेदन है कि अपने श्रीचरणों में स्थान देना ॥ ८९ ॥

स्तवन सुनकर गदाधर (राम) स्तब्ध हो गये, फिर बोले, लंका के भीतर तुम परम धार्मिक हो। तुम और तुम्हारे पितृव्य को मैं रावण का वध कर राज्य दूँगा। अतिकाय ने कहा, मुझको राज्य की आवश्यकता नहीं, मैं युद्ध कर अपने शरीर को विनष्ट करूँगा। अब इन चरणों में मेरा निवेदन है कि मेरे साथ किस व्यक्ति को युद्ध करने दोगे। वानरों के साथ मैं युद्ध नहीं करूँगा—ये कपि पशुओं की जाति के हैं, भला इनको युद्ध करना भी आता है। बन्दरों के एक मात्र पेड़ और पत्थर (ही अस्त्र-शस्त्र) हैं। मैं बहुत ही आसानी से सारे वानरों को मार सकता हूँ। राजा सुग्रीव को भी मैं बगुले के समान देखता हूँ। लक्ष्मण भी बालक ही है—रण कौशल क्या जानता होगा ? हाथ

धनुक पातिया जान ठाकुर लक्ष्मण ❋ हासिया जिज्ञासा करे रावण-नन्दन
कत युद्ध करियाछ, बय:क्रम कत ❋ आमार सहित युद्ध ना हय उचित
इन्द्र चन्द्र कुबेर आमारे करे भय ❋ आमार सहित युद्ध उचित ना हय
कोपेते लक्ष्मण दिल धनुके टंकार ❋ देखि अतिकाय-वीर लागे चमत्कार
अतिकाय बले, शुन ठाकुर लक्ष्मण ❋ वयसे छाओयाल तुमि, किवा जान रण९१
लक्ष्मण बलेन, तुइ जाति निशाचर ❋ भाल-मन्द ना जानिस्, करिस् उत्तर
के कोथा देखेछे हेन, शुनेछे श्रवणे ❋ वयस अधिक जार, सेइ रण जिने
आमारे छाओयाल बल, प्रवीण आपनि ❋ प्राणे प्राणे जाओ यदि, तवे वीर जानि
आजिकारि युद्धे यदि तोरे नाहि मारि ❋ तबे त लक्ष्मण-नाम वृथा आमि धरि
एत यदि दु'जने वचने हैल कक्षा ❋ दुइजने बाण मारे, जार यत शिक्षा
अतिकाय बले, शुन ठाकुर लक्ष्मण ❋ तोमाते आमाते युद्ध करिब दु'जन
संग्रामेर दोष-गुण काहार केमन ❋ रामचन्द्र साक्षी, आर खुड़ा विभीषण
मध्यस्थ हइया दोंहे करुन विचार ❋ जय-पराजय रणे कि हय काहार९२
अतिकाय-वचने लक्ष्मण दिल साय ❋ महायुद्ध बाधिल लक्ष्मण-अतिकाय

जोड़ते हुए वीर (अतिकाय) ने कहा, हे श्रीराम सुनो, मैं तुम्हारे साथ युद्ध करूँगा ॥ ९० ॥

धनुष में प्रत्यंचा चढ़ाकर लक्ष्मण आगे बढ़ आए। रावण-नन्दन ने हँस कर पूछा, तुम्हारी अवस्था कितनी है, कितने युद्धों में तुमने भाग लिया है। तुमको मेरे साथ युद्ध नहीं करना चाहिए। इन्द्र, चन्द्र, कुबेर आदि मुझसे डरते हैं—मेरे साथ युद्ध करना तुम्हारे लिए उचित नहीं होगा। यह सुनकर क्रोधित होकर लक्ष्मण ने धनुष में टंकार किया, उसे सुनकर वीर अतिकाय आश्चर्य करने लगा। अतिकाय ने कहा, हे देव लक्ष्मण, अवस्था से तुम लड़के हो, रण के बारे में भला तुम क्या जानते हो ॥ ९१ ॥

लक्ष्मण ने कहा, तुम निशाचर जाति के हो। भला-बुरा बिना जाने बातें करते हो। किसने कब ऐसा देखा या सुना है कि अवस्था में अधिक होने वाला ही रण को जीतता रहा है। मुझको तुम बच्चा कहते हो और अपने को प्रवीण, यदि प्राण लेकर लौट जाओ तभी मैं तुमको वीर मानूँ। आज के युद्ध में यदि मैं तुमको नहीं मार सका तो बेकार ही मैं लक्ष्मण नाम धरता हूँ। जब दोनों में इतना वचन-युद्ध हो गया तो अपनी-अपनी शिक्षा के अनुसार दोनों बाण चलाने लगे। अतिकाय ने कहा, हे देव लक्ष्मण, तुममें-हममें संग्राम हो और संग्राम के दोष-गुण के सम्बन्ध में चाचा विभीषण और श्रीरामचन्द्र साक्षी बनकर, मध्यस्थ हो न्याय करें कि रण में किसकी जय या पराजय होती है ॥ ९२ ॥

अतिकाय के प्रस्ताव में लक्ष्मण ने सम्मति दी। फिर लक्ष्मण और

अग्निबाण अतिकाय करे अवतार ❋ लक्ष्मण वरुण-बाणे करिल संहार
दुइशत बाण तबे अतिकाय एड़े ❋ अविलम्बे लक्ष्मण बाणेते काटि पाड़े
हस्ति-बाण एड़े अतिकाय महाबल ❋ सिंह-बाणे लक्ष्मण करिल रसातल
मारिल पर्व्वत-बाण अतिकाय रोषे ❋ लक्ष्मण पवन-बाणे उड़ान वातासे
अमर्त्य समर्थ बाण विकट-दशन ❋ इन्द्रजाल विष्णुजाल घोर-दरशन
एइसब बाण दोंहे करे अवतार ❋ दशदिक् जल-स्थल बाणे अन्धकार
दुइजने बाण मारे अति परिपाटि ❋ अन्तरीक्षे दुइ बाण करे काटाकाटि
लक्ष्मण मारेन बाण दिया बाहुनाड़ा ❋ अतिकाय-रथेर काटेन शत-घोड़ा
आर बाण एड़ेन लक्ष्मण महावीर ❋ काटिलेन तार पञ्च-सारथिर शिर
युद्ध करे अतिकाय हइया विरथी ❋ चक्षुर निमिषे रथ योगाय सारथि
रथ पेये अतिकाय लाफ दिया चड़े ❋ तिनकोटि बाण लक्ष्मणेर प्रति एड़े
से बाण लक्ष्मण सब काटे अवहेले ❋ स्वर्गेते देवता सब साधु-साधु बले
लक्ष्मण एड़ेन बाण नामेते अक्षय ❋ शानाते ठेकिया बाण पाइल पराजय ९३
शानाय ठेकिया बाण ना करे प्रवेश ❋ लक्ष्मणेर काने वायु कहे उपदेश
अक्षय कवच आछे अंगेते उहार ❋ अंगे प्रहारिते बाण शक्ति आछे कार

अतिकाय में महायुद्ध छिड़ गया। अतिकाय ने अग्निवाण छोड़ा तो लक्ष्मण ने वरुण वाण से उसका सामना किया। तब अतिकाय ने दो सौ वाण फेंके और लक्ष्मण ने अपने वाणों से उनको काट गिराया। महाबली अतिकाय ने हस्ति-वाण फेंका तो लक्ष्मण ने सिंह वाण से उसे मार गिराया। अतिकाय ने रोष से पर्वत-वाण फका तो लक्ष्मण का पवन-वाण उसको उड़ा ले गया। अमर्त्य, समर्थ नामक विकट-दर्शन वाण और घनघोर इन्द्रजाल और विष्णुजाल नामक वाण दोनों चलाने लगे। जल-स्थल सहित दशों दिशाएँ वाणों से ढककर अन्धकारमयी हो गयीं। दोनों चुन-चुन कर वाण फेंकने लगे और अन्तरिक्ष में दोनों के वाण एक दूसरे को काटने लगे। तब हाथ झटकारते हुए लक्ष्मण ने वाण फेंका और अतिकाय ने रथ के सौ घोड़ों को मार डाला। फिर महावीर लक्ष्मण ने दूसरा वाण फेंका और उसके पाँच सारथियों के सिर काट डाले। जब रथ शून्य होकर अतिकाय लड़ने लगा तो सारथी ने क्षण भर में रथ ला दिया। रथ पाते ही अतिकाय कूद कर रथ पर चढ़ गया और लक्ष्मण के ऊपर तीन करोड़ वाण फेंके। उन वाणों को लक्ष्मण ने सहज ही काटकर गिरा दिया तो स्वर्ग से सभी देवता साधु-साधु कहने लगे। लक्ष्मण ने अक्षय नामक वाण फेंका जो कि कवच से टकराकर व्यर्थ गया ॥ ९३ ॥

जब कवच से टकराकर वाण अन्दर प्रवेश नहीं कर सका तो पवन ने आकर लक्ष्मण के कानों में यह उपदेश किया कि उसके अंग पर अक्षय कवच

सहजेते ना मरिबे रावण-कुमार ❋ ब्रह्म-अस्त्र मारि ओरे करह संहार
उपदेशे कहिया पवन-देव नड़े ❋ मंत्र पड़ि लक्ष्मण-बीर ब्रह्म-अस्त्र जोड़े
लक्ष्मण एड़िल बाण पूरिया सन्धान ❋ बाण देखि अतिकायेर उड़िल पराण
मारे जाठि झकड़ा से अस्त्र काटिवारे ❋ तबु अतिकाय ताहा फिराइते नारे
अजय अक्षय बाण केवा धरे टान ❋ अतिकाय-माथा काटि कैल दुइखान
अतिकाय पड़िल, राक्षस-भागे डरे ❋ धाइया वानरगण राक्षसेरे मारे
पलाय राक्षसगण गणिया प्रमाद ❋ 'राम-जय'-शब्दे कपि छाड़े सिंहनाद
समुकुट मुण्ड पड़े सहित-कुण्डले ❋ अतिकाय-मुण्ड गड़ागड़ि भूमितले
भूमिते पड़िया मुण्ड 'राम राम' बले ❋ प्रेमानन्दे विभीषण भासे अश्रुजले
धन्य धन्य पुत्र, तुमि निशाचर कुले ❋ तिनकुल मुक्त हबे तव पुण्यफले
हेन भक्त ना देखि ना शुनि कोनकाले ❋ काटामुण्ड एइरूपे 'राम राम' बले
बानरेते 'राम-जय' शब्द करे मुखे ❋ वज्राघात पड़े येन रावणेर बुके
अतिकाय पड़े यदि संग्राम-भितरे ❋ दूत जाय समाचार दिते लंकाश्वरे९४

अतिकायादि चारिपुत्रेर मृत्यु शुनिया रावणेर रोदन

भग्नदूत गिया तबे दशानन-पाशे ❋ निवेदन करितेछे गदगद-भाषे

है—ऐसा कौन सा बाण है जिसमें उसका अंग-भेद करने की शक्ति है। रावण-कुमार आसानी से नहीं मरेगा। ब्रह्म-अस्त्र मारकर उसका संहार करो। यह उपदेश देकर पवन-देव वहाँ से खिसक गये। तब वीर लक्ष्मण ने मंत्र पढ़कर ब्रह्मास्त्र को धनुष पर रखा। बाण देखकर अतिकाय के प्राण सूख गये। उसने जाठि-झकड़ा आदि फेंककर उस अस्त्र को काटना चाहा लेकिन फिर भी उसका निवारण नहीं कर सका। अजेय अक्षय बाण का कौन रोध कर सका है, उसने अतिकाय के सिर को काट कर फेंक दिया। अतिकाय गिर गया यह देखकर राक्षस भागने लगे तो वानर दौड़-दौड़ कर उनको मारने लगे। विपत्ति जानकर राक्षस भागने लगे तो कपि 'राम-जय' कहकर सिंहनाद करने लगे। मुकुट और कुंडल के साथ जब अतिकाय का मुंड धरती पर गिरा तो वह गिरा हुआ मुंड 'राम-राम' शब्द करने लगा। प्रेमानन्द से विभीषण आँसुओं से भीग गया। कहने लगा, हे पुत्र ! तुम धन्य हो, निशाचर कुल में तुम धन्य हो। तुम्हारे पुण्य के कारण तुम्हारे तीन कुल तर जाएँगे। ऐसा भक्त आज तक न देखा है और न सुना ही है कि कटामुंड इस प्रकार 'राम-राम' का शब्द करता हो। वानर 'राम-जय' की ध्वनि करने लगे तो रावण के वक्ष पर मानों गाज गिरने लगी। संग्राम में अतिकाय गिरा तो दूत लंकेश्वर को समाचार देने चल पड़ा ॥ ९४ ॥

अतिकाय आदि चार पुत्रों की मृत्यु के समाचार पर रावण का रुदन

भग्नदूत दशानन के निकट पहुँचकर शोकाकुल स्वर में निवेदन करने

महाराज, चारिजन तनय तोमार ❋ रणे गियाछिल दुइजन भ्राता आर
तार मध्ये पञ्चजने वानरे वधिल ❋ अतिकाय लक्ष्मणेर बाणेते मरिल९५
दूतमुखे हेनवाणी करिया श्रवण ❋ किछुकाल स्तब्ध ह'ये रहे दशानन
मुहूर्त्तेक परे पुनः पाइया चेतन ❋ कि कहिले बलिया करये जिज्ञासन
पुनर्व्वार दूत कैल सब निवेदन ❋ ताहा शुनि मूर्च्छित हइल दशानन
किछुकाल परे पुनः संवित् पाइया ❋ सुदीर्घ निश्वास छाड़े हुंकार करिया
हइयाछे अतिशय शोकेते मगन ❋ ना पारये करिवारे धैरय धारण
विंशति-नयने घन अश्रुधारा वय ❋ मुक्तकण्ठ हय राजा क्रन्दन करय
कोथा गेल महोदर भाइ महापाश ❋ कोथा गेल चारिपुत्र करिया उदास
पितृश्राद्ध करे पुत्र, सर्व्वकाले शुनि ❋ पुत्रश्राद्ध करे पिता, ए अद्भुत गणि९६
कि हइल हाय हाय, दुःख नाहि सहा जाय, आर देहे प्राण नाहि रहे।
शोकानल विपरीत, ह'ये अति प्रज्वलित, निरवधि प्राण-मन दहे ।।
पुड़ि मरितेछि एके, कुम्भकर्ण-भ्रातृशोके, क्षणकाल स्थिर नहे मन।
तदुपरि आर बार, एइ वज्र सम्प्रहार, कि करिया धरिब जीवन ।।
ओरे अतिकाय पुत्र, सकल गुणेर पात्र, कोन स्थाने करिलि गमन।
ना देखि तोमार मुख, विदरे आमार बुक, धैर्य्यं नाहि धरे मोर मन ।।

लगा, महाराज, आपके चारों तनय और दो भ्राता युद्ध करने गये थे, उनमें से वानरों ने पाँच का वध किया और लक्ष्मण के वाणों से अतिकाय की मृत्यु हुई ।। ६५ ।।

दूत के मुँह ऐसा सन्देश सुनकर कुछ देर के लिए दशानन स्तब्ध हो गया। क्षणभर के उपरान्त सचेतन होकर उसने पूछा, तुमने क्या कहा, फिर से बताओ। दूत ने फिर से सारी बातें बताईं, सुनते ही दशानन मूर्च्छित हो गया। कुछ देर के बाद होश में आकर उसने हुंकार करते हुए लम्बी-लम्बी साँस ली। वह इतना शोकमग्न हो गया था कि धैर्य धारण नहीं कर पा रहा था। उसकी बीसों आँखों से आँसू निकलने लगे और राजा खुल कर जोर-जोर से रोने लगा। हाय मेरे भाई महोदर और महापाश तुम कहाँ चले गये। मेरे चारों पुत्रों तुम मुझको उदास कर कहाँ चले गये। चिरकाल से सुना जाता है कि पुत्र ही पिता का श्राद्ध करता है, यह कसी अद्भुत बात है कि मुझे पिता होकर पुत्र का श्राद्ध करना पड़ रहा है ।। ६६ ।।

हाय हाय ! यह क्या हो गया, यह दुःख तो अब सहा नहीं जाता। इस शरीर में अब प्राण रहना ही नहीं चाहते। शोकानल प्रज्वलित होकर देह और मन को जला रहा है। एक तो भाई कुम्भकर्ण के शोक से जला जा रहा हूँ, मेरा मन क्षणभर के लिए भी स्थिर नहीं है, तिस पर बार-बार यह वज्र का प्रहार हो रहा है; यह जीवन मैं कब तक रख सकूँगा ? हे पुत्र अतिकाय,

तोमा-बिना घर-द्वार, सब हैल अन्धकार, शून्य देखि ए तिन भुवन ।
अन्ध हैल सब नेत्र, ज्वलितेछे मोर गात्र, हृदय ह'तेछे उचाटन ॥
ओरे ओरे बाछा मोर, ना देखिब आर तोर, सुधांशु समान से बदन ।
आर तोरे निज क्रोड़े, ना बसाब धरि करे, ना शुनिब से मिष्ट-बचन ॥
के कहिबे मोरे आर, हितकथा शास्त्र-सार, के करिबे विपदे मोचन ।
के करिबे शत्रु-जय, के तुषिबे बन्धुचय, सम्मानिबे केवा मान्यजन ॥
ओरे बाप देवान्तक, त्रिशिरा ओ नरान्तक, भ्राता महापाश महोदर ।
तोरा सबे छाड़ि मोरे, गेलि कोन देशान्तरे, ना देखिया पोड़ये अन्तर ॥
यदि गेलि तोरा सबे, जीवने कि कार्य तबे, मरिब डुबिया रत्नाकरे ।
एकमात्र रहि गेल, हृदयेते खेद-शेल, जिनिते नारिनु रघुवरे ॥ ९७

इन्द्रजित्-कर्तृक रावणेर सान्त्वना

एइरूपे क्रन्दन करये दशानन ❋ कोनमते स्थिर नाहि हय एकक्षण
राजार क्रन्दन शुनि, काँदे सर्व्वजना ❋ केह ना करिते पारे काहारे सान्त्वना
तबे इन्द्रजित् निज क्रन्दन संवरि ❋ कहितेछे दशानने अहंकार करि

तुम सारे गुणों के निधि थे, तुम कहाँ चले गये ? तुम्हारा मुख देखे बिना मेरा हृदय खंड-खंड हो रहा है और मैं धीरज नहीं धर पा रहा हूँ। तुम्हारे बिना घर-द्वार सब कुछ अन्धकारमय हो गया—तीनों भुवनों को सूना देख रहा हूँ। मेरे सारे नेत्र अन्धे हो गये, मेरा बदन तप रहा है और दिल उदास हो रहा। अरे मेरे बेटे, तेरा चाँद सा मुखड़ा मैं फिर न देख सकूँगा, तुझको फिर कभी अपनी गोद में बिठाकर तेरी मीठी-मीठी बातें नहीं सुन सकूँगा। कौन मुझको फिर से शास्त्र-सम्मत हितकारी बातें सुनाया करेगा और विपत्तियों से मुक्त करेगा। अब कौन शत्रु-जय करेगा, मित्रों का तोषण करेगा और सम्मानित व्यक्तियों का सम्मान करेगा ? अरे बेटे देवान्तक, नरान्तक और त्रिशिरा, भाई महापाश और महोदर, तुम सब मुझको छोड़कर किस देश को प्रस्थान कर गये। तुमको बिना देखे मेरा अन्तर (हृदय) दग्ध होता जा रहा है। यदि तुम सबही चले गये तो मेरे जीवन से क्या लाभ, मैं सागर में डूब कर प्राण दे दूँगा पर इतना ही खेद रह जायगा कि रघुवर को मैं जीत नहीं सका ॥ ९७ ॥

इन्द्रजीत द्वारा रावण को सान्त्वना

इस प्रकार दशानन निरन्तर क्रन्दन करने लगा और क्षणभर भी स्थिर न रह सका। राजा को रोते देखकर सभी रोने लगे और कोई किसी को ढारस न बँधा सका। तब इन्द्रजीत ने अपना रुदन रोककर अहंकार करते हुए दशानन से कहा, मेरे रहते हुए किसी दूसरे को क्यों भेज रहे हो। आज्ञा दो,

आमि विद्यमाने केन प्रेर अन्यजने ❊ आज्ञा कर, मेरे आसि श्रीराम-लक्ष्मणे
अनुग्रह करि मोरे देह पदधूलि ❊ रामसैन्य मारिवारे एइ आमि चलि
अंगद सुग्रीव आर वीर हनूमान ❊ बड़-बड़ वानरेर लइब पराण
नल-नील-सुषेणे मारिब अवहेले ❊ जाम्बवान डुबाइब सागरेर जले
सुग्रीवेर श्वशुर सुषेण बेटा बुड़ा ❊ गदाघाते करिब ताहार मुण्ड गुँड़ा
केशरी-वानर बेटा घरपोड़ार बाप ❊ यमालये पाठाइब करि वीरदाप
मारिब शरभ-आदि यत कपिगणे ❊ बधिब लंकार शत्रु खुड़ा विभीषणे
यत बेटा लंका आसि करेछे प्रवेश ❊ बाहुड़िया एकजन ना जाइबे देश९८

इन्द्रजितेर द्वितीयबार युद्धे गमनोद्योग

मेघनाद-कथा शुनि रावण हर्षित ❊ कोले करि मेघनादे कहिछे त्वरित
लंका-अधिपति तुमि पुत्र मेघनाद ❊ मारिया वानर-नर घुचाओ प्रमाद
भुञ्जिते लंकार भोग आमि दशानन ❊ विपक्ष नाशिते पुत्र रयेछे एखन
चारिपुत्र-शोके हेरि रावणे चिन्तित ❊ जोड़हाते पितृ-आगे कहे इन्द्रजित्
लंका-अधिपति तुमि, भुवनेर राजा ❊ इन्द्र-आदि देवता तोमार करे पूजा
किसेर संग्राम नर-वानरेर सने ❊ एखनि बाँधिया आनि श्रीराम-लक्ष्मणे१९९

मैं श्रीराम और लक्ष्मण को मार आऊँ। कृपया अपने चरणों की धूल दो, मैं राम-सेना का संहार करने चलता हूँ। अंगद, सुग्रीव और वीर हनुमान जैसे बड़े-बड़े वानरों का प्राण मैं ले लूँगा। नल-नील-सुषेण को मैं अनायास ही मार डालूँगा। और जाम्बवान को समुद्र के पानी में डुबो मारूँगा। सुग्रीव के श्वसुर बूढ़े सुषेण का मुंड मैं गदा से चकनाचूर कर डालूँगा। केशरी वानर जो कि गृहदाह करने वाले वानर हनुमान का बाप है उसको मैं पदाघात से यमालय भेज दूँगा। शरभ आदि सारे कपियों को मैं मार डालूँगा और लंका के शत्रु चाचा विभीषण का भी मैं वध करूँगा। जितने नीच लंका में प्रवेश कर आए हैं, उनमें से एक भी लौट कर अपने देश नहीं जा सकेगा॥ १९८॥

इन्द्रजीत का दुबारा युद्ध में जाने का उद्योग

मेघनाद के वचन सुनकर रावण हर्षमग्न हुआ और उसको गोद में बिठा कर बोला, हे पुत्र मेघनाद तुम लंका के अधिपति हो। नर और वानरों को मार कर मेरा दुख दूर करो। लंका को भोगने के लिए मैं अकेला दशानन रहा। विपक्ष के नाश के लिए अब तुम रह गये। चार पुत्रों के शोक से रावण को व्याकुल देखकर इन्द्रजीत पिता के सम्मुख हाथ जोड़कर खड़ा हो गया और कहने लगा, तुम लंका के अधिपति हो और संसार के राजा हो। इन्द्र आदि देवता तुम्हारी पूजा करते रहते हैं। नर-वानर के साथ युद्ध भी

कुणनाडिक् कुट्रमुम् नाडि अवट्रुळ्
मिहैनाडि मिक्क कॊळल् ॥ ४ ॥

गुण-अवगुण से रहित न कोई, परखो सब गुण-कर्म-स्वभाव।
भले-बुरे में पलड़ा भारी देख-समझ कर करो चुनाव ॥ ४ ॥

[किन्तु बिलकुल निर्दोष व्यक्तियों का संसार में अभाव-सा है, इसलिए विकल्प है कि] चुनते समय व्यक्तियों के गुण और अवगुण दोनों की समीक्षा करो। दोनों पर विचार करने पर पलड़ा जिधर और जितना भारी हो उसी को दृष्टि में रख कर [अपने भरोसे और कार्य-संचालन के लिए] सुपात्रों का चुनाव करना चाहिए ॥ ४ ॥

पॆरुमैक्कुम् एनैच् चिरुमैक्कुम् तत्तम्
करुममे कट्टळैक् कल् ॥ ५ ॥

कैसे समझें लघुता-गुरुता, कौन क्षुद्र है, कौन महान् ?
किसी व्यक्ति के आचरणों को निरखें-परखें—यह पहचान ॥ ५ ॥

कौन कितना महान् है और कौन कितना क्षुद्र है, इसकी एक मात्र कसौटी उस व्यक्ति का अपना आचरण है ॥ ५ ॥

अट्रारैत् तेरुदल् ओम्बुह; मट्रवर्
पट्रिलर्; नाणार् पळि ॥ ६ ॥

आगे पीछे नहीं, न जिसने चखा कभी ममता का स्वाद।
बन्धनहीन ! न पातक-भय है, नहीं शर्म का उसे विषाद ॥ ६ ॥

स्वजन और परिवार-विहीन व्यक्तियों में सामाजिक बन्धन की कोमल भावना का प्रायः अभाव होता है। उनको लज्जा, और पाप का भय न होना आश्चर्य नहीं। [अस्तु उनका चुनाव भरोसे के योग्य नहीं] ॥ ६ ॥

कादन्मै कन्दा अऱिवऱियार्त् तेरुदल्
पेदैमै ऎल्लाम् तरुम् ॥ ७ ॥

सगे-सनेही के विमोह में, यदि अयोग्य का किया चुनाव।
अमिट[1] भुगतना जीवन भर उस एक भूल का बुरा प्रभाव ॥ ७ ॥

विना योग्यता और सुलक्षणों को परखे, आत्मीयता और स्नेह के आधार पर सुपात्र मान कर सचिवों का चुनना प्रत्येक प्रकार के विनाश को आमंत्रित करना है ॥ ७ ॥

---

१ कभी न मिटने वाला।

तेरान् पिऱनैत् तॆळिन्दान् वऴिमुऱै
तीरा इडुम्बै तरुम् ॥ ८ ॥

किया भरोसा नव-आगत[1] पर, जाने विना कर्म-गुण-शील ।
स्वयं नहीं, सन्तानों को भी दुख देना यह विटप करील[2] ॥ ८ ॥

योग्यता और आचरण को परखे विना, किसी अपरिचित नवागन्तुक को चुनना [और उस पर भरोसा करके कार्य सौंप देना] अपने तथा अपनी भावी पीढ़ियों तक के लिए अनन्त दुःखों का कारण होगा ॥ ८ ॥

तेऱ्ऱक यारैयुम् तेरादु; तेऱ्न्दपिन्
तेऱुह तेऱुम् पॊरुळ् ॥ ९ ॥

विना कसौटी पर परखे करना न किसी के प्रति विश्वास ।
यदि विश्वास किया, तो अनुचित अविश्वास का लाना पास ॥ ९ ॥

विना परीक्षा किये किसी को विश्वस्थ मत बनाओ; और परख लेने [और विश्वस्थ मान कर उसको कार्य सौंपने] के बाद उसके कार्य पर भरोसा रखना [और बाधा न देना] कर्त्तव्य है ॥ ९ ॥

तेरान् तेळिवुम् तॆळिन्दान्कण् ऐयुऱवुम्
तीरा इडुम्बै तरुम् ॥ १० ॥

जाँचे बिना भरोसा करना, किया भरोसा तब सन्देह ।
दोनो ही दारुन दुखदायी, हैं अनन्त क्लेशों का गेह[3] ॥ १० ॥

विना परखे किसी को चुन कर भरोसे का काम सौंप देना, और किसी को परखने और चुन लेने के बाद उस पर [संदेह करना तथा] भरोसा न करना—ये दोनों ही बातें अनन्त दुःखों को जन्म देने वाली हैं ॥ १० ॥

अदिहारम् (अध्याय) ५२
तॆरिन्दु विनैयाडल् (कार्य-क्षमता की परख)

नन्मैयुम् तीमैयुम् नाडि नलम्पुरिन्द
तन्मैयान् आळप् पडुम् ॥ १ ॥

जाँच तराजू पर लेता है भले-बुरे का जो परिणाम,
ऐसी सूझ-बूझ वाले को समुचित सदा सौंपना काम ॥ १ ॥

१ अपरिचित व्यक्ति, नवागन्तुक २ कटीली झाड़ी ३ घर ।

आरंभ से पहले हर काम के अच्छे और बुरे परिणामों को जान लेने और अन्ततः उनमें से कल्याणप्रद मार्ग को ग्रहण करने की क्षमता रखनेवाले विवेकी पुरुषों को [कार्य-भार सौंपने के लिए] ज़रूर चुनना चाहिए ॥ १ ॥

वारि पॆरुक्कि वळम्पडुत् तुट्रवै
आरायवान् शॆय्ह विनै ॥ २ ॥

स्रोत आय[1] के खोज उन्हें अर्जित-उन्नत[2] करने के योग्य,
बाधक तत्वों के विनाश में सक्षम, चुनिए व्यक्ति सुयोग्य ॥ २ ॥

[सब को सन्तुष्ट रख कर] धन को एकत्र करने, राजकोष को उत्तरोत्तर समृद्ध करते रहने, और इसमें बाधक तत्वों का निवारण करने में दक्ष, कुशल व्यक्तियों को ही कार्यसञ्चालन का भार देना चाहिए ॥ २ ॥

अन्बरिवु तेट्रम् अवाविन्मै इन्नान्गुम्
नन्गुडैयान् कट्टे तॆळिवु ॥ ३ ॥

विमल बुद्धि, निर्मल सनेह, पैनी निगाह, नहिं लोभ-विकार,
करो भरोसा उस अमूल्य जन का जिसमें लक्षण ये चार ॥ ३ ॥

(शुद्ध-) स्नेह, (निर्मल-) बुद्धि, स्वच्छ (सूक्ष्म-) दृष्टि और निर्लोभ—इन चार गुणों से समलंकृत व्यक्ति का विश्वास करना चाहिए ॥ ३ ॥

अॆनैवहैयाट् ट्रेरियक् कण्णुम् विनैवहैयान्
वेराहुम् मान्दर् पलर् ॥ ४ ॥

खरे कसौटी पर, अनन्त गुणवन्त, हाथ में लेकर काम,
नहीं जरूरी सदा सफल हों, कभी-कभी होते ना-काम[3] ॥ ४ ॥

सब प्रकार से कसौटी पर खरे उतरे सर्वगुणसम्पन्न व्यक्ति भी कभी-कभी सिपुर्द किये गये कामों में अनुपयुक्त सिद्ध होते हैं। [अर्थात् कार्य-भार-वितरण में केवल योग्यता और गुणों का अंकन ही काफ़ी नहीं है। किस काम के लिए कौन व्यक्ति किन्हीं कारणों से कम या अधिक उपयुक्त है, यह भी परखना चाहिए। प्रत्येक गुणी सुयोग्य प्रत्येक काम के लिए उपयुक्त हो, यह ज़रूरी नहीं।] ॥ ४ ॥

अरिन्दाट्रिच् चॆय्हिर्पार् कल्लाल् विनैदान्
शिरन्दानॆन् ट्रेवर्पाट् ट्रन्रु ॥ ५ ॥

---

१ आमदनी २ पैदा करने व बढ़ाने ३ विफल।

गुणी-कुशल हो व्यक्ति—चयन का एक मात्र बस यह आधार,
सही-सिपारिश, शील-सगापन करता सदा कार बेकार ।। ५ ।।

सुपात्र-चयन में योग्यता और कार्य-दक्षता ही मापदण्ड होना चाहिए। स्नेहभाजन होना [अथवा सिफ़ारिश]—यह चुनाव का आधार नहीं है ।।५।।

शॆय्वाऩै नाडि विऩैनाडिक् कालत्तॊडु
ऎय्द उणर्न्दु शॆयल् ।। ६ ।।

कैसा काम? सौंपना किसको? निरख-परख कर करो विचार,
और समय से भी समरस[1] हों, सौंपो तभी कार्य का भार ।। ६ ।।

कार्य का स्वरूप; जिसको कार्य सौंपा जाना है उसकी योग्यता और उस कार्य-विशेष में उसकी दक्षता; तथा समय की मांग—इन पर दृष्टि रख कर सुपात्र का चयन करना चाहिए ।। ६ ।।

इदऩै इदऩाल् इवऩ्मुडिक्कुम् ऎऩ्ऱायन्दु
अदऩै अवऩ्कण् विडल् ।। ७ ।।

किस कारज में, किस प्रकार, किस साधन से, समर्थ है कौन ?
समझ लिया, फिर उस सुपात्र को सौंप काम, हो रहिए मौन[2] ।। ७ ।।

अमुक व्यक्ति, अमुक साधनों से [अथवा अमुख ढंग से] अमुक कार्य का सुचारु सम्पादन करेगा—इस प्रकार [तीनों बातों का तालमेल जिस व्यक्ति में बैठ जाय उस] सुपात्र को वह काम सौंप कर उसे स्वतंत्रता से करने दीजिए और निश्चिंत होइए ।। ७ ।।

विऩैक्कुरिमै नाडिय पिऩ्ऱै अवऩै
अदऱ्कुरिय ऩाहच् चॆयल् ।। ८ ।।

अमुक[3] काज के लिए अमुक-जन है सुयोग्य यदि सर्व प्रकार,
बेखटके नियुक्त कर, उस पर छोड़ो उस कारज का भार ।। ८ ।।

निरीक्षण और परीक्षण के बाद एक कार्य-विशिष्ट के लिए उपयुक्त पात्र को चुनिए, और तब उसको वही काम सुपुर्द कीजिए, [और फिर दख़ल न दीजिए ताकि वह उसे अपना काम समझ कर करे] ।। ८ ।।

विऩैक्कण् विऩैयुडैयाऩ् केण्मै वेऱाह
निऩैप्पाऩै नीङ्गुम् तिरु ।। ९ ।।

निष्ठा-भक्ति सहित, श्रम से अपने कर्त्तव्यों पर आसीन[4],
'शक ऐसे सेवक पर' स्वामी को करता है भाग्य-विहीन ।। ९ ।।

---

१ समय से मेल खाते हों २ खामोश, दख़ल न दें ३ फ़लाँ ४ डटा हुआ ।

कुशलता, श्रम और कर्त्तव्य-परायणता से कार्य को जो करते और चलाते हैं, उनकी निष्ठा पर सन्देह रखनेवाले स्वामी का सारा सौभाग्य नष्ट हो जायगा ॥ ९ ॥

नाडोरुम् नाडुह मन्नन्; विनैशॆय्वान्
कोडामै कोडा दुलहु ॥ १० ॥

नृप-कर्तव्य चौकसी रखना कारिन्दों[1] पर सदा निगाह।
कार्य-पालिका यदि सुपन्थ पर, तो सीधी रय्यत[2] की राह ॥ १० ॥

यदि शासक अपनी कार्य-चालिका (के प्रशासकों) की सदैव गुप्त रूप में जाँच करता रहता है [और देखता रहता है कि वे कर्त्तव्यपरायण हैं] तो शासन और प्रजा [सब कर्त्तव्यनिष्ठ रहेंगे,]—कोई राह से बेराह न होगा। [यदि कार्य-पालिका भ्रष्ट है तो सारा शासन और प्रजा भ्रष्ट हो जायगी] ॥ १० ॥

अदिहारम् (अध्याय) ५३

शुट्रम् तळाल् (इष्ट-बन्धुओं के साथ भलाई)

पट्रट्र कण्णुम् पळैमै पाराट्टुदल्
शुट्रत्तार् कण्णे उळ ॥ १ ॥

धन से हीन-दीन निज जन पर, स्वजन-सगों का करुणा-भाव!
यही धर्म है, समझो इसको परम्परा का सहज स्वभाव ॥ १ ॥

धन-वैभव से रहित व्यक्ति पर ही स्वजन-परिजन-परम्परा की संस्कार-वश सहृदयता का भाव प्रकट होता है ॥ १ ॥

[आज-कल के सुधारवादी यह मत रखते हैं कि अपने कमज़ोर समीपियों की सहायता करना अपनी उन्नति में बाधा और अपने ऊपर व्यर्थ का भार है। किन्तु भारतीय परम्परा यह है कि अपने सगे-सम्बन्धी आत्मीय जनों को अपनी सम्पत्ति से सदैव सहायता देता रहे। एक परिवार में विना इसका विचार किये कि किसमें अर्जन करने की न्यूनाधिक कितनी क्षमता है, सभी इकाइयों को समान उपभोग का अधिकार है। यह केवल नैतिक कर्त्तव्य मात्र नहीं है, वरन् परिवार अथवा जाति और इसी प्रकार राष्ट्र को सुखी-सम्पन्न रखने का उपाय है। सब अपनी शक्ति भर ही अर्जन कर सकते हैं। किन्तु समान उपभोग से ईर्ष्या-मत्सर का अभाव, परस्पर प्रेम और संगठन-शक्ति का प्रादुर्भाव होता है। यह अध्याय इसी पर है।]

---

१ कर्मचारियों २ प्रजा।

विरुप्पराच् चुट्रम् इयैयिन् अरुप्परा
आक्कम् पलवुम् तरुम् ॥ २ ॥

यदि आत्मीय, सगों का हमको सुलभ सदा है सहज सनेह;
मानो हमने प्राप्त कर लिया शाश्वत[1] सुख-वैभव का गेह ॥ २ ॥

सगे-सम्बन्धियों से प्राप्त अटूट स्नेह अक्षुण्ण सुख-सम्पत्ति का विकास करता रहता है ॥ २ ॥

अळवळा विल्लादान् वाऴ्क्कै कुळवळाक्
कोडिन्ड्रि नीर् निरैन् दट्रु ॥ ३ ॥

बाँध नहीं—ऐसे तडाग का जल जैसे बह जाता व्यर्थ;
स्वजनों से विरक्त के धन-वैभव का उससे अधिक न अर्थ ॥ ३ ॥

अपने आत्मीय जनों से विरक्त जन की स्थिति बिना बाँध के तालाब जैसी है जिसका जल व्यर्थ चारों ओर बह जाता है [जल होते हुए भी सरोवर में न रह कर बाहर व्यर्थ बह जाता है, उसी भाँति स्वजनों के स्नेह-बम्धन के विना वैभव नष्टप्राय होता है।] ॥ ३ ॥

शुट्रत्तार् शुट्रप् पडवॊऴुहल् शॆल्वम्तान्
पॆट्रत्तार् पॆट्र पयन् ॥ ४ ॥

सुफल हमारा धन-वैभव—यदि उससे सुखी स्वजन-परिवार,
घेरे हमको रहे सदा उनका संतुष्ट मृदुल व्यवहार ॥ ४ ॥

धन-सम्पदा की प्राप्ति व्यक्ति के लिए तभी सुफल है जब सम्बन्धी-आत्मीय जन सुखी होकर उसको घेरे रहें ॥ ४ ॥

कॊटुत्तलुम् इन्शॊलुम् आट्रिन् अडुक्किय
शुट्रत्तार् शुट्रप् पडुम् ॥ ५ ॥

बन्धु-स्वजन के प्रति मृदु-वचनों, धन आदिक से रहे उदार;
ऐसे जन को सुलभ अमित उनका सत्संग, नेह-उद्गार ॥ ५ ॥

उदार हस्त और मधुर वाणी—इन लक्षणों से युक्त जन को उसके सगे-सम्बन्धी [अपने-पराये] सभी घेरे रहते हैं ॥ ५ ॥

पॆरुङ्गॊडैयान् पेणान् वॆहुळि अवनिन्
मरुङ्गुडैयार् मानिलत् तिल् ॥ ६ ॥

कटु वाणी का नाम नहीं है, मुक्त हस्त से करता दान;
सगे-स्वजन के बीच घिरा वह पाता सदा नेह-सम्मान ॥ ६ ॥

---

१ कभी न मिटनेवाला।

मुक्त हस्त होकर देने और क्रोध पर क़ाबू रखनेवाले व्यक्ति धरती पर आत्मीयों से घिरे रहते हैं ॥ ६ ॥

काक्कै करवा करैन्दुण्णुम्; आक्कमुम्
अन्तनी रार्क्के उळ ॥ ७ ॥

बिना बुलाये काग-बन्धुओं को, वायस[1] न करे आहार[2]।
अपनों सहित विलसते[3], उनका दिन-दिन बढ़ता सुख व्यापार ॥ ७ ॥

वायस [कौवों से शिक्षा लें कि वे] कभी प्राप्त खाद्य पदार्थ को नहीं छिपाते हैं और पूरी बिरादरी को काँव-काँव करके बुलाते तथा साथ-साथ सहभोज करते हैं। [कभी अकेले खाना पसन्द नहीं करते।] धन अर्जन करके अपने आत्मीय एवं आश्रितों सहित उसका उपभोग करने वालों का ही उत्कर्ष और कल्याण होता है ॥ ७ ॥

पोंदुनोक्कान् वेन्दन् वरिशैया नोक्किन्
अदुनोक्कि वाळ्वार् पलर् ॥ ८ ॥

यद्यपि सब न समान, यथोचित[4] फिर भी करो सभी को तुष्ट;
ऐसे नृप के चौतरफ़ा रहते हैं सगे सप्रिय सन्तुष्ट ॥ ८ ॥

सब को समान न मान कर भी, प्रत्येक को उसकी योग्यता और अधिकार के अनुसार देकर तृप्त रखनेवाला राजा सदैव हितैषियों से घिरा रहता है ॥ ८ ॥

तमराहित् तट्रुरन्दार् शुट्रम् अमरामैक्
कारण मिन्ऱि वरुम् ॥ ९ ॥

यदि अप्रीति का हेतु निवारण कर दें उनका, तो न विलम्ब,
बिछुड़े-रुष्ट सनेही निश्चय फिर वापस होंगे अविलम्ब ॥ ९ ॥

कोई स्वजन यदि असन्तुष्ट होकर चला गया है तो [उसपर रुष्ट होने के बजाय अपने मन मे उसके असन्तोष का कारण खोज कर उसको दूर करो,] असन्तोष का कारण दूर होते ही वह आत्मीय शीघ्र ही फिर तुमसे आ मिलेगा ॥ ९ ॥

उळैप्पिरिन्दु कारणत्तिन् वन्दानै वेन्दन्
इळैत्तिरुन्दु ऍण्णिक् कोळल् ॥ १० ॥

हुआ अकारण विलग, पुनः वह आता है यदि अपने पास,
सोच-विचार, जाँच कर ही आगन्तुक को दीजिए निवास ॥ १० ॥

---

१ कौआ २ भोजन ३ सुख भोगते हैं ४ जो जितने उपकार का पात्र है।

यदि कोई व्यक्ति अकारण त्याग कर चला गया और किसी प्रयोजन से भी फिर वापस आया है तो राजा उसकी नियत की परीक्षा करे और [नियत निर्दोष होने पर] उसका स्वागत करे। [अकारण त्याग कर चले जाने मात्र से रुष्ट होकर उसकी उपेक्षा करना अथवा बिना जाँच किये उसका स्वागत करना—दोनों ही नीति-सम्मत नहीं।] ॥ १० ॥

अदिहारम् (अध्याय) ५४

पॉच्चावामै (विस्मृति, प्रमादवश उपेक्षा)

इऱन्द वॆहुळियिट् ऱीदे शिऱन्द
उवहै महिळ्च्चियिऱ् शोर्वु ॥ १ ॥

क्रोध सदा घातक[1] है; सुख में किन्तु अगर छाया उन्माद,
परिचित को पहचान न पावें, तो यह घातक अधिक प्रमाद[2] ॥ १ ॥

अपने सुख के उन्माद में विस्मृति अथवा उपेक्षा का भाव क्रोध से कहीं अधिक घातक है ॥ १ ॥

पॉच्चाप्पुक् कॊल्लुम् पुहऴै; अऱिविऩै
निच्चम् निरप्पुक्कॊऩ् ऱाङ्गु ॥ २ ॥

दरिद्रता नित की, सुबुद्धि को कुण्ठित[3] कर देती जिस भाँति,
उसी भाँति 'विस्मृति[4] प्रमाद-वश' से मिट जाती सारी ख्याति ॥ २ ॥

निरन्तर की ग़रीबी जिस प्रकार बुद्धि का विनाश कर देती है, उसी प्रकार विस्मृति [उपेक्षा अथवा असावधानी] भी कीर्ति का नाश करती है ॥ २ ॥

पॉच्चाप्पार्क्कु इल्लै पुहऴ्मै अदुवुलहत्तु
ऎप्पाऩूलोर्क्कुम् तुणिवु ॥ ३ ॥

विस्मृति और उपेक्षा से है कभी न सम्भव यश-उत्कर्ष[5] ।
सकल मतों का, सब धर्मों का अचल एकमत यह निष्कर्ष ॥ ३ ॥

विस्मृति के रोगी [जो जागरूक नहीं रहते] कभी उत्कर्ष को नहीं पहुँचते। सभी धर्मों और मतों का यह स्वीकृत मत है ॥ ३ ॥

---

१ नाशकारी २ सुख-वैभव पाकर मदहोशी ३ गुठ्ठल ४ भूल जाना ५ निचोड़ ।

गुज़श्तः लखनऊ

[लेखक—मौलाना अब्दुल हलीम शरर]

फ़ैज़ाबाद की बुनियाद

इसके तस्लीम करने में शायद किसी को उज्र न होगा कि हिन्दोस्तान में मश्‌रिकी तहज़ीब[1] व तमद्दुन[2] का जो आखिरी नमूना नज़र आया वह गुज़श्तः दरबारे-अवध था। अगले दौर की यादगार और भी कई दरबार मौजूद हैं; मगर जिस दरबार पर पुरानी तहज़ीब और अगली मुआशरत[3] का खातिमः हो गया वह यही दरबार था, जो बहुत ही आखिर में क़ायम हुआ और अजीबो ग़रीब तरक्क़ियाँ दिखाकर बहुत ही जल्द फ़ना हो गया। लिहाज़ः मुन्दरिजेबाला‡ उन्वान[4] के तहत में हम उस मर्हूम दरबार के मुख्तसर हालात और उसकी खुसूसियतों को बयान करना चाहते हैं।

इसके तस्लीम करने में भी शायद किसी को उज्र न होगा कि जिस खित्तए ज़मीन पर यह पहला दरबार क़ायम हुआ उसकी वक्अत[5] और अहम्मीयत[6] हिन्दोस्तान के तमाम सूबों से बढ़ी हुई है।

पुराने चन्द्रवंशी† खानदान खुसूसन राजा रामचन्द्र जी के आला कारनामे और अदीमुन्नज़ीर[7] नामूरयान इस दरजए कमाल को पहुँची हुई हैं कि तारीख की ज़र्फ़ को तंग और महदूद देखकर इन्होंने मज़हबी तक़द्दुस[8] का जामा पहिन लिया है, और आज हिन्दोस्तान का शायद नादिर ही कोई ऐसा बदनसीब गाँव होगा जहाँ उनकी याद हर साल रामलीला के मज़हबी नाटक के ज़रीये से ताज़ा न कर ली जाती हो। लेकिन अवध के उस क़दीमतरीन[9] देवताई दरबार के हालात और अयोध्या का उस अहद का जाह[10] व जलाल[11] वाल्मीकी ने ऐसी मुअ़जिज़नुमा[12] फ़साहत के साथ दिखाया कि वह हर अक़ीदते केश[13] की लौहे-दिल पर लिख गया। लिहाज़ः हमें इसके इआ़दे[14] की

‡ ह्रस्व और दीर्घ 'ए' व 'ओ' की मात्राओं के लिए क्रमशः ॅ, ॉ, व े, ो का प्रयोग है।—जैसे दीवाने ग़ालिब, 'दीवाने लोग'। † लेखक को सूर्यवंश के स्थान पर चन्द्रवंश का धोखा हुआ है। —सम्पादक

१ शिष्टाचार २ सभ्यता ३ सामाजिक जीवन ४ उपर्युक्त शीर्षक ५ प्रतिष्ठा ६ महत्ता ७ मिसाल की कमी, अनुपमेय ८ पवित्र पद ९ प्राचीनतम १० वैभव ११ प्रताप, तेज १२ गरिमामय १३ धार्मिक विश्वास १४ दोहराना।

ज़रूरत नहीं। जिन लोगों ने अयोध्या के पुर-शुकोह[१] ज़माने की तस्वीर वाल्मीकी के लिटरेरी-मुरक़्क़अ:[२] में देखी है वह उसी मुबारक ख़ित्ते पर आज दिल-गुदाज़[३] में फ़ैज़ाबाद की तसवीर देखें। लिहाज़: हम सिलसिले वाक़िआत को उस वक़्त से शुरू करते हैं जब इस आख़िरी दरबार की बुनियाद पड़ी। जिसे फ़ना हुए कुछ ऊपर पचास साल से ज़ियाद: ज़माना नहीं हुआ।

जब नव्वाब बुरहानुलमुल्क अमीनुद्दीन ख़ाँ नेशापुरी शहनशाही दरबारे देहली की तरफ़ से सूबेदार-अवध मुक़र्रर होकर आये तो शेख़ज़ादगाने लखनऊ को मग़लूब[४] करके क़दीम मुस्तक़रे[५] अवध यानी मुहतरम व मुक़द्दस शहर अयोध्या में पहुँचे और आबादी से फ़ासले पर यानी दरिया घाघरा के किनारे एक बलन्द टीले पर अपना ख़ेमा नसब किया। चूँकि इन्तिज़ामे सूबा की महवियत[६] में इन्हें आलीशान इमारत बनाने की फ़ुरसत न थी और न अपनी सादामिज़ाजी की वजह से ऐसे नुमायशी कर्र व फ़र्र[८] का इन्हें शौक़ था, इसलिए एक ज़माने तक ख़ेमों में बसर की और जब चन्द रोज़ के बाद उन्हें बरसात में तकलीफ़ हुई तो थोड़ी दूर हटकर एक मुनासिब मुक़ाम पर अपने लिए एक छप्पर बनवाया*। फिर उसके बाद इस छप्पर के गिर्द कच्ची दीवार का एक बहुत वसीअ़ मुरब्बअ़[७] हिसार[८] खिंचवा लिया, जिसके चारों कोनों पर क़िला-बन्दी की शान से चार कच्चे बुर्ज बनवा दिये ताकि गिर्द व पेश की निगरानी की जा सके। यह अहाता इस क़दर वसीअ़ था कि इसके अन्दर मुतअ़द्दिद[९] रिसाले, पल्टनें, तोपख़ाने, अस्तबल और दीगर ज़रूरी कारख़ाने आसानी से रह सकते थे।

बुरहानुल्मुल्क को चूंकि इमारत का शौक़ न था इसलिए इनके ज़नाने और बेगमात के क़ियाम के लिए भी कच्चे ही मकानात बना लिये गये। ग़रज़ इस कच्चे बंगले में उस वक़्त का वाली अवध, जब उसे इज़लाअ़[१०] के दौरे और सफ़रहाये हुक्मरानी से फ़राग़त[११] होती, आराम व आसायश के साथ रहता था और किसी बात की शिकायत न थी; और इसका यह दारुल्-इमारत[१२] चन्द रोज़ में "बंगला" के नाम से मशहूर हो गया।

बुरहानुल्मुल्क के इन्तक़ाल के बाद जब नव्वाब सफ़दरजंग का ज़माना शुरू हुआ

---

* फ़ैज़ाबाद के यह तमाम हालात मुंशी मुहम्मद फ़ैज़बख़्श की "तारीख़ फ़रह-बख़्श" से लिए गये हैं। असल किताब हमने नहीं देखी। मगर इसका अंग्रेज़ी तर्जुमा मुतर्जुमा विलियम होई, जो सन् १८८९ ई० में गवर्नमेण्ट प्रेस इलाहाबाद में छपा है, हमारे पास मौजूद है। (ले० रशीदहसन ख़ाँ)

---

१ महत्वपूर्ण २ लेखन-कला के नमूने या सुन्दर चित्र-संग्रह ३ हृदय-द्रावक ४ पराभूत ५ सौन्दर्य, आकर्षण ६ शान शौकत, वैभव और शोभा ७ चौकोर ८ नगर का परकोटा ९ अनेक १० न्याय ११ निश्चिन्तता १२ राजधानी।

तो यह बस्ती फ़ैज़ाबाद मशहूर हुई। यह है बुनियाद शहर फ़ैज़ाबाद की। जिसने अपने बनने और बिगड़ने की सरअ़त में लखनऊ को भी मात कर दिया। अब उन दिनों उस कच्ची चारदीवारी के गिर्द अक्सर मुग़ल सरदाराने फ़ौज ने अपनी दिलचस्पी के लिए बाग़ और पुरफ़िज़ा व फ़रहतबख़्श नुज़्हतगाहें बनाईं और शहर की रौनक़ तरक़्क़ी करने लगी। उस कच्चे अहाते का एक फाटक दिल्ली दरवाज़ा कहलाता था जो मग़रिब की तरफ़ था। उसके बाहर दीवान आत्माराम के बेटों ने एक शानदार बाज़ार बनवाया और इसीके सिलसिले में रहने के लिए मकानात भी तामीर कराये। इसी तरह इस्माईल ख़ाँ रिसालदार ने भी एक बाज़ार बनवाया और चारदीवारी के अन्दर ख़्वाजःसराओं[1] और मुख़्तलिफ़ फ़ौजी लोगों के बहुत से मकानात भी तैयार हो गये।

नव्वाब सफ़दरजंग की वफ़ात के बाद इस नई बस्ती पर चन्द रोज़ के लिए तबाही बरस गई, जिसकी वजह से इतने दिनों में जो कुछ बना था ज़माने ने बिगाड़कर रख दिया। इसलिए कि उनके फ़र्ज़न्द नव्वाब शुजाउद्दौलः ने अपनी सकूनत के लिए लखनऊ पसंद किया था और वहीं रहते थे। गो साल में दो एक रातें अपने बापदादा के इस क़दीम मस्कन[2] में जरूर बसर कर लिया करते। यहाँ तक कि सन् १७६४ ई० में इन्हें बक्सर की लड़ाई में अंग्रेज़ों से शिकस्त हुई। उस वक़्त वह कमाल बे-सरो-सामानी से भागते हुए फ़ैज़ाबाद में आये और वहाँ के क़िले में जो कुछ साज़ो सामान मौजूद पाया लेकर रातों रात चल खड़े हुए और लखनऊ पहुँचे। यहाँ भी एक ही रात क़ियाम करके जो कुछ हाँथ आया लिया और बरेली की राह ली ताकि अफ़ाग़ने रुहेलखंड के पास जाकर पनाह लें। लड़ाई के नौ महीने बाद अंग्रेज़ों से सुलह हो गई, जिसकी रू से शुजाउद्दौलः के ज़िम्मे वाजिब था कि महासिले मुल्क[3] में से पँचअन्नी (पाँच आना) अंग्रेज़ों को अदा किया करें।

सुलह होने से पहले इस सफ़र में इत्तिफ़ाक़न् शुजाउद्दौलः का गुज़र शहर फ़र्रुख़ाबाद में भी हुआ था, जहाँ अहमद ख़ाँ बंगश से मुलाक़ात हुई, जो उस ज़माने के पुराने तजुर्बःकार शुजाओं[4] में शुमार किये जाते थे। उन्होंने शुजाउद्दौलः को मश्वरः[5] दिया कि अबकी जो तुम जाकर अनाने-हुकूमत हाथ में लेना तो मेरी दो बातों को न भूलना। एक तो यह कि मुग़लों का कभी एतबार न करना, बल्कि अपने दीगर मुलाज़िमों और ख़्वाजःसराओं से काम लो। दूसरे यह कि लखनऊ का रहना छोड़ दो और फ़ैज़ाबाद ही को अपना दारुल्-हुकूमत बनाओ।

यह बातें शुजाउद्दौलः के दिल पर बैठ गईं और अंग्रेज़ों से मुआहिदा होने के बाद

१ महलों में रहनेवाले ज़नाने रखवाले व सेवक २ प्राचीन निवास-स्थान ३ मालगुज़ारी ४ बहादुरों ५ सलाह, परामर्श।

सन् १७७९ ई० में जो इन्होंने अपनी क़लम-रौ[१] की राह ली तो सीधे फ़ैज़ाबाद आये और इसी को अपना दारुल्-हुकूमत क़रार दे दिया। अब यहाँ इन्होंने नई फ़ौज भरती करना शुरू की, नये रिसाले मुरत्तब[२] करने लगे और नई इमारतों की बुनियाद डाली। पुराने हिसार[३] को एक मज़बूत शहर-पनाह की शान से अज़ सरे-नौ[४] तामीर कराया, जो अब क़िला कहलाता था। मुग़लों के जो मकानात अन्दर वाक़िअ थे ढा दिये और अपने अक्सर ख़ानगी मुलाज़िमों को हुक्म दिया कि शहर-पनाह के बाहर मकान बनवायें। उस हिसार के गिर्दा-गिर्द हर तरफ़ दो-दो मील का मैदान छोड़ दिया गया जिसके गिर्द गहरी ख़न्दक़ खोदकर क़िलाबन्दी की वज़अ[५] से दुरुस्त की गई और मुलाज़िमीने सरकार और अफ़सराने फ़ौज को इजाज़त हुई कि अपनी हैसियत और हालात के मुनासिब क़तआते ज़मीन[६] लेकर इसी मैदान में मकान बनायें। जैसे ही यह ख़बर मशहूर हुई कि शुजाउद्दौलः ने फ़ैज़ाबाद को अपना मुस्तक़र[७] क़रार दिया है, एक दुनिया का रुख़ इधर फिर गया। हज़ारहा ख़िलक़त आ-आकर आबाद होना शुरू हुई। शाहजहाँबाद में यह हालत थी कि जिसे देखिए, फ़ैज़ाबाद जाने के लिए तैयार है। चुनाँचिः देहली के अक्सर बाकमालों ने वतन को ख़ैर-बाद कही और पूरब का रुख़ किया। शब-व-रोज़ लोगों के आने का ताँता बँधा रहता था और क़ाफ़िले पर क़ाफ़िले चले आते थे, जो आ-आकर यहाँ बसते और फ़ैज़ाबाद के सवाद[८] में खपते जाते थे। चन्द ही रोज़ के अन्दर हर क़ौम व मिल्लत के ख़ुशबाश[९], अहले क़लम, अहले-सैफ़, ताजिर, सन्नाअ[१०] और हर तबक़े और हर दरजे के लोग यहाँ जमा हो गये; और जो आता, आते ही इस फ़िक्र में पड़ जाता कि कोई क़तअे ज़मीन हासिल करके मकान बना ले।

चन्द ही साल के अन्दर उस पहले हिसार के अलावः दो और फ़सीलें[११] तामीर हो गईं। एक जो पहले मुरब्बअ[१२] के जनूबी पहलू से मिली हुई थी, उसके रक़बे का तवल[१३] व अर्ज़[१४] दो-दो मील का था; और दूसरा हिसार, एक मील के फैलाव में था जो क़िले और बेरूनी फ़सील के दरमियान था। उसी ज़माने में त्रिपोलिया और चौक-बाज़ार तामीर हुए। जिनके सड़क क़िले के जनूबी[१५] फाटक से शुरू होकर सड़क इलाहाबाद के नुक्कड़ तक चली गई थी और इतनी कुशादः थी कि बराबर दस छकड़े आसानी से गुज़र सकते थे। फ़सील शहर का आसार[१६], ज़मीन के पास चाहे जितना हो, दरमियान में दस गज़ से कम न था जो ऊपर पहुँचकर पाँच गज़ रह गया था। इस फ़सील पर क़ायदा और बेक़ायदा दोनों तरह की फ़ौजों के दस्ते रात भर रौंद फिरा

---

१ राज्य २ क्रमबद्ध ३ परकोटा ४ नये सिरे से ५ बनावट ६ निवास-योग्य स्थान ७ ठिकाना ८ नगर के आसपास के स्थान ९ मज़े की ज़िन्दगी बसर करनेवाले १० शिल्पी, कारीगर ११ परकोटे १२ चौकोर १३ लम्बाई १४ चौड़ाई १५ दक्षिणी १६ इमारत की नींव।

करते और जा-बजा पहरा देते। बाक़ायदा सिपाहियों की वर्दी लाल थी और बेक़ायदा सिपाहियों की वर्दी सियाह। इन्हीं सिपाहियों की ज़रूरत से बरसात में जा-ब-जा छप्पर डाल दिये जाते ; मगर बरसात के ख़त्म होते ही, आग लगने के अन्देशे से, वह लाज़िमी तौर पर उतार डाले जाते। चुनाँचिः सिर्फ़ फ़सील की दीवारों के लिए हर साल तक़रीबन् एक लाख छप्पर छाये और चार महीने बाद नोचकर फेंक दिये जाते।

हवाली[1] शहर में दो मुर्ग़ज़ार[2], शिकारगाह क़रार दिये गये थे, जिनमें से एक मग़रिब की जानिब गुर्जीबेगख़ाँ की मस्जिद से गुप्तारघाट तक चला गया था। जो एक मुतअद्दिब[3] मसाफ़त[4] है। इसके दोनों तरफ़ कच्ची दीवारें थीं और तीसरी तरफ़ घाघरा वाक़िअ् हुई थी। इसमें हिरन, चीतल, बारहसिंघे, नीलगायें वग़ैरः शिकार के जानवर कस्रत से छोड़े गये थे, जो निहायत आज़ादी से छूटे-छूटे फिरते और भड़कते ही चौकड़ियाँ भरने लगते। दूसरी शिकारगाह शहर से मशरिक़ की तरफ मौज़ा जिनोरा और छावनी गोसाईं से दरिया के किनारे तक थी, जिसका फैलाव छै मील का था। इस रक़बे में ग्यारह मौज़े और इनकी आराज़ी आ गई थी। मगर यह शिकारगाह नातमाम[5] ही रही और इसकी नौबत न आने पाई कि इसमें वहशी जानवर छोड़े जायें।

ख़ास शहर के हलक़े के अन्दर तीन ऐसे नुज़्हतबख़्श बाग़ थे जो इस क़ाबिल थे कि उमरा और शाहज़ादे आकर इनमें सैर करें और इनकी बहार और शादाबी से लुत्फ़ उठायें। एक अंगूरीबाग़ जो क़िले के अन्दर वाक़िअ् था और उसके रक़बे के चौथाई हिस्से पर हावी था। दूसरा मोतीबाग़, जो ऐन चौक के अन्दर वाक़िअ् था। तीसरा लालबाग़, जो सब बाग़ों से ज़ियादः वसीअ् था। इसमें निहायत ही नफ़ासत[6] से चमनबन्दी की गई थी और हर तरह के नाज़ुक व नज़रफ़रेब फूल क़रीने से लगाये गये थे। सारे सूबे में इसकी शुहरत थी और दूर-दूर के लोगों को तमन्ना थी कि कोई ख़ुशनसीबी की शाम इस रूह-अफ़ज़ा बाग़ में बसर करें। शहर के नौजवान शुरफ़ा[7] के ग़ोल रोज़ सिह-पहर[8] को इसमें गश्त लगाते और दिल बहलाते नज़र आते। इस बाग़ की जाँ-फ़िज़ाई[9] की शुहरत यहाँ तक थी कि शहनशाहे-देहली शाह आलम बादशाह जब इलाहाबाद से पल्टे तो इसी बाग़ की सैर के शौक़ में फ़ैज़ाबाद होते हुए देहली गये और कुछ ज़माने तक इसी के अन्दर इनका क़ियाम रहा। इन तीन बाग़ों के अलावा आसफ़बाग़ और बलन्दबाग़ भी नवाहे[10] शहर में लखनऊ के रास्ते पर वाक़िअ् थे।

नव्वाब शुजाउद्दौलः बहादुर को शहर की दुरुस्ती का इस क़दर शौक़ था कि हर सुबह व शाम सवार होकर सड़कों और मकानों का मुआयना करते। मज़दूर, फड़वे

---

१ आसपास के स्थान २ चमन जहाँ चिड़ियाँ स्वच्छंद रहती हैं ३ अच्छी ख़ासी ४ दूरी, अन्तर ५ अपूर्ण ६ उत्तमता ७ कुलीन मनुष्य ८ तीसरे पहर ९ अमृत्व १० आसपास।

और कुदालें लिए हुए साथ होते। जहाँ कहीं किसी मकान को टेढ़ा और अपनी हद से बढ़ा हुआ पाते या किसी दुकानदार को देखते कि उसने सड़क की ज़मीन बालिश्त भर भी दबा ली है, फ़ौरन् उसे खुदवाकर बराबर और सीधा करा देते।

फ़ौज की इस्लाह की तरफ़ भी शुजाउद्दौलः को ख़ास तवज्जुः थी। रिसाले के आला सरदार नव्वाब मुर्तज़ा ख़ाँ बरेज और हिम्मतबहादुर और उमरावगीर नाम दो गोसाईं थे। इनके मातहत इतने सवार थे कि इन तीन के अलावा और जितने छोटे-छोटे जमादार थे सबकी फ़ौज की मजमूई तादाद से, इनमें से हर एक की जमैयत ज़ियादः थी, दीगर सरदाराने फ़ौज अहसान कम्बोही, गुर्जी बेग ख़ाँ, गोपालराव मरहठा, मीर जुमला के दामाद नव्वाब जमालुद्दीन ख़ाँ, मुज़फ़्फ़र-उद्दौलः तहव्वरजंग, बख़्शी अबुल् बरकात ख़ाँ साकिन काकोरी और मुहम्मद मुअ़ज़्ज़िद्-दीन ख़ाँ लखनऊ के एक शेख़ज़ादे थे। इनमें से कोई न था जिसके मातहत हज़ार पाँच सौ सिपाहियों का गरोह न हो। मा सिवा इनके ख़्वाजःसरा और वह नौ उम्र ख़्वाजःसरा जो उनके ज़ेरे निगरानी तर्बियत पाते। चेले और शागिर्दपेशा थे। बसन्त अली ख़ाँ ख़्वाजःसरा के मातहत दो डिवीज़न फ़ौज यानी चौदह हज़ार बाक़ायदा सिपाह थी जिसकी वर्दी सुर्ख़ थी। एक दूसरा बसन्त ख़्वाजःसरा था, जिसके ज़ेरे कमान एक हज़ार बेक़ायदा नैज़ःबाज सवार और एक पल्टन थी। अनवर अली ख़ाँ ख़्वाजःसरा की अफ़्सरी में पाँच सौ सवार और एक पल्टन थी जिनकी वर्दियाँ सियाह थीं। महबूब अली ख़ाँ ख़्वाजःसरा के ज़ेरे-अलम पाँच सौ सवार थे और चार पल्टनें थीं। इतनी ही फ़ौज लताफ़त अली ख़ाँ के मातहत थी। रघुनाथसिंह और परशादसिंह में से हर एक के ज़ेरे कमान तीन-तीन सौ सवार और चार-चार पल्टनें थीं। इसी तरह मक़बूल अली ख़ाँ अव्वल, व दोम यूसुफ़ अली ख़ाँ के हमराह पाँच-पाँच सौ मुग़ल सवारों और पैदलों की जमैयत थी और तोपख़ाना बेहद व बेहिसाब था।

लिहाज़ा कुल फ़ौज जो शुजाउद्दौलः के क़ब्ज़े में थी और फ़ैज़ाबाद में मौजूद रहा करती थी उसकी मजमूई तादाद यह थी —सुर्ख़ वर्दी वाले तीस हज़ार बाक़ायदा और सियाह वर्दी वाले चालीस हज़ार बेक़ायदा प्यादे। इनके अफ़सरे आला यानी सिपहसालारे-आज़म सय्यद अहमद थे जो "बाँसी वाला" के लक़ब से मशहूर थे। जल्दी भरने और फ़ायर करने के एतबार से इनकी तोड़ेदार बन्दूक़ों के मुक़ाबिले में अंग्रेज़ी फ़ौज की बन्दूक़ें कोई वक़्अत न रखती थीं।

इस जमैयत के अलावा शुजाउद्दौलः के पास बाईस हज़ार हरकारे और मुख़बिर थे, जो हर सातवें रोज़ पूना से और हर पन्द्रहवें दिन काबुल से ख़बरें लाते। दरबार में हमेशा बिलादे-दूरदराज़ के हुक्मरानों के नायब मौजूद रहा करते। एक नायब मरहठों का था; एक निज़ाम अली ख़ाँ फ़रमाँ-रवा दकन (दक्षिण) का। एक

ज़ाबितः ख़ाँ का और एक नव्वाब ज़ुल्फ़िक़ार-उद्दौलः नजफ़ ख़ाँ का, जिनके साथ उनके दफ़्तर और सिपाही भी थे। इन लोगों के अलावः और भी बहुत से फ़ौजी अफ़सर अपनी जमैयतों के साथ यहाँ मौजूद रहते। जैसे मीर नईम ख़ाँ जिनके झंडे के नीचे साबितख़ानी, बुन्देलखण्डी, चन्देला और मेवाती सिपाहियों का हुजूम था।

मुहम्मद बशीर ख़ाँ क़िलेदार थे। शहर की फ़सीलों और फाटकों पर उन्हीं के सवार और प्यादे फैले रहते और क़िले के अन्दर ही इनके रहने और दफ़्तर के लिए उम्दः मकानात और उनके सिपाहियों की बारकें बनी हुई थीं। जब बेरूनी दीवारों में भी जगह बाक़ी न रही तो सय्यद जमालउद्दीन ख़ाँ और गोपालराव मरहठा ने बाहर निकलकर मौज़ा नवराही के पास सुकूनत इख़्तियार की और अपने मकानात और कैम्प वहाँ बनाए और इसी जगह की तंगी की वजह से नव्वाब मुर्तज़ा ख़ाँ बिरेज, मीर अहमद बाँसी वाला, मीर अबुल्बरकात और शेख़ अहसान अयोध्या और फ़ैज़ाबाद के दरमियान ख़ेमों में रहते थे।

आदमियों की कस्रत और सिपाहियों के हुजूम से शहर के अन्दर ख़ुसूसन् चौक में इस क़दर भीड़ लगी रहती कि गुज़रना दुश्वार था; और ग़ैर मुमकिन था कि कोई शख़्स बग़ैर अटके हुए सीधा चला जाये। फ़ैज़ाबाद न था, इन्सानों का जंगल था। बाज़ार में देखिए तो मुल्कों-मुल्कों का माल ढेर था और यह ख़बर सुनकर कि फ़ैज़ाबाद में नफ़ीसमिज़ाज रईसों और शौक़ीन अमीरों का मुन्तख़ब मजमा है, हर तरफ़ से ताजिरों के क़ाफ़िले लदे-फँदे चले आते थे; और चूँकि चाहे कैसा ही क़ीमती माल हो हाथों-हाथ बिक जाता, अच्छी से अच्छी चीज़ों के आने का सिलसिला बँध गया था। जब देखिए ईरानी, काबुली, चीनी, फ़िरंगी सौदागर निहायत गिराँक़ीमत और भारी माल लिए हुए मौजूद रहते और जो-जो नफ़ा उठाते, हविस बढ़ती और ज़ियादः जुस्तजू व जाँ-फ़िशानी से नया माल ले आते। मसयूज़ान तेल, मसयूसोन सोन, और मसयूपैद-रोज़ वग़ैरः के ऐसे दो सौ फ़ान्सीसी जो यहाँ इक़ामत-गुज़ीं हो गये थे[१], सरकार में मुलाज़िम थे और शुजाउद्दौलः की सल्तनत से रवाबितें[२] इत्तहाद[३] रखते थे। जो सिपाहियों को फ़ौजी तालीम देते और तोपें, बन्दूकें और दीगर अस्लिहए[४] जंग अपने इहतिमाम[५] में तैयार कराते।

मुंशी फ़ैज़बख़्श मुसन्नफ़े-तारीख़े फ़रहबख़्श, जिनकी इनायत से हमें यह वाक़िआत मालूम हुए हैं, ख़ुद ज़माने में मौजूद थे और उन्होंने जो कुछ लिखा है अपने मुशाहिदे से लिखा है। वह कहते हैं कि मैं जब पहले पहल घर छोड़कर फ़ैज़ाबाद में गया हूँ मुमताज़ नगर ही तक पहुँचा था जो शहर के मग़रिबी फाटक से चार मील के फ़ासले

---

१ निवासी बन गये थे २ मेल-मिलाप ३ मित्रता ४ अस्त्र-शस्त्र
५ निरीक्षण।

पर है, मैंने देखा कि एक दरख़्त के नीचे अनवाअ़[१] व अक़साम[२] की मिठाइयाँ, गरमा-गरम खाना, कबाब, सालन, रोटियाँ और पराठे वग़ैरः पक रहे हैं। सबीलें रक्खी हुई हैं। नान ख़ताइयाँ, मुख़्तलिफ़ क़िस्म के शरबत और फ़ालूदः भी बिक रहा है और सदहा आदमी ख़रीदारी के लिए उन दुकानों पर गिरे पड़ते हैं। मुझे ख़याल गुज़रा कि मैं शहर के अन्दर दाख़िल हो गया और ख़ास चौक में हूँ। मगर मुतहैयर[३] था कि अभी तक शहर का फाटक तो आया ही नहीं, मैं अन्दर कैसे पहुँच गया ? लोगों से पूछा तो एक राहगीर ने कहा—जनाब ! शहर का फाटक यहाँ से चार मील है, आप किस ख़याल में हैं !

इस जवाब पर हैरत करता हुआ, मैं शहर में दाख़िल हुआ तो अजीब चहल-पहल नज़र आई। रंगीनियाँ थीं और दिलचस्पियाँ। जिधर देखता हूँ नाच हो रहा है, मदारी तमाशा कर रहे हैं और लोग तरह-तरह के सैर-तमाशों में मस्रूफ़ हैं। मैं यह रौनक़ और शोरो-हंगामा देखकर मबहूवत[४] रह गया। सुबह से शाम तक और शाम से सुबह तक कोई वक़्त न होता जब फ़ौजों और पल्टनों के नक़्क़ारों की आवाज़ न सुनी जाती हो। पहरों और घड़ियों के बताने के लिए बार-बार नौबत बजती और घड़ियालों पर मोगरियाँ पड़तीं, जिनके शोरो-ग़ुल से कान उड़े जाते। सड़कों पर देखिए तो हरदम घोड़ों, हाथियों, ऊँटों, खच्चरों, शिकारी कुत्तों, गाय-भैंसों, बैलों, छकड़ों और तोपों के गुज़रने का सिलसिला जारी रहता, जिनका शुमार हिसाब और अन्दाज़े से बाहर था। रास्ता चलना दुश्वार था।

एक अजीब रौनक़ और तम्कनत[५] का शहर नज़र आया जिसमें वज़अ़दाराने देहली में से ख़ुशपोशाक और वज़अ़दार शरीफ़ज़ादे, हाज़िक़[६]-अतिब्बाए-यूनानी[७], आला दरजे के मर्दाने और ज़नाने तायफ़े[८], हर शहर और हर मुक़ाम के मशहूर और बाकमाल गवैये, सरकार में मुलाज़िम थे, और बड़ी-बड़ी तनख़्वाहें पाकर ऐश व फ़ारिग़-उल्बाली[९] की ज़िन्दगी बसर करते। अदना व आला सब की जेबें रुपयों, अशर्फ़ियों से भरी हुई थीं और ऐसा नज़र आता कि जैसे यहाँ कभी किसी ने इफ़्लास[१०] व इहतियाज[११] को ख़्वाब में भी नहीं देखा है। नव्वाब वज़ीर (शुजाउद्दौलः बहादुर) शहर की सरसब्ज़ी व रौनक़ और रियाया की मुरफ़्फ़ःउल्-हाली[१२] में हमःतन[१३] मस्रूफ़ हैं और मालूम होता था कि चन्द ही रोज में फ़ैज़ाबाद, देहली की हमसरी[१४] का दावा करेगा।

---

१ प्रकार-प्रकार २ भाँति-भाँति ३ चकित ४ भयभीत ५ शानो-शौकत ६ प्रवीण, दक्ष ७ हकीम ८ वेश्याओं की जमातें ९ सब प्रकार से निश्चिन्त और सुखी १० दरिद्रता, ग़रीबी ११ अभाव १२ अमन-चैन १३ तन्मय होकर १४ टक्कर का।

अहादीस

१८९ ज़ुल्म क़ियामत[१] के दिन तारीकी[२] होगी

हज़्रत ज़ाबिर (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया, ज़ुल्म से डरो, ज़ुल्म क़ियामत के दिन तारीकियाँ होंगी, और बुख़्ल व हिर्स से बचो। बुख़्ल[३] व हिर्स[४] ने अगली उम्मतों को हलाक किया। उसी ने उनको इस बात पर आमादः किया कि अपने ख़ून बहाये और हराम को जाइज़ किया। [मुस्लिम]

१९० क़ियामत में हक़ वाले को हक़ दिलाया जायेगा

हज़्रत अबू हुरैरः (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया, क़ियामत में हक़ वालों को हक़ दिलाये जायेंगे; हत्ता कि मुन्डी बकरी को सींग वाली बकरी से हक़ दिलाया जायेगा। [मुस्लिम]

१९१ मुसलमान के ख़ून और माल की हुर्मत

हज़्रत इब्नि उमर (र०) से रिवायत है कि हम लोग हज्जतुल्-वदाअ़ के मुतअल्लिक़ गुफ़्तगू कर रहे थे और हम नहीं जानते थे कि हज्जतुल्वदाअ़ क्या है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तशरीफ़ रखते थे। आपने अल्लाह की तारीफ़ की और उसकी सना[५] बयान की। फिर मसीह दज्जाल का ज़िक्र किया और उसको तूल दिया। आपने फ़रमाया, अल्लाह ने जिस नबी को भेजा उसने अपनी उम्मत को डराया। नूह (अ़०) ने और उनके बाद आने वाले नबियों ने डराया। आपने फ़रमाया दज्जाल निकलेगा। अगर उसकी कोई हालत मख़्फ़ी[६] रहे तो यह बात तो तुम पर ज़ाहिर ही हो जायेगी कि तुम्हारा रब काना नहीं है। और वह सीधी आँख का काना है। गोया उसकी आँख एक तैरता हुआ अंगूर है। और सुन लो अल्लाह ने तुम पर, तुम्हारे ख़ून, तुम्हारे माल, तुम्हारे इस दिन की हुर्मत की तरह‡ तुम पर हराम किये हैं। सुन लो, क्या मैंने पहुँचा दिया? लोगों ने कहा हाँ। फ़रमाया, ऐ अल्लाह! गवाह रह, तीन मर्तबा फ़रमाया और फ़रमाया, तुम्हारी ख़राबी हो या यह फ़रमाया कि तुम पर रहम करे। देखो मेरे बाद काफ़िर न हो जाना कि तुममें एक दूसरे की गर्दन मारे। [बुख़ारी]

---

१ महाप्रलय २ अँधेरा ३ कंजूसी ४ लिप्सा, हवस ५ स्तुति, प्रशंसा ६ छिपी।

---

‡ यह क़ुर्बानी का दिन ज़िल्हिज्जः की १० तारीख़ थी।

१६२ ज़मीन के ग़ासिब[१] को ज़मीन का तौक़

हज़्रत आयशः (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया, जिसने बालिश्त भर ज़मीन ग़सब की तो क़ियामत में उसको सात ज़मीनों का तौक़ पहनाया जायेगा।

[बुख़ारी-मुस्लिम]

१६३ अल्लाह की गिरिफ़्त[२]

हज़्रत अबू मूसा (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सलल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया अल्लाह ताला ज़ालिमों को ढील देता रहता है। फिर जब उनको पकड़ता है तो नहीं छोड़ता। फिर आपने यह आयत पढ़ी।

व कज़ालिक अख़्ज़ु रब्बिक अिज़ा अख़ज़ल्क़ुरा व हिय ज़ालिमतुन् ॰ अिन्न अख़्ज़हू अलीमुन् शदीदुन्।

इसी तरह तेरे रब की पकड़ है जब किसी बस्ती वालों को पकड़ा इस हाल में कि वह ज़ालिम थे। बेशक उसकी पकड़ दर्दनाक और सख़्त है। [बुख़ारी-मुस्लिम]

[सू० हूद, रु० ६ आ० १०२]

१६४ मज़्लूम[३] की बद्दुआ

हज़्रत मुआज़ (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मुझे भेजा और फ़रमाया कि एक क़ौम तुम से मिलेगी जो अहले किताब है, तुम इनको इस्लाम की दावत देना। जब वह इस्लाम क़ुबूल कर लें और गवाही दें कि सिवा ख़ुदा के कोई माबूद[४] नहीं और मैं ख़ुदा का रसूल हूँ तो उनको बताना कि तुम पर दिन और रात में पाँच वक़्त की नमाज़ें फ़र्ज़ हैं। जब उसको भी मान लें तो कहना तुम पर सदक़ः फ़र्ज़ है। मालदारों से लिया जायेगा और ग़रीबों को दिया जायेगा। अगर वह इसको मान लें तो तुम उनके अच्छे मालों§ से बचना, मज़्लूम की बद्दुआ से बचना कि उसके और अल्लाह के दर्मियान कोई परदः नहीं। [मुस्लिम]

---

१ ज़बर्दस्ती दख़ल कर लेने वाला २ पकड़ ३ जिन पर ज़ुल्म हुआ हो ४ पूज्य।

---

§ यानी ज़कात के लिए ढूँढ़ कर अच्छा माल न लेना।

१९८ ग़ासिब की सज़ा

हज़्रत अब्दुर्रहमान (र०) बिन सअ़द कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक शख़्स को सदक़ः पर आ़मिल बनाया। लोग उसको इब्नुललितिबिय्यः कहते थे। वह आया और कहा यह सदक़ः का माल है। और यह हद्यः है जो मुझे दिया गया है। आप मिम्बर पर खड़े हो गये। अल्लाह की हम्द व सना के बाद फ़रमाया, मैंने एक शख़्स को ऐसे काम पर आ़मिल बनाया जिसको अल्लाह ने मेरे सिपुर्द किया था। वह आया और कहा यह तुम्हारा है और यह हदयः है जो मुझे दिया गया है। अगर वह अपने घर में बैठा होता और उसके बाद हदयः आता तो मैं उसको सच्चा समझता★। ख़ुदा की क़सम तुम में से कोई अगर किसी चीज़ को उसके हक़ से सिवा लेगा तो क़ियामत में अल्लाह ताला से इस हालत पर मिलेगा कि वह चीज़ उस पर लदी होगी। और मैं किसी को इस हाल पर न देखूँ कि अल्लाह ताला से मिले एक ऊँट चीख़ता हुआ लादे हुए हो या एक गाये चीख़ती हुई, एक बकरी चीख़ती हुई। फिर आपने अपने हाथ बलन्द किये, यहाँ तक कि आपकी बग़लों की सफ़ेदी दिखाई देने लगी। फ़रमाया, ऐ अल्लाह, गवाह रह मैंने पहुँचा दिया। [बुख़ारी-मुस्लिम]

१९६ माल के बदले में नेकी

हज़्रत अबू हुरैरः (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया, जिसने अपने भाई का माल ग़सब[1] किया (भाई से मुराद मुसलमान हैं) उसकी ज़मीन हो या कोई चीज़, तो आज के दिन उसको मुआ़फ़ करा ले। इससे क़ब्ल कि न उसके पास कोई दीनार होगा न दरहम। अगर उसके अच्छे अ़मल हुए तो जितना माल उसने ग़सब किया उतनी नेकियाँ लेकर मज़्लूम को दी जायेंगी अगर नेकियाँ नहीं हैं तो माल वाले की बुराइयाँ ग़ासिब[2] पर लाद दी जायेंगी। [बुख़ारी]

१९७ मुसलमान की तारीफ़

हज़्रत अब्दुल्लाह बिन अम्र (र०) बिन अलआ़स से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया, मुसलमान वह है जिसकी ज़बान और हाथ से मुसलमान महफ़ूज़ रहें। और मुहाजिर

१ हड़प लिया २ माल हड़पने वाला।

★ यानी उस मन्सब पर होने की वजह से उसको यह हदयः मिला तो यह बैतुल-माल ही का हक़ है या रिश्वत है।

वह है कि वह काम छोड़ दे जिससे अल्लाह ताला ने मना फ़रमाया है। [बुख़ारी-मुस्लिम]

१६८ चोरी का माल

हज़्रत अब्दुल्लाह बिन अम्र (र०) बिन अलआ़स से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सामान पर एक आदमी मामूर[१] था। लोग उसको करकरह कहते थे। वह मर गया तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया, वह दोज़ख़ में है। लोग उसको देखने गये तो एक अ़बा[२] पाई जिसको उसने चुराया था। [बुख़ारी]

१६६ हज्जतुल् वदाअ़ की तक़रीर

हज़्रत नुफ़ैअ़ बिन अल्हारिस (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया, ज़माना उसी सूरत में आ गया है जैसा कि वह उस दिन था कि जिस दिन आसमान व ज़मीन पैदा किये गये हैं§। और साल बारह महीने का होता है, इसमें चार महीने हुर्मत के हैं। ज़िल्क़अ़दः, ज़िल्हिज्जः, मुहर्रम और रजब। क़बीलए मुज़र† का जो जुमाद और शाबान के दर्मियान है। फिर आपने फ़रमाया, यह कौन सा महीना है। हमने कहा अल्लाह और उसके रसूल ज़ियादः जानते हैं। आप ख़ामोश हो गये, यहाँ तक कि हमें गुमान हुआ कि आप इसका दूसरा नाम लेंगे। आपने फ़रमाया, क्या ज़िल्हिज्जः नहीं है। हमने कहा, हाँ। आपने फ़रमाया, यह कौन सा शहर है। हमने कहा, अल्लाह और उसके रसूल ज़ियादः जानते हैं। फिर आप ख़ामोश हो गये। हमको ख़याल हुआ कि आप इसका दूसरा नाम लेंगे। आपने फ़रमाया, क्या यह मक्का नहीं है? हमने

---

१ नियुक्त, तैनात २ चोग़ा, लम्बा कोट।

---

§ अरब के लोगों ने अपनी मस्लिहतों और बेईमानी से अपनी जंतरी में बड़ा रद्दोबदल कर दिया था। जब उनका लड़ने का जी चाहता और मसलन रजब का महीना होता जिसमें लड़ाई मौक़ूफ़ होना चाहिए, तो कह देते कि अबकी रजब फ़लाँ महीने के बाद आयेगा। इस तरह महीना हटते-हटते कहीं से कहीं पहुँच गया था; इसी का नाम "नसी" है। इन्नमन्नसीउ ज़ियादतुन् फ़िल्कुफ़्र। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसे मन्सूख़ कर दिया। और अगली सी तर्तीब और शक्ल क़ायम कर दी।

† रजब को यह क़बीला बहुत मानता था और उन्हीं की तरफ़ अक्सर निस्बत होती है।

कहा हाँ। आपने फ़रमाया यह कौन सा दिन है। हमने कहा अल्लाह और उसके रसूल ज़ियादः जानते हैं। आपने फ़रमाया, क्या यह क़ुरबानी का दिन नहीं है। हमने कहा हाँ✻। आपने फ़रमाया, तुम्हारे ख़ून, तुम्हारे माल और तुम्हारी आबरू तुम पर हराम है तुम्हारे उस दिन की हुर्मत की तरह इस महीने में और इस शहर में, और अन्क़रीब तुम अपने रब से मिलोगे। और वह तुमसे तुम्हारे आमाल के मुतअ़ल्लिक़ सवाल करेगा। सुन लो मेरे बाद तुम काफ़िर न हो जाना कि तुम में का वाज़ बाज़ की गर्दन मारे। सुन लो तुम को चाहिए कि मौजूद ग़ायब को ख़बर पहुँचा दे शायद वह ज़ियादः याद रखने वाला हो इससे। फिर फ़रमाया, सुन लो क्या मैंने पहुँचा दिया। हमने कहा हाँ। आपने फ़रमाया, ऐ अल्लाह, गवाह रह। [बुख़ारी-मुस्लिम]

१२/२०० मुसलमान का हक़ मार लेने की सज़ा

हज़्रत अयास बिन सअ़लबः (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया, जिसने किसी मुसलमान का हक़ मार लिया तो अल्लाह ने उस पर दोज़ख़ वाजिब की और जन्नत हराम की। एक आदमी ने कहा या रसूलल्लाह! अगर मामूली चीज़ हो। आपने फ़रमाया अगरचि एक पीलू की लकड़ी हो। [मुस्लिम]

१३/२०१ आ़मिल की ख़ियानत

हज़्रत अ़दी बिन अ़मरह (र०) से रिवायत है कि मैंने नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को फ़रमाते सुना है कि किसी को हम किसी काम पर आ़मिल[1] बनायें और वह हम से सुई के बराबर भी कोई चीज़ छुपा लेगा तो वह चोरी है। क़ियामत के दिन उसी के साथ वह आयेगा। अन्सार के एक काले आदमी ने कहा या रसूलल्लाह! (अ़दी कहते हैं गोया मैं उन्हीं को देख रहा हूँ) आप अपना काम वापस ले लीजिए†। आपने फ़रमाया तुमको क्या हुआ? कहा मैंने सुना है आप इस-इस तरह फ़रमाते हैं। आपने फ़रमाया, हाँ मैं अब भी कहता हूँ कि जिसको मैं किसी काम पर आ़मिल बनाऊँ तो थोड़ा बहुत जो कुछ हो वह हाज़िर करे। जो उसको दिया जाये ले ले और जिससे रोका जाये तो उससे बाज़ रहे। [मुस्लिम]

✻ यह बात दिलनशीन करने का बड़ा हकीमाना अन्दाज़ था।

† यानी मुझे डर पैदा हो गया है कि शायद मैं उसका हक़ न अदा कर सकूँ। यह उनकी इहतियात और खौफ़े ख़ुदा की बात थी।

---

१ शासक, हुक्मराँ।

१४/२०२ मालें ग़नीमत में चोरी

हज़्रत उमर (र०) से रिवायत है कि ख़ैबर के दिन सहाबः ने मक़्तूलों[1] का ज़िक्र किया। कहा, फलाँ शहीद और फ़लाँ शहीद। फिर एक मक़्तूल का नाम लिया और कहा फ़लाँ भी शहीद। आपने फ़रमाया, हरगिज़ नहीं, उसको मैंने आग में देखा है चादर या अबा के बारे में जिसको उसने चुराया था। [मुस्लिम]

१५/२०३ शहादत से भी क़र्ज़ मुआफ़ नहीं होता

हज़्रत अबू क़तादह (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम खड़े फ़रमा रहे थे कि अल्लाह के रास्ते में जिहाद और अल्लाह पर ईमान अफ़्ज़ल आमाल हैं। एक आदमी खड़े हो गये कहा या रसूलल्लाह, आप क्या फ़रमाते हैं। अगर मैं क़त्ल किया जाऊँ तो क्या मुझसे मेरी ख़ताएँ दूर हो जायेंगी। आपने फ़रमाया हाँ। अगर तुम अल्लाह के रास्ते में अज्र की नीयत से सब्र करो। आगे बढ़ो और पीठ न मोड़ो। फिर आपने फ़रमाया, तुमने क्या कहा? उन्होंने अर्ज़ किया अगर मैं अल्लाह के रास्ते में क़त्ल किया जाऊँ तो क्या मुझसे मेरी ख़ताएँ दूर हो जायेंगी। आपने फ़रमाया, हाँ अगर तुम अल्लाह के रास्ते में अज्र की नीयत से सब्र करो। आगे बढ़ो, पीछे न हटो। मगर क़र्ज़ मुआफ़ न होगा। मुझसे जिबरील ने यही कहा है। [मुस्लिम]

१६/२०४ मुफ़्लिस कौन है

हज़्रत अबू हुरैरः (र०) से रिवायत है कि रसूलल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया, तुम जानते हो मुफ़्लिस कौन है? लोगों ने कहा हममें मुफ़्लिस वह है जिसके पास न दिरहम हो न कोई सरमाया। आपने फ़रमाया, मेरी उम्मत में मुफ़्लिस वह है जो क़ियामत के दिन नमाज़, रोज़े, ज़कात के साथ आयेगा लेकिन उसके साथ यह भी अ़िल्लतें होंगी कि फ़लाँ को गाली दी है, फ़लाँ पर तुहमत लगाई है, फ़लाँ का माल खाया है, फ़लाँ का ख़ून बहाया है और फ़लाँ को मारा है। पस उसकी बाज़ नेकी फ़लाँ और बाज़ नेकी फ़लाँ को दे दी जायेंगी। अब अगर उसकी सब नेकियाँ ख़त्म हो गयीं और अदायगी बाक़ी रही तो फिर इन सबकी बुराइयाँ लेकर उस पर डाल दी जायेंगी, और फिर आग में झोंक दिया जायेगा। [मुस्लिम]

---

१ क़त्ल हुए लोगों का।

१७/२०८ जो चीज़ जिसकी नहीं है मुक़द्दमा जीत लेने से उसकी नहीं हो सकती

हज़्रत उम्म सल्म: (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया, बेशक मैं भी इन्सान हूँ, तुम मेरे पास मुक़द्दमा लाते हो और तुम में का बाज़ अपनी चर्बज़बानी से काम ले लेता है। तो मैं इसी तरह करूँगा जो मैंने सुना है। अगर मैंने अपने सुनने के मुताबिक़ उसके भाई का हक़ उसको दिलवा दिया तो गोया उसके लिए आग का एक टुकड़ा काट दिया§। [बुख़ारी]

१८/२०९ ख़ूनॅ नाहक़

हज़्रत इब्नि उमर (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया, मोमिन के दीन में बराबर गुंजाइश है, जब तक कि वह हराम ख़ून न करे। [बुख़ारी]

१९/२०७ मालॅ ग़ैर

हज़्रत ख़ौल: बिन्त आमिर (र०) अन्सारी से रिवायत है (यह हज़्रत हम्ज़: (र०) की बीवी थीं) कि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सुना है कि आदमी अल्लाह तआ़ला के माल में बग़ैर हक़ के घुसते हैं। इनके लिए क़ियामत में आग है। [बुख़ारी]

मुसलमानों की अ़िज़्ज़त और उनके हुक़ूक़

आयात

…व मंय्युअ़ज़्ज़िम् हुरुमातिल्लाहि फ़हुव ख़ैरुल्लहू अ़िन्द रब्बिही …

जो अल्लाह की हुर्मतों की इज़्ज़त करेगा तो उसके लिए अल्लाह के यहाँ बेहतर होगा। [सू० हज, रु० ४ आ० ३०]

…व मंय्युअ़ज़्ज़िम् शआ़'अिरल्लाहि फ़अिन्नहा मिन् तक़्वल्क़ुलूबि।

जो अल्लाह तआ़ला की निशानियों की इज़्ज़त करेगा तो यह दिल का अदब है। [सू० हज, रु० ४ आ० ३२]

---

§ वह यह न समझे कि रसूलुल्लाह (स०) ने मेरे हक़ में फ़ैसला कर दिया है, वह अब हलाल है। इससे यह भी मालूम हुआ कि रसूलुल्लाह (स०) आ़लिमुल् ग़ैब नहीं थे। वरना आपको ज़रूर मालूम हो जाता कि हक़ दरअस्ल किसका है।

…वख़्फ़िज़् जनाहक लिलमुअ्मिनीन ।

अपने बाज़ू मोमिनों के लिए झुका दो ।

[सू० हिज्रि, रु० ६ आ० ८८]

…मन् क़तल नफ़्सम्बिग़ैरि नफ़्सिन् औ फ़सादिन् फ़िल्अर्ज़ि फ़कअन्नमा क़तलन्नास जमीअन् व मन् अह्याहा फ़कअन्नमा अह्यन्नास जमीअन्…

जिसने किसी की जान ली बग़ैर जान के बदला, या ज़मीन में फ़साद किया बग़ैर फ़साद के, तो उस ने गोया तमाम लोगों को क़त्ल किया। और जिसने इसको ज़िन्दः रक्खा गोया उसने सबको ज़िन्दः रक्खा।

[सू० मायदः, रु० ५ आ० ३२]

अहादीस

१/२०८ मोमिन की मिसाल

हज़्रत अबू मूसा (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया मोमिन मोमिन के लिए मिस्ल इमारत के है। एक ईंट दूसरी ईंट को मज़बूत करती है। [बुख़ारी-मुस्लिम]

२/२०९ मुसलमान की तकलीफ़ का ख़याल

हज़्रत अबू मूसा (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया, जो शख़्स हमारी मस्जिद या हमारे बाज़ारों के पास से गुज़रे और उसके पास तीर हों तो वह उसके फल रोक ले या थाम ले इस ख़याल से कि किसी मुसलमान को तकलीफ़ न पहुँच जाये। [बुख़ारी-मुस्लिम]

३/२१० मुसलमान एक जिस्म हैं

हज़्रत नुअमान बिन बशीर (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया, मोमिन की मिसाल उनके आपस की मुहब्बत और रहमदिली और मिहरबानी में जिस्म की तरह है। जब उसका कोई अज़्ो बीमार होता है तो सारा जिस्म जागता है। और उसको बुख़ार आ जाता है। [बुख़ारी-मुस्लिम]

इससे कम्बुग्रीवा की सूचना मिलती है। उनके कण्ठ के समान होने की कामना से कपोत-समूह व्रत-पालनपूर्वक निश्चय ही पत्थर की कंकड़ियाँ खा रहे हैं। (कठोर तपस्याकारी कंकड़ियाँ भक्षण करके तपस्या किया करते।) (२६)

बिर्भात्ति—भरती करके; खळु—निश्चय; (व्यतिरेक)। (२६)

ब्यक्त लक्षणामानङ्क ऊणा मुखमण्डळे करुँ।
बिळापि शिखी चमरु देखि कहन्ति केश चारु।
बरही एणी पुच्छकु आणि उत्पाटि छेदि जने।
बिकि एतिकि मूल्य बोलि कि देखान्ति ए भुवने। २७।

सरलार्थ—सीता जी के मुखमडण्ल की शोभा के सामने सभी व्यक्त (अर्थात् प्रकाशित) उपमाओं ने अपनी-अपनी न्यूनता स्वीकार की। सुतरां मयूर तथा चमरी-मृग पूँछ उठाये रोते-रोते सीता जी के केशों की श्रेष्ठता (तथा अपनी-अपनी पूँछ की न्यूनता) प्रकट कर रहे हैं क्या? अर्थात् सीता जी के केश-गुच्छ सहित मयूर तथा चमरी-मृग की पूँछ तुलनीय नहीं। इसी हेतु लोग उनकी पूँछ उखाड़ व काट कर बाज़ार में बेच रहे हैं और इसका मूल्य "इतना ही" कहकर संसार को दिखा रहे हैं। (अर्थात् मयूर की पूँछ तथा चमरी-मृग की पूँछ का मूल्य है; परन्तु सीता जी के केश अमूल्य हैं।) (२७)

बिळापि—रोकर; शिखी—मयूर; चमरु—चमरी-मृग; बरही—मयूर (व्यतिरेक)। (२७)

बिबेकी ग्रेहि से निउँछाइ ढाळिबा ब्याजे केशे।
व्योमधूमकु ताहा समकु लक्षिबा कि मानसे?
बिराब करि नोहे मुँ सरि बोलि उदय काळे।
बिष्णु ग्रे राहु उपमा ग्रहुँ चक्ररे छेदिदेले। २८।

सरलार्थ—विवेकी लोग मयूर-पूँछ तथा चमरी-मृग की पूँछ—दोनों को चँवर के रूप में डुला कर सीता जी के केशों की वन्दना कर रहे हैं। भला मेघ को किस मन से सीता जी के केशों के समान मानें? वह मेघ उदय के समय 'मैं समान नहीं हूँ' कहता हुआ घोर गर्जन कर रहा है। राहु कालिमा में सीता जी के केशों के तुल्य नहीं हो सका। इसलिए शायद विष्णु ने सुदर्शन चक्र से उसका छेदन कर डाला। (२८)

निउँछाइ—वन्दना करना; व्योमधम—मेघ; बिराब—घोर गर्जन (व्यतिरेक)। (२८)

बिकर्त्तनजा से समे मज्जा बीचि कुञ्चिते स्नेही ।
बिष ग्ने कळा संगमे मेळा काळे काळीय बहि ।
बिनाशे आशा प्रबेश आषाढ़ ग्ने आविळप्रदा ।
विश्वलोचन-रोचन घेन तमस नोहे कदा । २९ ।

सरलार्थ—सीता जी के घने, कुञ्चित केशों के समान होने की इच्छा से यमुना नदी ने अपने हृदय में कुञ्चित लहरें प्रकट कीं । फिर कालिमा में सीता जी के केशों के समान होने के उद्देश्य से कालीय सर्प को अपने काले शरीर में धारण किया और उसकी विष-कालिमा से युक्त हुईं । (यमुना का पानी तो सहज ही काला है, कृष्ण वर्ण के कालीय सर्प का विष भी काला है ।) परन्तु आषाढ़ महीने का प्रवेश होने पर (वर्षा होने से) उसका पानी पंकिल हो गया । फलस्वरूप उसकी आशा का विनाश हुआ । अन्धकार तो सहज ही जगत् के लोगों के चक्षुओं के प्रति अप्रीतिकर है । उससे केशों की तुलना कदापि नहीं की जा सकती । (२९)

विकर्त्तनाजा—सूर्य की कन्या यमुना; वीचि—लहरें; विष—जल, जहर; आविलप्रदा—पंकिल, कीचड़दार; तमस—अन्धकार (व्यतिरेक) । (२९)

बिवर्ण्ण तुल तमाळदळ बोलि कि पुरस्कार ।
बेभारे परिणत से धरि झड़इ बारम्बार ।
बिष्णुपदहिँ नीळता बहि चिकुर तुळ स्नेहे ।
बिहे ता धूळिधूसर करि बात कि गर्जे नोहे । ३० ।

सरलार्थ—मलिन तमाल पत्रों की सीता के केशों से उपमा देने से क्या लाभ है ? यह उपमा व्यर्थ है । क्योंकि तमाल-पत्रों का स्वभाव यह है कि वे पक कर पीले पड़ जाते हैं और बार-बार झड़ पड़ते हैं । सीता के केश हमेशा मस्तक पर शोभित रहते हैं, कभी नहीं झड़ते । इसलिए क्षणस्थायी तमाल-पत्रों से वे उत्कृष्टतर हैं । सीता के केशों के तुल्य होने की इच्छा से आकाश ने नीलिमा धारण की । परन्तु उसके समान न होने से पवन ने धूलि-राशि से उसे पाण्डुर (पीला) बना दिया और गर्जन सहित कहा, "यह आकाश केशों के समान नहीं है" । (३०)

विवर्ण—मलिन; तमाळ-दळ—तमाल के पत्र; कि पुरस्कार—क्या लाभ या फायदा है ?; परिणत—पक्व; विष्णुपद—आकाश; चिकुर—केश (व्यतिरेक) । (३०)

बहिले नीळ गळे से तुळ बाञ्छारे महादेबे ।
विचारि उमा नोहे से समा बेढ़ाइ बाहु भावे ।

बिजित से ग्रे सीता सौन्दर्य्ये एमन्त घेनि चित्त।
बन्दे गउरीपदरे करि सुन्दरीमणि मित। ३१।

सरलार्थ—उक्त केशों के तुल्य होने की इच्छा से महादेव ने अपने कण्ठ में नील वर्ण धारण किया। परन्तु उनके कण्ठ की नीलिमा सीता के केशों की नीलिमा के समान न होने से पार्वती ने अपनी दोनों भुजाओं को महादेव के गले में लिपटा दिया, ताकि असमान कण्ठ छिप जाय। "सौन्दर्य में मैं सीता से पराजित हूँगी"—मन में यह सोचकर 'गौरी' नाम धारण करके पार्वती सुन्दरी-शिरोमणि सीता को मित्र बना उनकी वन्दना कर रही हैं। (सीता बचपन में गौरी—अष्टवर्षा भवेद्गौरी—थीं। इसलिए पार्वती 'गौरी' नाम धारण करके उनकी मित्र बनीं।) (३१)

बारित सीमा बाड़ उपमा अळका मुख केशे।
बेळारे व्यापि गंगार तपी मूक तरिबा आशे।
बोध राघवे ए देखिथिबे एतिकि बातायने।
बतिश पदे ए छान्द छन्दे उपेन्द्र तोषमने। ३२।

सरलार्थ—मुख और केशों के बीच अलका सीमा-रेखा के सदृश है। इस तरह सीता जी के वदन का सौन्दर्य वर्णन करते-करते विश्वामित्र गंगा नदी के किनारे पर आ पहुँचे और गंगा को पार करने की आशा से मौन रहे। (उन्होंने अन्यान्य अंगों की वर्णना नहीं की।) रामचन्द्र ने सोचा, मुनि ने केवल इतना ही (मस्तक-भाग मात्र) खिड़की में देखा होगा। सर्वांग नहीं देखा है। उपेन्द्र ने सन्तुष्ट मन से इस छान्द को बत्तीस पदों में छान्दोबद्ध किया। (३२)

अळका—घुंघराले बाल, लट; बेळारे—किनारे पर; बातायन—झरोखा, खिड़की। (३२)

॥ इति अष्टम छान्द ॥

नवम छान्द

राग—चोखि

वितळकु आलिंगन करि जाह्नवी शोभन
हरे सुरवर-ताप चारुधारा से।
बहे मकर-केतन उच्छन्न रति समान
पूरित होइछि पुणि अशेष रसे।
विद्य हैमवती पदरे।
विषकण्ठ-तोषदानी बेनि मतरे। १।

सरलार्थ—अनन्तर विश्वामित्र, राम तथा लक्ष्मण गंगा नदी के किनारे पर उपस्थित हुए। उन्होंने देखा कि अतल तथा सुतल—दोनों को लाँघकर वितल को आलिंगन करती हुई गंगानदी शोभित हो रही है। (वितल अर्थात् तृतीय पाताल को वेध करने से गंगा नदी की गभीरता सूचित हो रही है।) शची सुरवर अर्थात् इन्द्र का स्मरताप (कन्दर्पजनित पीड़ा) हरण (दूर) करती है। गंगा अपने मनोहर प्रवाह से सूर (सूर्य) सम्बन्धी वर ताप (महाताप) को स्नानादि द्वारा हरण करती है। फिर गंगा स्मरप्रिया रति के समान हैं। रति मकर-केतन अर्थात् कन्दर्प के कामोद्वेग को शान्त करती हैं तथा वे श्रृंगाररस से पूर्ण हैं। उसी तरह गंगा मकरादि जलचर प्राणियों का केतन (गृह) होकर उनके उद्वेग को शान्त करती हैं तथा वह अपरिमित जल से पूर्ण हैं। गंगा हिमालय से उत्पन्न होने के कारण (पार्वती के समान) हेमवती के नाम से ख्यात हैं और पार्वती की तरह महादेव जी के काम-ताप, और विष-ताप का हरण करके दोनों पक्षों में शंकर जी की सन्तोषविधायिनी हुई हैं। (१)

वितळ—सप्त पातालों में से तृतीय पाताल; चारुधारा—शची (इन्द्रपत्नी), मनोहर प्रवाह (श्लेष); हैमवती—पार्वती, गंगा (श्लेष); विषकण्ठ—महादेव। (१)

विष्णुपदी विष्णुपद ईकार भेद शब्द
तरणी-(णि-)र गतागत तहिँ उचित ।
विशारद से सामन्त मत्तरे दास-सेवित
डाकूँ न शुणन्ते रघुनाथ कथित।
विषधर प्राये कि तुहि ।
बेळे नेत्र ढाळि शुण उदार नोहि । २ ।

सरलार्थ—विष्णुपदी व विष्णुपद—इन दो शब्दों में 'ई'कार मात्र प्रभेद है। और शेष सभी अक्षर समान हैं। विष्णुपदी (गंगा) में तरणी (नौका) तथा विष्णुपद में तरणि (सूर्य) का गमनागमन उचित है। ('तरणी' तथा 'तरणि', इन दो शब्दों में भी 'ई'कार मात्र प्रभेद है।) गंगा को पार करने के लिए तरणी (नौका) चाहिए, इसलिए विश्वामित्र ने केवट को पुकारा। वह केवट नौका-चालन में निपुण होने के कारण दूसरे केवटों में सामन्त (सरदार) हुआ है और दासों (नौकरों) से सेवित हो रहा है। इस हेतु मारे गर्व के ऋषि की पुकार उसने नहीं सुनी। तो रामचन्द्र ने कहा, "क्या तू विषधर (साँप) है? (अर्थात् तू क्या कर्णहीन है?) यदि तेरे कान नहीं हैं, तो तू गम्भीर न होकर साँप (चक्षुश्रवा) की तरह आँखों से हमारी बात ज़रा सुन तो सही"। (२)

विष्णुपदी—गंगा; विष्णुपद—आकाश; तरणी—नौका, तरणि—सूर्य (श्लेष); विशारद—निपुण, दक्ष; मत्तरे—गर्वसे; दास—भृत्य, नौकर; विषधर—साँप। (२)

बधिर नुहइ वीर बोइला तहिँ धीवर
शुणिलिणि पथरे पथर अवळा।
बालि पड़ितो चरणु आशंका उपुजे एणु
नउका नायिका हेले बुड़िब भेळा।
बृत्ति ए मो पोषे कुटुम्ब ।
बसाइ न देबि पाद न धोइ नाब । ३ ।

सरलार्थ—यह सुनकर केवट ने कहा, "हे वीर! मैं बहरा नहीं हूँ। मैंने सुना, तुम्हारे चरणों की धूल पड़ने से मार्ग पर पत्थर एक अबला (स्त्री) बन गया, इस हेतु मुझे आशंका हो रही है, कहीं मेरी नौका आपकी पद-रज के स्पर्श से स्त्री न बन जावे। यह नौका मेरे निर्वाह का साधन है, इससे मैं अपने परिवार का पालन-पोषण कर रहा हूँ। सुतरां, तुम्हारे पैरों को बिना धोये मैं तुम्हें नाव पर बैठने नहीं दूँगा। (क्योंकि काठ तो पत्थर से भी नरम है। जब पत्थर स्त्री बना है, तब लकड़ी से बनी नौका का स्त्री बनना असंभव नहीं।)" (३)

बधिर—बहरा; धीवर—केवट; नउका—नौका; नायिका—स्त्री; बुड़िब—डूब जाएगा; भेळा—लकड़ियों या बाँसों का एकत्र बन्धन जो नदी पर खेने से उतराता हुआ चलता है, बुड़िब भेळा—अवलम्ब नष्ट हो जाएगा; वृत्ति—जीविका। (३)

तुलनीय—क्षालयामि तव पाद-पंकजं नाथ दारुदृषदोः किमन्तरं—अध्यात्म-रामायण। अथवा रामचरितमानस का केवट-प्रसंगः—
"मांगी नाव न केवट आना'''तब लगि न तुलसीदास नाथ कृपाल पारु उतारिहौं ॥"

बढ़ाइ देले पयर भावग्राही रघुवीर
पयरे क्षाळित करि वसने पोछि।
ब्रह्मारे धौत ये पद नोहिछि शिव विषाद
न पाइ चरणामृत पानकु इच्छि।
विज्ञानी कैवर्त्त धोइला।
विश्वे पतित-पावन नाम रहिला। ४।

सरलार्थ—केवट के ऐसे भावगर्भित वचन सुनकर भावग्राही वीर रामचन्द्र ने केवट के धोने के लिए अपने पैर बढ़ा दिये। केवट ने प्रभु रामचन्द्रजी के पैरों को धोकर अपने वस्त्र से पोंछ दिया। चरणामृत-पान की इच्छा करने वाले ब्रह्मा जिन पैरों को नहीं धो पाये हैं, शिवजी जिन पैरों को न धो सकने के हेतु विषादग्रस्त (दुःखित) हुए हैं, विष्णुजी के ऐसे पैरों को अज्ञानी केवट ने धोया। इसलिए संसार में रामजी का 'पतितपावन' नाम ख्यात हुआ। (४)

विज्ञानी—अज्ञानी, नीच। (४)

बिञ्चि पल्लव नावरे पद बिकळपि मनरे
प्रतिहारी परिरे मणाइ बसाइ।
विश्वामित्रङ्कु श्रीराम पचारिले गंगा नाम
'भागीरथी किपाँ हेला कह गोसाइँ।
विष्णु नखकोणे ए थिला।
वामनावतारे भगीरथ आणिला। ५।

सरलार्थ—पादों से धूलि धुल जाने पर भी केवल पद-न्यास से नौका कहीं स्त्री न बन जाय, यह सन्देह करके केवट ने नाव पर कोंपलें बिछा दीं, और एक प्रतिहारी की तरह उन तीनों को मनाकर उस पर बैठाया। अनन्तर रामचन्द्रजी ने विश्वामित्रजी से पूछा, "हे गोसाइँ! 'गंगा' का नाम 'भागीरथी' कैसे पड़ा, ज़रा बताइए"। विश्वामित्र ने कहा, वामनावतार में विष्णुजी के नाखूनों के कोने में (से) यह नदी निकली थी।

तुम्हारे पूर्वज भगीरथ इसे ले आये थे। इसलिए इसका नाम भागीरथी पड़ा है। (५)

बिञ्चि—बिछाकर; पल्लव—किशलय, कोंपलें, बिकल्पि—सन्देह करके; प्रतिहारी—द्वारपाल; मणाइ—मनाकर; आणिला—ले आये, लाये। (५)

विधिपूर्व करि ऋषि समस्त चरित भाषि
तरी त त्वरित ग्राइ लागे कूळरे।
बिहारी हेले मार्गर मार्गण[१] कमाणधर
मार्गण[२] शोभा लेशकु कन्दर्प ग्रार।
विदेहमण्डळे प्रवेश।
बारबेनि-पुर-सार मोहन पुंस। ६।

सरलार्थ—ऋषि ने गंगाजी के मर्त्यलोक में आने के सारे चरित विधिपूर्वक कह सुनाये। इस अवधि में नौका शीघ्र आकर दूसरे किनारे पर लगी। जिनकी शोभा से कन्दर्प भी रंचमात्र माँग रहा है ऐसे धनुशरधारी रामचन्द्र ने नौका से उतर कर मार्ग पर पदार्पण किया। अनन्तर चौदह भुवनों में श्रेष्ठ मोहन पुरुष रामचन्द्र ने विदेहमण्डल में प्रवेश किया। (६)

तरी—नौका; मार्गण[१]—शर; कमाणधर—धनुर्द्धारी; मार्गण[२]—माँगने वाला; (यमक) शोभा लेशकु—रंचमात्र शोभा को; ग्रार—जिनकी; बारबेनि—बारह और दो, चौदह; सार—श्रेष्ठ; पुंस—पुरुष। (६)

बिपणिरे थिला जने भावना कले दर्शने
आगत कि धाता हर मध्यरे हरि।
विभञ्जन शिवधनु करि मरकत तनु
बिभा हेबे सीता निश्चें जन्मिछि शिरी।
वश ए रम्यरे मानस।
विजे रास अद्भुते शुभे ए घोष। ७।

सरलार्थ—(विदेह के) बाजारों में ठहरे लोगों ने विश्वामित्र, राम और लक्ष्मण के दर्शन करके मन में विचार किया, "आगे विधाता, पीछे शिवजी और दोनों के वीच में विष्णु भगवान् इस प्रकार तीन मूर्त्तियों ने आगमन किया क्या? जिनका मर्कतकान्ति के समान शरीर है ऐसे राम शिवधनु का विभञ्जन (भंग) करके लक्ष्मी-स्वरूपा सीता को विवाहेंगे।" राम के सौन्दर्य से लोगों के मानस वशीभूत हुए। इस समय अद्भुत रूप से 'रामचन्द्र जी ने आगमन किया है' यह ध्वनि चारों ओर सुनाई पड़ी। (७)

बिपणि—श्रेणीबद्ध दुकानें; धाता—ब्रह्मा, हर—शिव, हरि—विष्णु; जन्मिछि शिरी—लक्ष्मी-स्वरूपा सीता; वश—वशीभूत; ए रम्यरे—इस (रामचन्द्रजी की) मनोरमता से, उनके सौन्दर्य से। (७)

बिभ्रमुँ ए शब्द चित्ते 'रा' 'का' होइगला श्रुते
नारीए भाळिले केहि से रूपवन्त।
बळइ कवि मानस नाम पछे त प्रकाश
अखण्डचन्द्र ए होइबार उचित।
बोधिबे नयन-चकोरी।
बिशेषे शोभा-पीयूष-पान विस्तारि। ८।

सरलार्थ—'राम ने आगमन किया'—यह आवाज़ सुनाई पड़ते ही भ्रमवशत: सबके मनों में 'रा' का 'का' हो गया। (अर्थात् 'राम' की जगह पर 'काम' सुनाई पड़ा।) 'काम ने आगमन किया'—ऐसा सुनकर नारियों ने सोचा, "काम तो अरूप है। वह रूपवन्त कैसे हुआ?" कवि ने मन में विचार किया, 'राम' नाम के पश्चात् तो 'चन्द्र' प्रकाशित है। इसलिए 'रा' 'का' अर्थात् राका हो गयी। अर्थात् इससे पूर्णिमा का अखण्ड चन्द्र सूचित हुआ जो राम के लिए उचित ही धर्म हुआ। वही पूर्णचन्द्र शोभारूपी पीयूष-राशि का विस्तार करके लोगों के नयनोंरूपी चकोरियों को सन्तुष्ट करेंगे। (चकोरी पूर्णचन्द्र की ज्योत्स्ना पीकर सन्तुष्ट होती है। उसी तरह लोगों के नयन रामचन्द्र की शोभा को देखकर प्रसन्न होंगे।) (८)

राका—पूर्णिमा; अखण्डचन्द्र—पूर्णचन्द्र; पीयूष—अमृत (८)

विषय करि अन्तर से प्रान्त हत प्रकार
मणि रमणी बाहार छन्न द्विगुण।
बिनाशि गुरु गौरव ताहाङ्करि सेहि भाव
उदितरु करि न पारिले बारण।
बेशे थिले येतेक नारी।
बिहे के नेत्रे कज्जल छळे कस्तूरी। ९।

सरलार्थ—रमणियों ने विषय (काम-धन्धे) को त्याग दिया। मानों उन्होंने विषय को ('विषय' शब्द का प्रान्त अक्षर हत, अर्थात् लुप्त होने पर केवल 'विष' ही रहता है।) विष की तरह समझा और दुगुने आवेग के सहित निकल पड़ीं। पहले काम के आगमन की वार्त्ता पाकर वे उद्विग्न हुई थीं। अब राम के आगमन का संवाद सुनकर वे दुगुनी उद्विग्न हुईं।

परम तीव्र सूर्यमंडळ। तेजें आहाळेल माझें बाळ। म्हणून धरूं पाहे अनिळ। परी तो चपळ नाटोपे। २२२ मग हिमाचलाचे शीतलां-बुकण। मागून शिंपी प्रभंजन। हनुमंत मुख पसरोन। सूर्याजवळी पातला। २३ तों ते दिवसीं सूर्यग्रहण। राहु आला मुख पसरोन। मारुतीस क्रोध आला दारुण। सिंहिकासुत देखतां। २४ म्हणे-भी अत्यंत क्षुधित। फळ भक्षावया आलों येथ। हा आला कोण अकस्मात। ग्रासाआड माझिया। २५ सबळ पुच्छघातेंकरून। फोडिलें राहूचें वदन। भिरकाविला पायीं धरून। मूर्च्छा येऊन पडला तो। २६ जैसा शुंडादंडें-करून देख। महागज विदारी बिडालक। कीं भुजंगाचे कवेंत मूषक। अकस्मात सांपडला। २७ राहूचे कैवारें केत। कपीवरी धांवला उन्मत्त। जैसा केसरीपुढें जंबुक येत। आपलें मरण विसरूनियां। २८ केतु देखतांचि हनुमंतें। तेथेंचि

मन के वेग को पीछे छोड़कर (अर्थात् मन के वेग से भी अधिक वेग से) मारुती आकाश में जा रहा था। तो लोगों के प्राणों का ईश्वर-वायुदेव दौड़कर कहता (सोचता) है—मैं अपने पुत्र को पकड़ लूँगा। २२१ सूर्यमण्डल अतिशय प्रखर है; उसके तेज से मेरा बच्चा झुलस जाएगा—इसलिए वायुदेव उसे पकड़ना चाहता था। परन्तु वह चपल बालक उसके वश में—हाथ में नहीं आता था। २२२ तब वायुदेव हिमालय के (ठण्डे) जलकण उसके पीछे-पीछे सींचता जाता था। हनुमान मुख को फैलाये सूर्य के पास जा पहुँचा। २३ तब उस दिन सूर्य-ग्रहण था; अतः (राहु) मुँह फैलाकर आया (हुआ) था। सिंहिका के उस पुत्र (राहु) को देखकर मारुती को अतिशय गुस्सा आया। २४ उसने कहा (सोचा)—मैं अति भूखा हूँ। यहाँ मैं फल खाने के लिए आया तो यकायक यह कौन खाद्य (पाने) के मार्ग में आड़े आया है? २५ पूँछ के ज़ोर के आघात से उसने राहु के मुख को भग्न कर डाला और उसे पाँव के आघात से उछाल दिया तो वह (राहु) बेहोश होकर गिर पड़ा। २६ देखते हैं कि जैसे महान् हाथी सूँड (-रूपी दण्ड) से (आघात कर) बिलाव को कुचल डालता है अथवा जैसे साँप की पकड़ में अकस्मात् चूहा फँस जाए (तो जो स्थिति उस चूहे की हो जाती है) वैसे ही राहु हनुमान के हाथों में फँस गया (और उसकी बुरी स्थिति हो गयी)। २७ राहु का पक्षपात-पूर्वक पक्ष लेकर केतु उन्मत्त हो वानर (हनुमान) पर दौड़ा आया, जैसे गीदड़ मृत्यु को भुलाकर सिंह के आगे आ जाता हो। २८ केतु को

मर्दिला मुष्टिघातें। आंग चुकवोनि वेगें बहुतें। पळता जाहला केतू पैं। २९ राहु आणि केत। इंद्रापाशीं आले धांवत। अशुद्धें नाहाले जेवीं पर्वत। सिंदूरेंकरून माखले। २३० आक्रोशें बोलती दोघेजण। तूं सुरेश सहस्रनयन। आम्हांवरी कोप धरून। हें कां विघ्न धाडिलें। ३१ नवा पुच्छराहु करून। आम्हांवरी दिधला पाठवून। आश्चर्य करी शची-रमण। म्हणे हें कर्तृत्व कोणाचें। ३२ कोणीं केली विपरीत करणी। त्यास संहारावया वज्रपाणी। त्रिदशसमुदाय घेउनी। वायुवेगें धांविन्नला। ३३ राहु पुढें पुढें धांवत। मागें देवांसहित अमरनाथ। तों इकडे अंजनीसुत। सूर्य ग्रासूं धांवतसे। ३४ चळचळां कांपे मित्र। म्हणे-हा कैंचा आला अमित्र। दिनमान सांडोनि दिनकर। पळों न लाहे सर्वथा। ३५ प्रतापरुद्र मारुती। सूर्यमंडळ धरिलें हातीं। हे फळ नव्हे निश्चितीं। म्हणोनि पुढती टाकिलें। ३६ जैसा केवळ वडवानळ। तैसेंच देदीप्यमान सूर्यमंडळ। फळ नव्हे म्हणोनि अंजनीबाळ। टाकिता जाहला

देखते ही हनुमान ने घूँसे से उसे वहीं मसल डाला। तो अपनी देह को (उससे) छुड़ाकर-बचाकर केतु बहुत वेग से भाग गया। २९ राहु और केतु दौड़ते हुए इन्द्र के पास आये। वे रक्त से नहाये हुए थे—मानो सिंदूर से सने पर्वत ही हों। ३० दोनों जने आक्रोश-पूर्वक कहते हैं—हे देवेश सहस्रनयन (इन्द्र), क्रोध भाव रखकर हम पर यह विघ्न तुमने क्यों भेजा है ? ३१ पूँछ से युक्त इस नये राहु का निर्माण कर उसे हमपर (आक्रमण करने के लिए) तुमने भेज दिया है। यह सुनकर शचिपति इन्द्र आश्चर्य अनुभव करके कहता है कि यह किसका कृतित्व है। ३२ किसने यह विपरीत करतूत की ? (जिस-किसी ने की हो) उसका संहार करने के लिए वज्रपाणि देवों के समूह को लेकर वायु-वेग से दौड़ा। ३३ राहु आगे-आगे दौड़ता है देवों सहित इन्द्र (उसके) पीछे दौड़ता है तो इधर अंजनी-पुत्र हनुमान सूर्य को निगलने के लिए दौड़ रहा है। ३४ (उसे देखकर) सूर्य थरथर काँपता है। वह कहता (सोचता) है—यह कैसा शत्रु आ गया ? नित्य का (कार्य) क्रम छोड़कर सूर्य बिलकुल नहीं भाग पाता था। ३५ रौद्र प्रतापवाले मारुती ने सूर्यमण्डल को हाथ में धर रक्खा; यह निश्चय ही फल नहीं है—ऐसा कहकर (समझकर) उसे आगे फेंक दिया। ३६ विशुद्ध अग्नि जैसी तेजस्वी होती है, वैसा ही देदीप्यमान —चमकदार यह सूर्यमण्डल है। यह फल नहीं है—ऐसा सोचकर अंजनी

पुढती पैं । ३७ माघारा पाहे परतोन । तों राहु आला शक्रास घेऊन । पुढती क्रोध आला दारुण । म्हणे आतां न सोडीं यासी । ३८ साह्य करून अमरपती । मजवरी आला पुढती । जैसे शलभ मिळूनि येती । कल्पांतविजू धरावया । ३९ ऐसें बोलत वायुनंदन । राहूवरी लोटला येऊन । इंद्रादेखतां ताडण । राहूसी केलें बहुसाल । २४० जैसा पर्वत पडे अकस्मात। तैसा राहूसी दे मुष्टिघात । ग्रहपूजा यथासांग तेथ । वायुसुतें मांडिली । ४१ राहु आक्रोशें फोडी हांका । म्हणे-काय पाहसी अमरनायका । मग शक्रें ऐरावती देखा । अकस्मात प्रेरिला । ४२ जिकडे धांवे ऐरावत । तिकडे भारें उर्वी लवत । कीं दुसरा मेरु मूर्तिमंत । शक्राचें वाहन जाहला । ४३ तों सबळ लोटला ऐरावती । चपळ धावला वीर मारुती । जैसा वज्रघात पर्वतीं । तैसा कुंभस्थळीं ताडिला । ४४ धाकें ऐरावत तो पळे । पाकशासन निजबळें । ऐरावत आकळितां नाकळे । रान

के बेटे ने उसे आगे फेंक दिया । ३७ (और) पीछे मुड़कर देखा, त्यों ही राहु इन्द्र को लेकर सामने आ गया । इससे उसे पुनः भयंकर क्रोध आया । उसने कहा (सोचा), अब इसे नहीं छोड़ूँगा । ३८ अमरपति इन्द्र को साह्य-कर्ता के रूप में लेकर यह मुझपर चढ़ आया (आक्रमण करने दौड़ा); मानो शलभ (टिडिड्याँ) मिलकर कल्पान्त (प्रलय)-काल की बिजली को पकड़ने के लिए आ गये हों । ३९ इस तरह बोलते (सोचते) हुए वायु-पुत्र हनुमान राहु की ओर झपटा और इन्द्र के देखते हुए, उसने राहु का बिलकुल कचूमर निकाल दिया । २४० जैसे पर्वत (किसी पर) अकस्मात् टूट पड़े, वैसे ही राहु के घूँसे जमाता था—अर्थात् प्रत्येक घूँसा पर्वत के गिर जाने जैसा था । हनुमान ने वहाँ मानो यथासांग (बिना कोई कोर-कसर रक्खे) ग्रह-पूजन ही ठान लिया । ४१ राहु ज़ोर-ज़ोर से रोते हुए (इन्द्र को) पुकारता था । वह कहता है–'हे इन्द्र, तुम क्या देख रहे हो ?' (इस पर) इन्द्र ने ऐरावत हाथी की ओर देखकर यकायक उसे प्रेरित किया—उसे उकसाया । ४२ (तब) ऐरावत जिस ओर दौड़ता, उस ओर उसके भार से पृथ्वी झुकती–धँस जाती । (वह ऐसा दिखायी देता था कि) मानो साक्षात् दूसरा मेरु पर्वत ही इन्द्र का वाहन (सवारी) बन गया हो । ४३ वह बलशाली ऐरावत जब लपका, तो वीर पुरुष मारुती (उसकी ओर) चपलतापूर्वक दौड़ा और जैसे पर्वत पर वज्र का आघात हो जाए, वैसे उसने उसके कुम्भस्थल पर आघात किया । ४४ मारे

घेतलें भयेंचि । ४५ जैसी दुर्बळाची स्त्री नष्ट बहुत । ती न मानी त्याचा वचनार्थ । तैसा इंद्रासी ऐरावत । नाटोपेचि सर्वथा । ४६ असो विवेक करूनि बहुत । काम क्रोध आवरिती महंत । तैसा सहस्राक्षें ऐरावत । पुढती समोर आणिला । ४७ मागुता धांवे पवनसुत । धरी ऐरावताचे चारही दंत । उलथोनि खालीं पाडित । शक्रासहित तेधवां । ४८ हस्तचपेटें हनुमंतें ते वेळीं । शक्राचा किरीट पाडिला भूतळीं । सकळ देवसेना ते काळीं । भयभीत जाहली । ४९ इंद्राची झोटी मोकळी । मागुती ऐरावत आकळी । हनुमंतावरी बळेंचि घाली । परी गज न टाकी पाउल पुढें । २५० गज पळे रानोरान । परम घाबरला सहस्रनयन । तो यम हस्तीं दंड घेऊन । हनुमंतावरी धांविन्नला । ५१ यमें दंड प्रेरावा जों ते वेळां । तों मारुति अंगावरी कोसळला । मुष्टिघात हृदयीं दिधला । यम पाडिला धरणीवरी । ५२ वक्षःस्थळीं वळंघोनि हनुमंत । पुढतीं मुष्टिघात

डर के ऐरावत भाग गया । इन्द्र के द्वारा ऐरावत को रोकने का यत्न होने पर भी वह नहीं रुका (इन्द्र के वश में नहीं आया) । भय के कारण वह वन में भाग गया (उसने वन का आश्रय लिया)। ४५ जैसे दुर्बल व्यक्ति की अति नटखट-कठोर-हृदय-स्त्री उसकी बात को नहीं मानती, वैसे ही इन्द्र द्वारा ऐरावत वश में नहीं आ रहा था । ४६ अस्तु । बहुत विवेक करके महान् लोग काम, क्रोध (आदि विकारों) को काबू में रखते हैं, वैसे ही (बहुत यत्न करके) सहस्रनयन इन्द्र ऐरावत को रोककर सामने लाया । ४७ पवनपुत्र पीछे दौड़ता है और ऐरावत के चारों दाँतों को पकड़ता है; फिर उसने तब इन्द्र-सहित उसे उलटाकर गिरा दिया । ४८ उस समय हनुमान ने हाथ के थप्पड़ से इन्द्र के मुकुट को ज़मीन पर गिरा दिया । (यह देखकर) उस समय समूची देवों की सेना भयभीत हो गयी ।४९ इन्द्र की चोटी छूट गयी । उसने (इन्द्र ने) फिर से ऐरावत को खींचकर बलपूर्वक हनुमान पर दौड़ाया (दौड़ाना चाहा), फिर भी वह हाथी कदम आगे नहीं रखता था । २५० वह हाथी वन-वन भागता था । (इससे) इन्द्र अतिशय घबड़ा गया, तो यम हाथ में दण्ड लेकर हनुमान पर दौड़ आया । ५१ उस समय ज्यों ही यम ने दण्ड को प्रेरित किया (आघात करने के हेतु चलाया), त्यों ही मारुती उसके शरीर पर आ गिरा और उसने उसके हृदय पर घूँसा जमाया और यम को नीचे धरती पर गिरा दिया । ५२ छाती से लिपटकर हनुमान पुनः घूँसे जमाता था । उसने

प्रेरित । हातींचा दंड हिरोनि घेत । तेणेंचि ताडित तयासी । ५३
यमें धरिले मारुतीचे चरण । म्हणे मी तुजला अनन्य शरण ।
हस्त जोडूनियां वरुण । स्तुति करीत मारुतीची । ५४ कुबेर
धांवोन ते समयीं । लागे हनुमंताचे पायीं । तों ऐरावतारूढ
लवलाहीं । शक्र वेगें पातला । ५५ ऐसें देखोनि ते अवसरीं ।
मारुति धांवे शचीवरावरी । ऐरावतास पुच्छीं धरी । पृथ्वीवरी
आपटावया । ५६ पुच्छ धरूनि भोवंडी गज । पृथ्वीसहित
कांपती दिग्गज । अवनीवरी देवराज । वज्रासह पाडिला । ५७
बळें गज आपटिला धरणीं । देवांस मांडली महापळणी ।
कडेकपाटीं जाउनी । महायोद्धे दडाले । ५८ म्हणती पृथ्वी
गेली रसातळा । एकचि हाहाकार जाहला । तों अमरेंद्रें ते
वेळां । आव धरिला पुढती पै । ५९ वज्र बळें भोवंडित ।
मुखावरी ताडिला हनुमंत । तेणें मूर्च्छना दाटली बहुत । पडे
वायुसुत पृथ्वीवरी । २६० कनकाद्रीवरून कोसळला । पर्वतदरी-
माजी पडला । लोकप्राणेश धांविन्नला । सुत धरिला पोटासीं । ६१

उसके हाथ से दण्ड छीन लिया और वह उससे उसे (यम को) पीटता था । ५३ तब यम ने मारुती के पाँव पकड़ लिये और कहा—'मैं अनन्य भाव से तुम्हारी शरण में आया हूँ'। इधर वरुण ने हाथ जोड़कर मारुती का स्तवन किया । ५४ उस समय कुबेर दौड़ता हुए आकर हनुमान के चरणों में गिर पड़ा । तब शीघ्र ही ऐरावत पर विराजमान इन्द्र वेग से (वहाँ) आ पहुँचा । ५५ उसे इस प्रकार देखकर उस समय मारुती इन्द्र की ओर लपका और ज़मीन पर पटक देने के हेतु उसने ऐरावत को पूँछ से पकड़ लिया । ५६ हाथी की पूँछ पकड़कर उसने उसे चारों ओर घुमाया, तो पृथ्वी-सहित दिग्गज काँप उठे । मारुती ने इन्द्र को वज्रसहित पृथ्वी पर गिरा दिया । ५७ उसने जोर से हाथी (ऐरावत) को धरणी पर पटक दिया तो देवों में भगदड़ मची (और) बड़े-बड़े योद्धा (पर्वतों के) कगारों-गह्वरों (गुफाओं) में जाकर छिप गये । ५८ उन्होंने कहा (माना)—(अब) पृथ्वी रसातल में गयी । (सर्वत्र) हाहाकार मात्र मच गया, तो उस समय देवेन्द्र ने धैर्य धारण किया । ५९ बलपूर्वक वज्र को घुमाते हुए उसने हनुमान के मुँह में (उससे) आघात किया । इससे उसे बहुत भारी मूर्च्छा (बेहोशी) आयी और वह (वायुपुत्र) पृथ्वी पर गिर गया । २६० सुवर्ण पर्वत (पर) से वह गिर गया और पर्वत की घाटी में गिर पड़ा, तो वायुदेव दौड़ा और उसने (अपने) पुत्र को गोद में उठा

कासाविस वायुनन्दन। विकळ पडला अचेतन। वायु रडे स्फुंदस्फुंदोन। पुढें घेऊन हनुमंता। ६२ म्हणे दुर्जन हा अमरेंद्र। तान्हयावरी घातलें वज्र। परम निर्दय पुरंदर। करीन संहार तयाचा। ६३ माझिया तान्हयाचा जातां प्राण। आटीन सकळ त्रिभुवन। जैसे प्रल्हादाकारणें दैत्य संपूर्ण। श्रीनृसिंहें आटिले। ६४ वायुआधीन सकळांचे प्राण। आकर्षिले न लागतां क्षण। श्वासोच्छ्वास कोंडून। केलें त्रिभुवन कासाविस। ६५ मग इंद्र विरिंचि सकळ सुरवर। रमावर आणि उमावर। सकळ प्रजा ऋषीश्वर। शरण आले वायूतें। ६६ पोटासी धरूनि हनुमंत। वायु दीर्घ स्वरें रडत। तों ब्रह्मादि देव समस्त। प्राणनाथें देखिले। ६७ हनुमंत कडेवरी घेउनी। वायु उभा राहे ते क्षणीं। तीन्ही देव देखोनि नयनीं। नमस्कार करी तेधवां। ६८ मग बोले कमळासन। पुत्राचा कैवार घेऊन। अवघे जन निर्दाळून। टाकिशी काय प्राणेशा। ६९ येरू म्हणे-न उठतां माझा सुत। इंद्रासी आटीन देवांसहित। ऐकोनि हांसे इंदिरानाथ। वर

लिया। ६१ हनुमान व्याकुल हो गया; वह बेचैन तथा अचेतन हो गिर पड़ा। तब वायुदेव हनुमान को सामने रखकर फूट-फूटकर रोने लगा।६२ उसने कहा–इस दुर्जन इन्द्र ने (इस) दुध-मुँहे पर वज्र मारा। यह इन्द्र अति निर्दय है। मैं उसका संहार करूँगा। ६३ यदि मेरे शिशु के प्राण निकल जाएँ, तो जैसे प्रह्लाद के कारण (उसकी रक्षा के लिए) श्री नरसिंह ने सब दैत्यों को नष्ट किया, वैसे ही मैं समस्त त्रिभुवन का विनाश करूँगा। ६४ सब के प्राण वायु के अधीन होते हैं। उन्हें आकृष्ट करने (खींच लेने) में क्षण भी नहीं लगा। सब के श्वासोच्छ्वास को रोककर (वायुदेव ने) त्रिभुवन को व्याकुल कर डाला। ६५ तब इन्द्र, ब्रह्मा और सब बड़े-बड़े देव, रमापति विष्णु और उमापति शिवजी, समस्त प्रजा (जन) और ऋषिवर वायु की शरण में आ गये। ६६ हनुमान को प्रेमपूर्वक गोद में लिये हुए वायु उच्च स्वर से रो रहा था; तब प्राणनाथ (वायु) ने ब्रह्मादि सब देवों को देखा। ६७ तो हनुमान को गोद में लेकर वायु तत्क्षण खड़ा हो गया और तब तीनों देवों (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) को आँखों से देखकर उन्हें नमस्कार किया। ६८ तब ब्रह्मा जी बोले– 'हे प्राणेश वायुदेव, पुत्र का पक्षपात कर सब लोगों को क्यों नष्ट कर डाल रहे हो?' ६९ (इसपर) दूसरे ने अर्थात् वायु ने कहा–'यदि मेरा पुत्र

देतसे संतोषोनि । २७० पूर्ण पिंडाचा हनुमंत । यासी स्वप्नींही नाहीं मृत्य । ब्रह्मकल्पपर्यंत । चिरंजीव पुत्र तुझा । ७१ मग बोले कर्पूरगौर । माझिये तृतीय नेत्रींचा वैश्वानर । क्षणें जाळील चराचर । परी यासी बाधे ना । ७२ माझीं त्रिशूळादि आयुधें तत्त्वतां । तीं न रुतती हनुमंता । मग विरिंचि होय बोलता । निजवरदान ऐका तें । ७३ माझें ब्रह्मास्त्र आणि पाश । कदा न बाधितील यास । म्यां जीं शस्त्रें निर्मिलीं बहुवस । तींही यास न बाधिती । ७४ मग इंद्रही वदे सवेग वर । माझें यासी न बाधे वज्र । हा वज्रदेही साचार । अक्षय अभंग सर्वदा । ७५ हनुवटीस झगडलें वज्र । यास हनुमंत नाम साचार । कुबेर म्हणे-बहुत असुर । क्षय पावती हस्तें याच्या । ७६ यम वदे वरदान । यास काळदंड न बाधी पूर्ण । याचे करिती जे नामस्मरण । त्यांसी बंधन न करीं मी । ७७ मग बोले रसाधिपती । अभंग असो यास शक्ती । कधीं श्रम

(जीवित) न उठे, तो देवों-सहित इन्द्र को मैं नष्ट करूँगा'। यह सुनकर इन्दिरापति विष्णु ने सन्तुष्ट हो उसे वर दिया । २७० 'हनुमान पूर्ण पिण्ड (से उत्पन्न) है। इसे स्वप्न में भी मृत्यु नहीं आएगी। ब्रह्म-कल्प के अन्त तक तुम्हारा पुत्र चिरंजीवी है (होगा)।' ७१ तदनन्तर शिवजी बोले–'मेरे तीसरे नेत्र का वैश्वानर (अग्नि) क्षण (मात्र) में जड़-चेतन को जला सकेगा–लेकिन इसे वह बाधा नहीं पहुँचाएगा । ७२ मेरे त्रिशूल आदि अस्त्र सचमुच हनुमान को बिलकुल नहीं चुभेंगे'। तत्पश्चात् ब्रह्माजी बोलने लगे–'सुनो, मेरा यह वरदान है। मेरा ब्रह्मास्त्र और पाश इसे कभी भी बाधा नहीं पहुँचाएँगे। मैंने जो बहुत अस्त्र निर्मित किये हैं, वे भी इसे बाधा नहीं करेंगे'। ७३-७४ तब इन्द्र भी झट से अपना वर कहता है–'मेरा वज्र इसे बाधा नहीं पहुँचाएगा। यह सचमुच वज्रदेही (वज्र के समान कठिन शरीरधारी) है। वह नित्य अक्षय तथा अभंग होगा । ७५ इसकी हनु (ठुड्डी) में वज्र भिड़ गया, इसलिए इसके लिए हनुमन्त (हनुमान) नाम सत्य—उचित है।' (तदनन्तर) कुबेर ने कहा–इसके हाथों बहुत असुर (राक्षस) क्षय (नाश) को प्राप्त हो जाएँगे । ७६ फिर यम ने (अपना) वरदान कहा–'इसे काल का दण्ड पूर्णरूप से बाधा नहीं पहुँचाएगा। इसका जो नामस्मरण करेंगे, उनके लिए मैं कोई बन्धन नहीं करूँगा'। ७७ तदनन्तर वरुण ने कहा–'इसकी शक्ति अभंग हो जाए। बहुत वर्ष युद्ध करने पर भी (यह) मारुती कभी थकावट को

न पावे मारुती । युद्ध करितां बहुसाल । ७८ दिव्य कमळांची सुमनमाळ । न सुके लोटतां बहुकाळ । ती विश्वकर्मे तत्काळ । गळां घातली मारुतीच्या । ७९ समस्तीं देऊन वरदाना । गेले आपापले स्वस्थाना । वायूनें हनुमंत ते क्षणां । अंजनीजवळ आणिला । २८० मारुतीस हृदयीं धरोनी । स्फुंदस्फुंदोनि रडे जननी । मुखामाजी स्तन घालुनी । वदन कुरवाळी वेळो-वेळां । ८१ रामविजय ग्रंथ सुरस । त्यामाजी हनुमंतजन्म विशेष । श्रवण करिती जे सावकाश । ग्रहपीडा त्यांस न होय । ८२ हनुमंतजन्मकथन । निजभावें करितां श्रवण । दुष्टग्रहविघ्नें दारुण । न बाधती कदाही । ८३ पुढें रसाळ कथा बहुत । डोहळे पुसेल राजा दशरथ । अजन्मा जन्मेल रघुनाथ । तोच कथार्थ अवधारा । २८४ जैसें जों जों क्षेत्र पिकत । तों तों कणसें घनदाट दिसत । तैसे प्रसंगाहून प्रसंग बहुत । रसभरित असती पै । २८५ जयासी नाहीं पुत्रसंतान ।

प्राप्त न हो जाए'। ७८ (फिर) विश्वकर्मा (ब्रह्माजी) ने दिव्य कमल-पुष्पों की (ऐसी) माला तत्काल मारुती के गले में पहना दी, जो बहुत काल बीतने पर भी सूख न जाए। ७९ (इस प्रकार) वरदान देकर सब (देव) अपने-अपने स्थान (लौट) गये। (तदनन्तर) वायुदेव हनुमान को अंजनी के पास तत्काल ले आया। २८० मारुती को हृदय (छाती) से लगाकर (अंजनी) माता बिलख-बिलखकर रोने लगी। उसके मुख में स्तन देकर वह बारबार उसके मुख को (प्रेमपूर्वक) सहलाने लगी। ८१

यह रामविजय ग्रन्थ सुरस है। उसमें से हनुमान के जन्म की कथा विशेष रूप में जो यथावकाश श्रवण करेंगे, उन्हें ग्रहों की पीड़ा कभी भी न होगी। ८२ हनुमान के जन्म की कथा का आत्मीयता से श्रवण करने पर (उस श्रवण करनेवाले को) दुष्ट ग्रहों द्वारा निर्मित भयानक विघ्न कदापि बाधा नहीं पहुँचाते। ८३

इसके आगे बहुत रस भरी कथा है। (उसमें) राजा दशरथ दोहद पूछेंगे; अनादि भगवान् रघुनाथ जन्म ग्रहण करेंगे। उसी कथा का अर्थ ध्यान से ग्रहण करो। २८४ जिस प्रकार खेत की फसल ज्यों-ज्यों पक्व होती जाती है, त्यों त्यों भुट्टे (अधिकाधिक) घने–ठोस (रस भरे) दिखायी देते हैं, उसी प्रकार इस रामविजय में एक से एक प्रसंग रस-भरित (रसात्मक) हैं। (अर्थात् जैसे-जैसे कथा का विकास होता जाएगा, वैसे-वैसे उसमें अधिकाधिक रस बढ़ता जाएगा।) २८५

केवले तोमार पावे पशिया शरण * तयु गुण नाम करे श्रवण कीर्त्तन
सेहिसे महन्ते जाने तयु व्यवहार * मोक्षको एरिया भजे चरण तोमार ७३
कोन बेला कोन रूपे कर कोन कर्म्म * ब्रह्माये बुजिबे नपारन्त तार मर्म्म
आन कोने बुजिबेक तोमार लीलाक * बेदे नपारन्त कहि सीमा करिबाक ७४
नित्य निरंजन तुमि अनादि अनन्त * कालमायादिरो तुमि प्रभु भगवन्त
अनन्त विभूतिपति मुकुतिदायक * वेदविधायक एक जगतनायक ७५
सुख-दुखदाता दीन दरिद्रवत्सल * तुमिसे समस्ते जगतरे सुमंगल
निजानन्द लाभे पूर्ण सत्य सनातन * कारणरो कारण तुमिसे अकारण ७६
नाहिके काहातो प्रभु प्रार्थना तोमार * तुमि पुनु करा जगतके उपकार
संसारत नाहिके तोमार आविदित * जगतरे हित तुमि चिन्ता प्रतिनित ७७
नलवय जीवे जेवे तोमात शरण * तावत नेरावे जीवे उत्पति मरण
नाना पाप पुण्य करि नाना देह धरि * फुरे नाना सुख दुख फल भोग करि ७८
तुमि अज नाहि देव जनम तोमार * लीलाये धराहा नानाविध अवतार
महन्तक पाला धर्म्मपथ रक्षा करि * कराहा विनाश दुष्ट दुर्ज्जनक हरि ७९
तुमि काल मूर्त्ति सर्ब्ब संहारकारण * तुमि चराचर गुरु जगततारण
धर्म्म अर्थ काम मोक्षदाता तुमि देव * तुमि बिने संसारत सार नहीं केव ८०
निज योगबले प्रकृतिर गुण तिनि * आपोनाते आपोनाक स्रजाहा आपुनि
आपुनि पालाहा करा आपुनि संहार * आपुनि ईश्वर तुमि आपुनि संसार ८१

हम सारे जीव माया से मोहित हैं, तुम्हारी मूर्त्ति का तत्व हम कोई नहीं जानते हैं ॥ ७२ ॥ केवल तुम्हारे चरणों में शरण लेकर, तुम्हारे नाम और गुण का श्रवण और कीर्त्तन करते हैं। तुम्हारे आचरण को केवल वही मोहरहित व्यक्ति जानता है जो मोक्ष को त्याग कर तुम्हारे चरणों की सेवा करता है ॥ ७३ ॥ तुम किस समय किस प्रकार से कौन सा कर्म करते हो, इसका मर्म ब्रह्मा भी नहीं समझ पाते हैं। फिर दूसरा कौन है जो तुम्हारी लीला को समझ सके। वेद भी उसकी सीमा तक नहीं पहुँच सकता है ॥ ७४ ॥ तुम अनादि-अनन्त हो और नित्य-निरंजन हो। तुम काल, माया आदि के भी प्रभु भगवन्त हो। तुम अनन्त विभूति के स्वामी हो, मुक्तिदायक हो, वेदविधायक हो और जगत् के नायक हो ॥ ७५ ॥ तुम सुख दुख के दाता हो, दीन दरिद्रों के वत्सल हो। तुम्हीं सारे विश्व के कल्याणकारी हो। स्वयं के आनन्द की प्राप्ति में पूर्ण सत्य सनातन हो। तुम कारण के भी कारण हो और तुम्हीं कारणशून्य भी हो ॥ ७६ ॥ हे प्रभु, तुम किसी से प्रार्थना नहीं करते। तुम पुन: पुन: जगत् का उपकार करते हो। संसार में कुछ भी तुम्हारा अविदित नहीं है। नित्यप्रति तुम जगत् के हित की चिन्ता करते रहते हो ॥ ७७ ॥ जो जीव तुम्हारी शरण नहीं लेते हैं, उन सारे जीवों को जन्म और मरण के फेर में बार-बार घूमना पड़ता है। तरह-तरह के शरीर अपनाकर तरह-तरह का पाप-पुण्य कर वे तरह-तरह के सुख-दुख भोगते फिरते हैं ॥ ७८ ॥ देव, तुम्हारा जन्म नहीं होता, तुम अजन्मा हो, लीलावश विभिन्न अवतार लेते हो। सज्जनों का पालन तथा धर्म-पथ की रक्षा करते हो। दुष्टों एवं दुर्जनों का विनाश करते हो ॥ ७९ ॥ तुम काल-मूर्त्ति हो, सर्व-संहार के कारण हो, तुम चराचर के गुरु हो, जगत् के त्राता हो। देव, तुम धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के दाता हो, तुम्हारे बिना संसार में कुछ भी सार नहीं है ॥ ८० ॥ अपने योगबल से आप ही प्रकृति के गुण हो। अपने में ही अपने को स्वयं स्रजते हो। आप ही पालन करते हो और आप ही संहार करते हो। आप

कालर हातत रक्षाकर्त्ता नाहि आन * तुमि से केवल मात्र बिश्रामर थान
एक मूर्त्ति नाना मूर्त्ति नाना मूर्त्ति एक * तोमार जगत तुमि तात व्यतिरेक ८२
तुमि प्राण मन मुख चक्षु कर्ण नासा * तोमातेसे सकल जगत करे बासा
अन्तर्यामी रूपे तुमि जगत आधार * प्रवर्त्ताया यतेक जीवर ब्यवहार ८३
तोमार मुखत चारि बेद उपजिल * ब्रह्मा आदि देवर नियम नियोजिल
तोमात उपजि बेदे तोमाकेसे कय * मायाये मोहित जीवे ताक नेदेखय ८४
नाना कार्य्य कर्म्म धर्म्म करय प्रवन्धि * फुरे संसारत सेहि कामे हुया बन्दी
साधुसंग लैया जावे नभजे तोमाक * तावत नपारे कर्म्मबन्ध एराइबाक ८५
एतेकेसे एक चित्त करि देवगणे * तोमार चरणे आसि पशिलो शरणे
करियो करुणा मात्र एकलेश मान * त्रिदश देवर हौक दुख परित्राण ८६
नमो नारायण सर्ब्बजन अधिपति * नमो दयाशील देव अगतिर गति
नमो दामोदर ब्रह्ममय कलेवर * नमो बिघ्नहर नमो कृपार सागर ८७
नमो नमो त्रिभुवनपति महादेव * नमो नमो सदा त्रिजगते करे सेव
नमो बासुदेव नमो सर्ब्ब रूपधर * प्रकृतित पर नमो नमो योगेश्वर ८८
नमो शुद्ध बुद्ध नित्य निरंजन काया * हुयो सुप्रसन्न त्रिदशक करा दाया
नजानोहो स्तुति नति प्रणति तोमार * जय जय हरि हेरा गोचर आमार ८९
एहिमते देवे स्तुति करिल विस्तर * शुनिया सन्तुष्ट भैला त्रैलोक्य ईश्वर
त्रिदश देवर दुख देखि विपरीत * दाया रसे परम प्रसन्न भैला चित ९०

स्वयं ईश्वर हो और आप ही संसार भी हो ।। ८१ ।। काल के हाथों से रक्षा करने वाला कोई दूसरा नहीं है। केवल तुम्हीं विश्राम के स्थान हो। एक मूर्त्ति (अमूर्त्त) होते हुए भी अनेक मूर्त्ति बन जाते हो। तुम्हारा ही जगत् है और तुम उसमें व्यतिरेक हो ।। ८२ ।। तुम ही प्राण हो, मन हो; आँख, कान, नाक हो। तुम्हीं में सारा जगत् निवास करता है। अन्तर्यामी के रूप में तुम जगत् के आधार हो। जितने जीव हैं उनके आचरण का तुमने प्रवर्त्तन किया है ।। ८३ ।। तुम्हारे मुख से चार वेदों ने जन्म लिया है। ब्रह्मा आदि देवों के लिए तुमने नियम बना दिये। तुम्हीं से उत्पन्न होकर वेद तुम्हारी ही बात कहता है। माया से मुग्ध जीव इसको नहीं देख पाते हैं ।। ८४ ।। विभिन्न कार्य, कर्म, धर्म आदि का तुम प्रबन्ध करते हो। कार्य के बन्दी बनकर सारे संसार भर में घूमते रहते हो। साधुसंग का आश्रय लेकर जो तुम्हारा भजन नहीं करता है वह कर्म का बन्धन नहीं तुड़ा पाता है ।। ८५ ।। इस कारण सारे देवता एकचित्त होकर तुम्हारे चरणों में आकर शरण ले रहे हैं। केवल लेश-मात्र करुणा करना जिससे देवों को दुःखों से परित्राण मिल जाये ।। ८६ ।। हे सर्वजन-अधिपति नारायण, तुमको नमस्कार है। हे दयाशील देव, हे अगति के गति तुमको नमस्कार है। हे ब्रह्ममय देहधारी दामोदर तुमको नमस्कार है। हे कृपा के सागर विघ्नहरणकारी तुमको नमस्कार है ।। ८७ ।। हे त्रिभुवनपति महादेव, तुम्हारा हम नमन करते हैं। तीनों लोक सदा तुम्हारी उपासना करते हैं, तुम्हारा हम नमन करते हैं। हे वासुदेव तुमको नमस्कार है, हे सर्वरूपधर तुमको नमस्कार है। हे प्रकृति से परे योगेश्वर तुमको नमस्कार है ।। ८८ ।। हे नित्य-निरंजन-काय, शुद्ध बुद्ध तुमको नमस्कार है, सुप्रसन्न होकर देवताओं पर दया करो। हम लोग तुम्हारी स्तुति, नति, प्रणति कुछ भी नहीं जानते हैं। हम अपनी आँखों के सम्मुख तुमको निहार कर तुम्हारी जय-जयकार करते हैं ।। ८९ ।। इस प्रकार देवताओं ने पर्याप्त स्तुति की। उसे सुनकर त्रिलोकीपति विष्णु सन्तुष्ट हुए। देवताओं का दुःख देखकर

मेघर गम्भीर ध्वनि मातिला हरिषे * देवर शरीरे येन अमृत बरिषे
हे ब्रह्मा शुनियोक बचन आमार * केने एत बर दुख मिलिल तोमार ९१
मिलिल परम दुख तोमार बासव * शुना यम तयु केने भैल पराभव
वरुण तोमार नागपाश कोने निल * शुना सूर्य्यं तयु तेज केमने हरिल ९२
केने शशधर तुमि भैला कान्तिहीन * धर्म्म केने तोमार शरीर भैल क्षीण
कि शोके सुथिर गति भैला हुताशन * भैला मन्दगति तुमि किमते पवन ९३
किय बसुमती सती कराहा बिलाप * कमन दुर्ज्जने दिले तोमाक सन्ताप
सागर सुथिर वेग भैला कि कारण * कुबेर दरिद्र भैला कोने निले धन ९४
षड़ऋतु किबा हेतु भैला विपर्यय * कमने बिरूप भैला विद्याधरचय
स्वरहीन गन्धबर्ब भैलाहा कि कारण * कि हेतु कातर भैला नवग्रहगण ९५
भैलाहा स्वतंत्र पूजा एरि किबा काज * कमने प्रमाद भैला त्रिदशर माज
कहियोक सबे मोत स्वरूप वचन * तोमासार बर किबा साधो प्रयोजन५९६
बिष्णुर बचन शुनि हरिष मिलिल * सबे देवगणे बृहस्पतिक बुलिल
रावणर चरित्र कहियो बृहस्पति * मिलाइ आछे जगतर यिमत बिपत्ति५९७
शुनि देवगुरु त्रिदशर बचनक * कृतांजलि हुया चाहि कृष्ण चरणक
बुलिबाक लैला करि सुमधुर बाणी * शुनियोक परम ईश्वर चक्रपाणि५९८
त्रिभुवने नाहिके तोमार अबिदित * तथापितो तयु आगे कहिबो उचित
तोमाते जनाइले दुख हैब निबारण * एहि हेतुतेसे यत यत महाजन५९९
आपोनार सुख दुख तोमात अर्पन्त * सर्ब्ब कर्त्ता बुलि मने तोमाक भावन्त
एतेके कहिबो येने देवर दुर्गति * बेद बिशवश्रबा पुत्र रावण दुर्म्मति६००

विपरीत दया रस से उनका चित्त परम प्रसन्न हो गया ।। ९० ।। उन्होंने हर्ष से मेघ के समान गम्भीर ध्वनि की जिससे देवताओं के शरीर पर मानों अमृत बरस पड़ा। वे बोले—हे ब्रह्मा, मेरी बात सुनो, इतना बड़ा दुख तुमको किस प्रकार मिला ? ।। ९१ ।। हे इन्द्र, तुमको इतना अधिक दुःख मिला ? हे यम तुम्हारी ऐसी पराजय क्यों हुई। हे वरुण, तुम्हारा नागपाश किसने ले लिया ? हे सूर्य, तुम्हारा तेज किसने चुरा लिया ? ।। ९२ ।। हे चन्द्र, तुम कान्तिशून्य क्यों हो गये ? हे धर्म, तुम्हारा शरीर दुबला क्यों हो गया ? हे अग्नि, किस शोक से तुम्हारी गति स्थिर हो गई ? हे पवन, तुम किस प्रकार से मन्दगति बन गये ? ।। ९३ ।। हे सती वसुमती, तुम विलाप क्यों कर रही हो, किस दुष्ट ने तुमको सन्तप्त किया ? समुद्र किस कारण सुस्थिर हो गया। कुबेर क्यों दरिद्र हो गया, किसने उसका धन ले लिया ? ।। ९४ ।। किस कारण छह ऋतुओं में गड़बड़ी आ गई ? विद्याधर भी कैसे विरूप हो गये ? ये गन्धर्व स्वरशून्य किस कारण बन गये ? ये नवग्रह किस कारण दुखी हो गये ? ।। ५९५ ।। कार्य से मुक्त होकर पूजा स्वतंत्र हो गई ? देवताओं में यह विपत्ति कैसे आन पड़ी ? तुम सब मुझसे साफ साफ बता दो कि तुम सबको कौन सा प्रयोजन साधना है ।। ५९६ ।। विष्णु के वचन सुनकर हर्ष प्राप्त हुआ और देवताओं ने बृहस्पति से कहा, हे बृहस्पति, रावण का चरित्र व्योरेवार बताओ कि उसने संसार पर कैसी विपत्ति ला दी है ।। ५९७ ।। देवताओं की बात सुनकर बृहस्पति ने हाथ जोड़ कर विष्णु के चरणों की ओर देखा। सुमधुर वाणी में वे कहने लगे, हे चक्रपाणि परमेश्वर, सुनो ।। ५९८ ।। त्रिभुवन में तुम्हारा अविदित कुछ भी नहीं है। फिर भी तुम्हारे सम्मुख कहना उचित ही है। तुमको बतला देने से दुःख का निवारण होगा। इसी कारण कितने ही— और सारे के सारे महाजन— ।। ५९९ ।। —अपने-अपने सुख-दुख तुममें सौंप कर,

राक्षसर कुले निकषात जात भैल * घोर तप करिया ब्रह्मात बर लैल
सुरासुर लोकत अबध्य कलेवर * त्रिभुवन जिनि पीड़ा करे लंकेश्वर६०१
सि कारणे देवे दुख पावे बिपरीत * नाना रत्न सागरे योगावे प्रति नित
पुष्पक बिमान काढ़ि आनि कुबेरर * सेहि रथे चड़ि फुरे बीर लंकेश्वर६०२
हुया विपर्यय षड़ ऋतु निरन्तरे * संकोचित भावे रावणक सेवा करे
रावणत हन्ते आति पाया पराभव * विद्याधरी अपेस्वरी योगान्त बासव६०३
थान मांजि थाकन्त पवन महाभागे * चन्द्रे छत्र धरि यान्त रावणर आगे
नपान्त करिबे यज्ञ मुनि निरन्तरे * राक्षसक पठाइ रुधिर बृष्टि करे६०४
भये नवग्रहे भोग तेजिलेक सर्ब्ब * नृत्य गीत करि तथा थाकय गन्धर्ब्ब
कतेक कहिब प्रभु तोमार आगत * कोन देवे लाज नाहि पावे रावणत६०५
हरि निले रावणे पाइलेक यार यत * काहारो नाहिके आर कार्य विषयत
समस्तरे सम्पत्ति रावणे हरि निल * अधम राक्षसे देवताक बिड़म्बिल ६
नीच जने उत्तमक पीड़य अधिक * आमार उत्तम जन्म आछो धिक् धिक्
शुनि बृहस्पतिर बचन दामोदर * कृपाय हासिया हरि दिलन्त उत्तर ७
हे बृहस्पति कह कह भाल करि * एहि बुलि पुनु मातिलन्त देवहरि
मोर पारिषद बुलि केहो नजानय * नीच बुलि आतिशय गरिहा करय ८
कोटि एक देवे रावणक नोहे सम * सेहि भैल अधम कोन आछय उत्तम
एतेकेसे उच्च करि हासिला ईश्वरे * सागरर उर्म्मिक ढाकिला सेहि स्वरे ९

तुमको सभी कुछ का कर्त्ता-धर्त्ता मानते हैं। अब मैं देवताओं की दुर्दशा के बारे में कहूँगा। वेदज्ञ विश्वश्रवा (विश्रवा) का पुत्र हुआ दुष्ट रावण ॥ ६०० ॥ राक्षस-कुल की निकषा राक्षसी से उसका जन्म हुआ। उसने घोर तपस्या कर ब्रह्मा से वर ले लिया। सुरों और असुरों द्वारा उसका शरीर अवध्य बन गया; जिससे यह लंकेश्वर त्रिभुवन को जीत कर पीड़ा देने लगा ॥ ६०१ ॥ इसी कारण देवताओं को विशेष दुःख प्राप्त हुआ। सागर प्रतिदिन विभिन्न रत्न लेकर उसे पहुँचा रहा है। कुबेर का पुष्पक विमान छीनकर वीर लंकेश्वर उसी रथ पर घूमता फिर रहा है ॥ ६०२ ॥ निरन्तर छह ऋतुओं में भी गड़बड़ी आ गई। वे संकुचित भाव से रावण की सेवा कर रही हैं। रावण के हाथों से पूर्णरूप से पराजित होकर बासव उसको विद्याधरी और अप्सराएँ पहुँचा रहा है ॥ ६०३ ॥ मध्यस्थान में महाभाग पवन खड़ा रहता है। चन्द्र छतरी हाथ में लिए रावण के आगे आगे चलता है। मुनि निरन्तर यज्ञ नहीं कर पाते। राक्षसों को भेजकर वह (रावण) वहाँ खून की वर्षा करता है ॥ ६०४ ॥ नवग्रहों ने भय से सारा भोग त्याग दिया है। गन्धर्व वहाँ नाच कर और गाना गाकर रह रहे हैं। तुम्हारे पास प्रभु भला कितना कहें, ऐसा कोई भी देवता नहीं जो रावण द्वारा लज्जित न किया गया हो ॥ ६०५ ॥ रावण को जिसका भी जो कुछ मिला उसने चुरा लिया। किसी को भी अब अपनी सम्पत्ति से कुछ सरोकार नहीं रह गया। रावण ने सारी सम्पत्ति चुरा ली। अधम राक्षस ने देवताओं को विड़म्बित कर डाला ॥ ६ ॥ नीच व्यक्ति उत्तम व्यक्ति को अधिक पीड़ित करता है। इसलिए अपने ऐसे उत्तम जन्म को धिक्कार है। बृहस्पति की बातें सुनकर दामोदर हरि ने हँसकर उत्तर दिया ॥ ७ ॥ हे बृहस्पति, जरा अच्छी तरह से बताओ। इतना कहने पर देवगुरु बृहस्पति फिर बोलने लगे। मुझको पारिषद के रूप में कोई नहीं जानता है। नींच कहकर रावण मेरा बड़ा ही अपमान करता है ॥ ८ ॥ कोटि देवता भी रावण के समान नहीं है। वही जब इतना अधम

हरिर हासित शोभा करिल बदन * मुकुतार ज्योति जिनि प्रकाशे दशन
बुलिलन्त बचन शबद अनुपाम * सेहि शब्दे चारि पदे भैला श्लोक नाम १०
जानिलोहो बृहस्पति दुख तोमासार * राक्षस रावणे दुख दिलेक अपार
नीच हुया उत्तम देवक पीड़िलेक * अधमर पराभव लभिया अनेक ११
प्रज्वलित हुआ आछे रावण प्रखर * परम आकुल चित्त करिया देवर
शुक्रे समे उपाय करिया बलिराय * पूर्ब्बे स्वर्गपद लैला इन्द्रक खेदाइ १२
सिकाले आपुनि भैलो सहाय इन्द्रर * बलिक पाताले निलो खेदाया स्वर्गर
इबार इन्द्रक पीड़ा करे लंकानाथ * अस्त्रे हानि ताहार काटिबो दश माथ १३
हुयाछे प्रचंड बर लभिया ब्रह्मात * त्रिदश देवक मोर करे उतपात
काटिबोहो शिर करि दारुण प्रहार * तेवे गुलगुलि मोर गुचिब हियार १४
दशदिगपालर साधिबो प्रतिकार * त्रिभुवन लोकक पीड़िल दुराचार
यिहेतु सहिछो उपद्रव रावणर * शुना बृहस्पति तार स्वरूप उत्तर १५
महादुखे हरक आराधि लंकेश्वर * आपोन इच्छाये मागि लैया आछे बर
सुरासुरे जिनिबाक नपारय आने * अजर अमर महेशर बरदाने १६
ब्रह्माक आराधि सिटो आरो बर लैला * मानुषे मारिबे ब्रह्मा बरछिद्र थैला
तार बध हेतु मानुषत हैबो जात * दशरथ राजा सूर्यवंशत प्रख्यात १७
देवतार प्रयोजने चारि रूप धरि * दशरथ गृहे उपजिबो निष्ठ करि
तपस्वीर बेशे देवकार्यक साधिबो * दुराचार रावणक सबंशे बधिबो १८

हो गया तो उत्तम कौन बना रहा। इतने में विष्णु ने उच्च स्वर में हास्य किया और उस स्वर से समुद्र का कल्लोल भी नीचे दब गया ॥ ९ ॥ हास्य से हरि का सारा चेहरा खिल उठा। उनके दाँत मोतियों के समान ज्योति बिखेरने लगे। वे अनुपम शब्दों से बने वाक्य बोले। उन्हीं शब्दों से बने चार पदों का नाम श्लोक पड़ा ॥ १० ॥ हे बृहस्पति मैंने तुम लोगों के दुःख का कारण जान लिया। राक्षस रावण ने तुम लोगों को अत्यन्त कष्ट पहुँचाया। नीच होकर उसने उत्तम पद के देवताओं को पीड़ा पहुँचाई। अधम के हाथों तुम लोगों को पराजय सहनी पड़ी ॥ ११ ॥ रावण प्रखर रूप से प्रज्वलित होकर धधक रहा है और देवताओं का चित्त अत्यन्त व्याकुल कर रहा है। शुक्र के साथ परामर्श कर बलिराजा ने इससे पूर्व इन्द्र को खदेड़ कर स्वर्गपद ले लिया था ॥ १२ ॥ उन दिनों यह (विष्णु) स्वयं इन्द्र का सहायक बन गया और बलि को स्वर्ग से खदेड़ कर पाताल ले गया। अब लंकेश्वर रावण इन्द्र को क्लेश पहुँचा रहा है। मैं अस्त्र से उसके दसों सिर काट डालूँगा ॥ १३ ॥ ब्रह्मा से वर प्राप्त कर रावण बड़ा ही प्रचंड हो गया है। मेरे प्रिय देवताओं पर भी उत्पात मचाये हुए है। भीषण प्रहार से मैं इसके सिर काट डालूँगा, तभी तेरे हृदय की जलन शान्त होगी ॥ १४ ॥ दश दिग्पालों का भी प्रतिकार करूँगा। त्रिभुवन के लोगों को इस दुष्ट ने कष्ट पहुँचाया। किस कारण तुम लोग रावण का उपद्रव सह रहे हो, हे बृहस्पति मैं इसका प्रत्यक्ष उत्तर देता हूँ ॥ १५ ॥ लंकेश्वर ने अनेक कष्ट सहते हुए हर (महादेव) की आराधना की और अपनी इच्छा के अनुसार वर माँग लिया। महेश के वरदान से वह अजर अमर बन गया, सुर और असुर भी उसको युद्ध में नहीं हरा सकेंगे ॥ १६ ॥ ब्रह्मा की आराधना कर उसने और भी वर ले लिये। लेकिन ब्रह्मा ने वर में बड़ा सा छिद्र (कमी) रख दिया जिससे वह मनुष्य द्वारा मारा जायगा। उसके वध के लिए मनुष्य रूप लेकर मैं सूर्यवंश के प्रख्यात राजा दशरथ के घर जन्म लूँगा ॥ १७ ॥ देवताओं की

रावणर दश माथ काटिबो उत्सुके * आकाशेते थाकि सबे देखिबा कौतुके
मोर क्रीड़ा हेतु देवगण आछा यत * छद्मरूपे उतपति हैबा बानरत १९
शुनि त्रिदशर महा हरिष मिलिल * बजाया दुन्दुभि नृत्य करिबे लागिल
माधवे बोलन्त सबे लँयो परमाण * दशरथ नृपतिर याहा यज्ञस्थान २०
अद्भुत पुरुष साजि दिला नारायण * हाते धरि पायस सकले देवगण
भैलो परित्राण मने आनन्द मिलिल * हरिक प्रणामि यज्ञस्थानक चलिल २१
सेहि समयत लक्ष्मी बुलिलन्त बाणी * मोक किबा आज्ञा हय प्रभु चक्रपाणि
दशरथ गृहे तुमि हैबा उतपन * आमि कैत उपजिबो बुलियो बचन २२
शुनिया कौतुके बुलिलन्त दामोदर * आछन्त जनक राजा मिथिला नगर
आचरन्त राजा ऋषि धर्म्म निरन्तरे * अयोनिका हुआ थाकिबाहा तान घरे २३
एहि बुलि अन्तर्द्धन भैला देवहरि * देवगणे माधवर आज्ञा शिरे धरि
दशरथ राजार यज्ञर थाने गैला * ब्रह्मा समन्विते सबे आकाशते रैला २४
करे यज्ञ नृपति पुत्रक एकचिते * महा पुष्पबृष्टि आसि भैला आचम्बिते
ताक देखि हरिष भैलन्त सर्ब्बजन * राजार दक्षिण बाहु स्पन्दे घने घन २५
दक्षिण नयन स्पन्दे दक्षिण हृदय * पुत्र हैब हेन नृपतिर मने लय
परम आनन्द भैल हृदयत जात * सुगन्ध चम्पक माला पिन्धिया माथात २६
अगरु चन्दन शुक्लबस्त्र पिंधि गावे * नाना द्रब्ये देवक पूजन्त सर्ब्बभावे
नाना सुमंगल बाद्य बाजन बावय * शुभ हेतु सर्ब्बजने करे जय जय २७

आवश्यकता से चार रूप धारण कर दशरथ के घर में निश्चित रूप से जन्म लूँगा। तपस्वी का वेश धारण कर देवताओं का कार्य पूरा करूँगा। दुष्ट रावण का सवंश संहार करूँगा ॥ १८ ॥ रावण के दस सिर सोत्साह काट डालूँगा, तुम लोग आकाश में रहकर कौतुक से देखना। मेरी इस लीला में सारे देवता छद्मरूप धारण कर वानरों में जन्म लोगे ॥ १९ ॥ यह सुनकर देवताओं को बड़ा हर्ष उत्पन्न हुआ। वे दुन्दुभि बजाकर नाचने लग गये। माधव ने कहा, सब लोग प्रमाण प्राप्त करने के लिए राजा दशरथ के यज्ञस्थान में पहुँच जाओ ॥ २० ॥ अद्भुत पुरुष का रूप धारण कर नारायण ने अपने हाथों सब देवताओं को पायस (खीर) दिया। देवताओं को मानों कष्टों से मुक्ति मिल गई और उनके मन में बड़ा आनन्द उत्पन्न हुआ। हरि को प्रणाम कर सभी देवता यज्ञस्थल की ओर चल दिये ॥ २१ ॥ उसी समय लक्ष्मीजी ने कहा, हे चक्रपाणि, मेरे लिए क्या आज्ञा है। तुम तो दशरथ के घर में उत्पन्न होगे, यह बताओ, मैं कहाँ जन्म लूँगी ॥ २२ ॥ यह सुनकर दामोदर ने कौतुक से कहा, मिथिला नगर में जनक नाम के राजा हैं। वह राजर्षि निरन्तर धर्म का पालन करते हैं। अयोनिका (किसी योनि से उत्पन्न नहीं) बन कर तुम उस घर में रहोगी ॥ २३ ॥ यह कह कर हरि अन्तर्धान हो गये। माधव की आज्ञा शिरोधार्य कर सारे देवता दशरथ के यज्ञस्थल में जा पहुँचे और ब्रह्मा के साथ सभी आकाश में बने रहे ॥ २४ ॥ राजा पुत्र के लिए एकचित्त होकर यज्ञ कर रहे थे कि अचानक ही पुष्पवृष्टि होने लगी। यह देखकर सभी लोग हर्षमग्न हुए। राजा का दाहिना हाथ बार बार फड़कने लगा ॥ २५ ॥ दाहिनी आँख और दाहिना वक्ष भी स्पन्दित होने लगा। नृपति को लगने लगा कि पुत्र होगा। उनके हृदय में परम आनन्द का अनुभव हुआ। वे सिर पर सुगन्धपूर्ण चम्पक की माला पहन कर— ॥ २६ ॥ —बदन पर अगुरु चन्दन लगाकर और श्वेतवस्त्र पहनकर विभिन्न द्रव्यों के द्वारा सब तरह से देवता की पूजा करने लगे। विभिन्न सुमंगलकारी वाद्ययंत्र बजने लगे। कल्याण के हेतु सभी

पुत्रमंत्र जप राजा करे मने मन * सुमंगल जपन्त सकल मुनिगण
मुख्य मुख्य मुनिगणे बह्लित हुनन्त * पिंगल आकृति बह्लिकुंडत ज्वलन्त २८
अद्भुत पुरुष हाते पायस लैलन्त * यज्ञर कुंडर गैया भितर भैलन्त
आकाशत थाकि ब्रह्मा बुलिला बचन * राजार बांछित सिद्धि हैब मुनिगण २९
करियोक पूर्णाहुति कुंडर बह्लित * उठिबेक आति दिब्य पायस अमृत
परम सादरे दशरथे तांक निब * महादइ समस्तक बिबर्त्तिया दिब ३०
तेवे चारि पुत्र हैब विष्णु अवतार * करिवन्त वंश समे राजाक उद्धार
एहि बुलि ब्रह्मा निजथाने चलि गैला * अद्भुत शुनिया मुनिगण रंग भैला ३१
ऋष्यश्रृंगे पूर्णाहुति बह्लित दिलन्त * कुंड मध्य हन्ते पुरुषेक उठिलन्त
सुन्दर आकृति आति विष्णु समसर * दिब्य बस्त्र अलंकारे शोभे कलेवर ३२
माथात पिंगल जटा शरीर पिंगल * शवद गम्भीर अनु प्रकाशे उज्ज्वल
सम्पूर्ण पायस-पात्र हाते आछे धरि * ऋष्यश्रृंग हाते पाचे दिलन्त सादरि ३३
रंगे ऋष्यश्रृंगे लैला दुइ हस्त पाति * अद्भुत पुरुषे बाक्य बुलिलन्त माति
सुवर्णर पात्रत पायस थैब भरि * तिनि महादइ भुंजिवन्त भाग करि ३४
तिनित हैबेक चारि तनय राजार * साक्षाते हैबन्त नारायण अवतार
साधिवन्त जगतर परम कल्याण * एहि बुलि अद्भुत भैलन्त अन्तर्द्धान ३५
अद्भुतर कथा शुनि महामुनिगणे * बसिला पायस लैया हरिष बदने
ऋष्यश्रृंग मुनि महायज्ञ समापिला * दशरथ राजा ऋषिगणक अर्च्चिला ३६
वस्त्र अलंकार पुष्प चन्दने भूषिला * बहुबिध रत्न दिया मन सन्तोषिला
दिला राजा दक्षिणा सुवर्ण एक कोटि * मुनिसबे आशीर्ब्बाद दिला मनतुष्टि ३७

लोग जय जयकार करने लगे ॥ २७ ॥ राजा मन ही मन पुत्रमंत्र जप करने लगा। सारे मुनि सुगंगल के लिए जप करने लगे। मुख्य मुख्य मुनि अग्नि में हवन करने लगे और अग्निकुंड में एक पिंगल (पीली) आकृति प्रकाशित हो उठी ॥ २८ ॥ यह अद्भुत पुरुष हाथ में पायस लिये हुए यज्ञकुंड के बीच खड़ा हो गया। आकाश में रहकर ब्रह्मा ने कहा, हे मुनिगण, राजा की अभिलाषा पूर्ण होगी ॥ २९ ॥ यज्ञकुंड के अनल में पूर्णाहुति देन तो अमृत जैसा पायस (खीर) प्राप्त होगा। आदर सहित दशरथ उसे ग्रहण करेंगे और सारी महादेवियों को बाँट देंगे ॥ ३० ॥ तब विष्णु के अवतार चार पुत्र होंगे जो कि अपने सारे वंश के साथ राजा का उद्धार करेंगे। यह कहकर ब्रह्मा अपने निवास स्थान को लौट गये। यह अद्भुत बात सुनकर मुनि लोग अत्यन्त प्रसन्न हुए ॥ ३१ ॥ ऋष्यश्रृंग मुनि ने अग्नि में पूर्णाहुति डाली तो कुंड में से एक पुरुष निकला। उसकी आकृति विष्णु के समान बहुत ही सुन्दर थी। दिव्य वस्त्रों और आभूषणों से वे अत्यन्त शोभायमान थे ॥ ६२ ॥ उनके सिर पर पिंगलवर्ण की जटा थी, उनके शरीर का रंग भी पिंगल था। उनके शब्द गम्भीर थे और वे उज्वल प्रकाश से प्रकाशित हो रहे थे। वे हाथों में पायस का पूर्ण-पात्र लिये हुए थे। बाद में उन्होंने वह पात्र सादर ऋष्यश्रृंग के हाथों में दिया ॥ ३३ ॥ श्रृंगी ऋषि ने दोनों हाथ पसार कर उसे सानन्द ग्रहण किया। फिर अद्भुत पुरुष ने उन्हें सम्बोधित कर कहा, यह पायस स्वर्ण के पात्र में रखना। तीनों महादेवियाँ इसको बाँट कर खायेंगी ॥ ३४ ॥ तीनों से राजा के चार पुत्र होंगे, वे साक्षात् नारायण के अवतार होंगे। वे संसार का बड़ा कल्याण करेंगे। यह कहकर अद्भुत पुरुष अदृश्य हो गये ॥ ३५ ॥ अद्भुत पुरुष की बातें सुनकर महामुनिगण पायस लेकर प्रसन्नचित्त हो बैठ गये। ऋषि श्रृंगी ने यज्ञ समाप्त किया। राजा दशरथ ने ऋषियों की अर्चना

रजत बत्रिश कोटि दिला दशरथ * आशीर्ब्बाद पाया पूर्ण भैल मनोरथ
राजा प्रजा दुखी भिक्षु यतेक आछिल * अन्ने-पाने नाना दाने सबाको तुषिल ३८
राजार यज्ञक करि प्रशंसा अशेष * राजा प्रजा मुनिगण चलि गैला देश
पाचे ऋष्यश्रृंग मुनिराजक नृपति * अनेक प्रकारे पूजि करिला भकति६३९
स्तुति नति प्रणति करिया बहुमान * शान्ता समन्विते पठाइ दिला निजथान

कौशल्या कैकेयी आरु सुमित्रार पायस-भक्षण आरु राम, लक्ष्मणादि चारि भातृर जन्म

पाया राजा पायस हरिष बिपरीत * देवे येन सागरत पाइलन्त अमृत६४०
जगत दुर्ल्लभ इटो पायस साक्षात * चारि अंशे विष्णु तेज आछय इहात
दुइ भाग पायस करिया महाराज * दुइ चरु लैया गैला अन्तःपुर माज ४१
कौशल्या कैकेयी दुइ महादैक दिल * पायस भुंजिते राजा दुइहांको बुलिल
इहाक भुंजिले हैबे उत्तम सन्तति * चारि अंशे बिष्णु आसि हैब उतपति ४२
पायसर परम महिमा शुनि आति * सादरे लैलन्त दुयो जने हात पाति
हरिषे खोजन्त दुयो पायस भुंजित * सुमित्रा आसिया दुइरो आगे भैला थित ४३
किबा खाहा बाइ बुलि पुछिला बिनय * शुनि कौशल्यार दाया भैल आतिशय
कैकेयीक बुलिलन्त कौशल्या सुन्दरी * सुमित्राक निदि आमि खाइबो केन करि६४४

की ॥ ३६ ॥ उन्होंने उनको वस्त्र आभूषण पुष्प और चन्दन से विभूषित किया, अनेक रत्न आदि देकर उनके मन को सन्तुष्ट किया। राजा ने दक्षिणा के रूप में एक करोड़ सुवर्ण प्रदान किया। मुनियों ने तुष्ट होकर आशीर्वाद किया ॥ ३७ ॥ दशरथ ने बत्तीस करोड़ चाँदी (के सिक्के) प्रदान किये। आशीर्वाद प्राप्त कर उनकी मनोकामना पूर्ण हुई। राजा-प्रजा दीन-दुखी जो भी जहाँ था सभी को भोजन-पान से तुष्ट किया गया ॥ ३८ ॥ राजा के यज्ञ की अत्यधिक प्रशंसा करने के बाद राजा-प्रजा और ऋषि-मुनि अपने अपने देश चले गये। इसके बाद मुनिराज श्रृंगी ऋषि की अनेक प्रकार से पूजा कर राजा ने अपनी भक्ति प्रदर्शित की ॥ ६३९ ॥ अनेक प्रकार से स्तुति नति (विनय) और प्रणति (प्रणाम) कर उनको शान्ता के साथ अपने स्थान भेज दिया।

कौशल्या कैकेयी और सुमित्रा का पायस खाना और राम-लक्ष्मणादि चार भाइयों का जन्म

पायस (खीर) पाकर राजा को इस प्रकार अत्यन्त हर्ष उत्पन्न हुआ मानो देवताओं को समुद्र से अमृत मिल गया हो ॥ ४० ॥ यह खीर निश्चित रूप से जगत् में दुर्लभ है क्योंकि इसमें विष्णु के चार अंशों का तेज है। महाराज ने पायस को दो भागों में बाँटा फिर दो चरु लेकर वे अन्तःपुर गये ॥ ४१ ॥ दोनों महारानी कौशल्या और कैकेयी को उन्होंने दिया। राजा ने दोनों को खीर खाने के लिए कहा। इसको खाने पर उत्तम सन्तान होगी। विष्णु चार अंशों में आकर उत्पन्न होंगे ॥ ४२ ॥ पायस की ऐसी महिमा सुनकर दोनों ने हाथ बढ़ाकर सादर ग्रहण कर लिया। हर्ष से दोनों पायस खाने के लिए धीरे धीरे चलने लगीं तो सुमित्रा आकर दोनों के सामने खड़ी हो गई ॥ ६४३ ॥ दीदी क्या खा रही हो, विनयपूर्वक उसने पूछा।

चकवा चकवी चक्रवाक, बपैया मारे पियुने हाक,
सरोवरमां फूल्यां कुंज, मत्त मधुकर करता गुंज । ४ ।
मृगजूथ मळीने फरतां, तृण अंकुर लीलां चरतां,
तरु सफळ सघन गंभीर, शीतमंद सुगंध समीर । ५ ।
चारे पासे गिरि छे अगम्य, ते मध्ये मुनि आश्रम रम्य,
विभांडिक नहि स्थळ मांहे, श्रृंगी बेठा एकला त्यांहे । ६ ।
धरे ध्यान ते आसन वाळी, एक ब्रह्मनी साथे ताळी,
जेने सरवे विश्व समान, नथी स्त्री-पुरुषनुं भान । ७ ।
ते आश्रम केरी पास आवी, अप्सरा तेज प्रकाश,
मृगलोचनी भ्रूधनु वंक, स्तन पीन सिंहकटी लंक । ८ ।
चंद्रवदनी चंपकवरणी, मंदहास्य करे गति हरणी,
हावभाव अति रस लावे, कुच-मंडलने कंपावे । ९ ।
आभूषण आपे अंगे, चीरहार चोळी नव रंगे,
कर कामिनीए ग्रही वीणा, करे गान मधुर स्वर झीणा । १० ।

चकवा, चकवी (चक्रवाक-चक्रवाकी), पपीहा अपने प्रिय को पुकारते हैं। सरोवर में कमल खिले हैं; मतवाले भौंरे गुंजारव करते हैं। ४। हिरन समूह बनाकर (मिलकर) घूमते हैं और हरी ताज़ी घास के अंकुर चरते हैं। वृक्ष फलयुक्त हैं, घने और गम्भीर (बड़े) हैं और हवा सुगन्धियुक्त तथा शीतल और मन्द बह रही है। ५। चारों ओर दुर्गम पर्वत हैं। उनके मध्य में मुनि का रम्य आश्रम है। उस स्थान पर (उस समय) विभाण्डिक (ऋषि) नहीं थे; वहाँ श्रृंगी अकेले बैठे हुए थे। ६। जिन्हें समूचा विश्व एक-सा (समान) था, स्त्री-पुरुष (के भेद) का भान नहीं था, ऐसे वे श्रृंगी ऋषि स्वच्छ आसन पर ध्यान लगाये हुए हैं; केवल ब्रह्म में वे तल्लीन थे। ७। वह तेजस्विनी, रूप के प्रकाशवाली अप्सरा उस आश्रम के पास आयी। वह मृगनयनी थी; उसकी भौंहें धनुष्य-सी टेढ़ी थीं। उसके स्तन पुष्ट थे। वह सिंह-की सी पतली कमरवाली थी। ८। वह चन्द्रमुखी और चम्पा के समान वर्णवाली अप्सरा है। वह मन्द-मन्द मुस्कुराती है। वह गति में (मानो) हिरनी है। उसके हाव-भाव अतिशय आनन्द (रस) उत्पन्न करते हैं और स्तन-मण्डल को हिलाते हैं। ९। उसने शरीर पर आभूषण तथा नव-नव रंग के वस्त्र, हार और चोली पहनी है। उस कामिनी ने हाथ में वीणा ली है। जिसके गायन (के प्रभाव) से सूर्य स्थिर हो जाता है, शेषनाग अपार गति से डोलने लगता है, ऐसी वह रम्भा मधुर स्वर में गा रही है। (उसे सुनकर)

जेना गानथी दिनकर थंभे, फणी डोले अनंत असंभे,
मृगनुं जूथ आवी मळियुं, थया तन्मय भान ज टळियुं । ११ ।
मुनि श्रवण पडचुं ते गान, नेत्र ऊघडचां छूटचुं ध्यान,
छे मृगथकी उत्पन्न, माटे नादे मोह्या मुनिजंन । १२ ।
उठी बारणे आव्या चाली, दीठी रंभा रूपरसाळी,
मन जाण्युं को आव्या मुन्य, मुजने करवा पावन । १३ ।
नथी नर-नारीनुं भान, सघळे एक दृष्टि समान,
धसी आव्या तेनी पास, मनमां आणी उल्लास । १४ ।
करी प्रदक्षिणा पाये लाग्या, त्रिये आलिंगी अनुराग्या,
धन्य दिवस घडी महाराज, मा'नुभाव पधार्या आज । १५ ।
आवो रूडो तमारो वेश, क्यांथी आव्या रहो कोण देश?
कोण वनमां आचरो तप, कोण गुरु शो मंत्रनो जप ? । १६ ।
हसीने बोली तव रंभा, तपनुं स्थळ स्वर्ग आ रंभा,
गुरु मन्मथ जप मोह, मंत्र रति आसन तपनुं तंत्र । १७ ।
पंचबाण अमारो प्रयोग, समाधिसुख अंग-संयोग,
एवुं वचन सुणी मुनि त्यांहे, तेडी लाव्या आश्रममांहे । १८ ।

मृगों का समूह इकट्ठा हुआ और वे मृग तल्लीन हो गये, उनका भान भूल गया । १०-११ । वह गायन मुनि के कानों पर आया, तो उनकी आँखें खुल गयीं, उनका ध्यान छूट गया । वे मृगी से उत्पन्न हुए हैं, इसलिए उस नाद से वे मुनि मोहित हो गये । १२ । उठकर वे दरवाज़े के पास चले आये तो उन्हें सुन्दर रूपवती रम्भा दिखायी दी । उन्हें मन में ऐसा लगा कि मुझे पवित्र करने हेतु ये कोई मुनि (ही) आये (हैं) । १३ । उन्हें पुरुष और स्त्री (के भेद) का भान नहीं है । उनकी दृष्टि में सब एक समान हैं । मन में उल्लसित होकर वे उस (रम्भा) के पास आये । १४ । प्रदक्षिणा करके वे उसके पाँव लगे । उस स्त्री के आलिंगन करने पर वे (मन में उसके प्रति) अनुरक्त हो गये । (उन्होंने कहा—) 'महाराज, यह दिवस धन्य है ! यह घड़ी धन्य है, जब तुम महानुभाव पधारे । १५ । आओ, तुम्हारा वेश सुन्दर है । तुम कहाँ से आये ? तुम किस देश में रहते हो ? किस वन में तप करते हो ? तुम्हारे कौन गुरु हैं ? तुम किस मंत्र का जाप करते हो ?' । १६ । तब रम्भा हँस कर बोली—'यह मैं रम्भा हूँ । स्वर्ग मेरे तप का स्थान है । कामदेव (मेरे) गुरु हैं । मेरे लिए जप है मोह मंत्र का, और रति का आसन तप का तंत्र (पद्धति) है । १७ । हमारा प्रयोग पंचबाण (काम)

आप्युं आसन भाव समान, करी स्वागत आदरमान,,
पासे लावी मूक्यां वनफळ, कमंडळु भरीने जळ । १९ ।
फळ आरोगो मुनिजंन, त्यारे अप्सरा बोली वचन,
ए फळ आरोगुं नहि, जुओ अम फळ छे आ सही । २० ।
एवुं कहीने काढयुं पकवान्न, घृतपक्व पीयूष समान,
ते मुनिने कराव्युं अशन, लाग्युं स्वाद थया प्रसन्न । २१ ।
धन्य मुनिवर तम अवतार, आवा फळनो करो नित्य आहार,
तमारुं तप आसन योग, देखाडो मुंने ते करी भोग । २२ ।
मारे आश्रम रहो हवे तमो, नित सेवा करीशुं अमो,
एम रंभा रही आश्रम, करे कामकळा अनुक्रम । २३ ।
निज अमरत भोजन आहार, मुनिने करावे निर्धार,
शयन करतां एक आसन, मुनिनुं थयुं चंचळ मन । २४ ।
रमे रति सुख आसने भेद, काम व्याप्यो टाळ्यो निर्वेद,
माया ईश्वरनी बळवान, भूल्या जोग समाधि ध्यान । २५ ।

का है, अंग-संयोग हमारे लिए समाधि-सुख है'। उसके ऐसे वचन सुनकर (शृंगी) मुनि उसे वहाँ से अपने आश्रम में ले आये। १८। समान (स्त्री-पुरुष के प्रति एक-से) भाव से मुनि ने उसका स्वागत एवं आदर-सम्मान करके उसे आसन दिया। (उसके) पास में वन्य फल लाकर उसे दिये और कमण्डलु (में) भरकर पानी दिया। १९। (और कहा—) 'हे मुनि, (ये) फल खाओ।' तब (वह) अप्सरा बोली—'मैं ये फल नहीं खाती। देखो, हमारा सच्चा फल यह है'। २०। ऐसा कहकर उसने पक्वान्न निकाल लिया, जो घी में पकाया हुआ (और) अमृत के समान (मधुर) था। उसने उसे मुनि शृंगी को खिलाया। उसमें उन्हें स्वाद आया—अर्थात् उन्हें वह रुचिकर लगा और वे प्रसन्न हो गये। २१। (उन्होंने कहा—) 'हे मुनिवर, तुम्हारा अवतार (जीना) धन्य है, जो तुम ऐसे फल का आहार नित्य करते हो। हे मुनि, मुझे अपना तप, आसन और योग का (स्वयं) भोग (प्रयोग) करके दिखाओ। २२। अब तुम मेरे आश्रम में रहो। हम (तुम्हारी) नित्य सेवा करेंगे'। इस प्रकार रम्भा (उनके) आश्रम में रही। वह कामकला का उपक्रम आरम्भ करती है। २३। वह निश्चय ही मुनि शृंगी को अपने अमृत (के समान मधुर) भोजन का आहार कराती। वे (दोनों) एक आसन (शय्या) पर सोया करते। (इससे) मुनि का मन चंचल हो गया। २४। वे आसन (शय्या) पर रति सुख का आनन्द मनाते। उन्हें काम व्याप्त

बळवान इंद्रिनुं ग्राम, मन आकर्ष्युं अभिराम,
त्रिया मांहे थया तदाकार जाण्यो जग्त तणो व्यवहार । २६ ।
एम वही गया केटला दिन, आव्या विभांडिक मुनिजन,
रंभाए जाण्युं देशे शाप, सुत भ्रष्ट कर्यो में आप । २७ ।
एवुं जाणीने सामी आवी, रही चरणे शीश नमावी,
हुं छुं शरण तमारे स्वामी, आवी छुं परमारथ कामी । २८ ।
मुनि कहे, बाई तुं छे कोण ? शें कारणे अहीं आवी जाण,
अबळा कहे, सुणो महाराज, अयोध्याना दशरथराज । २९ ।
तेने पुत्र नथी उत्पन्न, ते माटे करवो छे जगन,
कह्युं बृहस्पतिए तेडी लावो, शृंगी पासे यज्ञ करावो । ३० ।
आपी आज्ञा मने सुरनाथ, शृंगीने मोकलो मारी साथ,
एवुं कहीने रही जेटले, शृंगी धाई आव्यो तेटले । ३१ ।
मुनिने पाये लाग्या उल्लास, पक्षी बोल्या वचन प्रकाश,
सुणो पिता कहुं वरतांत, आ मुनिवर मोटा महांत । ३२ ।

(अति प्रभावित) कर गया और उनकी शान्ति को नष्ट कर गया। ईश्वर की माया बलवती होती है। उससे वे मुनि योग, समाधि, ध्यान भूल गये। २५। इन्द्रियों का समूह बलवान् होता है। उसने सुन्दर (सरल) मन को मुग्ध-मोहित कर डाला। अतः वे मुनि स्त्री में एकाकार (एकात्म) हो गये और (इस प्रकार) जगत् के व्यवहार को समझ गये। २६। इस प्रकार कितने ही (बहुत) दिन बीत गये, तो विभाण्डिक मुनि (लौट) आये। (तब) रम्भा ने माना कि मैंने स्वयं (इनके) पुत्र को भ्रष्ट किया (है), अतः ये मुझे शाप देंगे। २७। ऐसा जानकर वह (उनके) सामने आयी और उनके चरणों में सिर नवाकर रही। (उसने कहा—) 'स्वामी, परमार्थ (कल्याण) की कामना करने वाली मैं तुम्हारी शरण में आयी हूँ'। २८। मुनि (विभाण्डिक) ने कहा—'हे स्त्री' तुम कौन हो ? किस कारण से यहाँ आयीं ? ' (तब) उस स्त्री ने कहा—' महाराज, सुनो। अयोध्या के दशरथ राजा हैं। उनके (कोई) पुत्र उत्पन्न नहीं (हुआ) है, इसलिए (उन्हें) यज्ञ करना है। बृहस्पति ने (उनसे) कहा कि शृंगी ऋषि को लिवा ले जाओ और उनसे यज्ञ कराओ। २९-३०। (तब) मुझे इन्द्र ने आज्ञा दी। अतः शृंगी को मेरे साथ में भेज दो '। इतना वह कह ही रही थी कि शृंगी दौड़ते हुए (वहाँ) आ गये। ३१। वे मुनि विभाण्डिक के उल्लासपूर्वक पाँव लगे और बाद में प्रकट रूप में बोले— ' पिताजी, समाचार सुनो। ये मुनिवर बड़े

योग आसन साधनवंत, फळ लाव्या छे स्वाद अनंत,
(त्यारे) मुनिए धरि जोयुं ध्यान, पुत्र भ्रष्ट थयो गयुं भान । ३३ ।
अबळाने जो दउं शाप, तो ए पुत्र मरे परिताप,
सर्वज्ञ विभांडिक जेह, मनमांहे विचार्युं एह । ३४ ।
अवतरवाना छे भगवंन, माटे लेई जवा देउं तंन,
ए पुत्र करावशे योग, थाशे निर्मळ जश महाभाग । ३५ ।
एवुं विचारी बोल्या मुन, सुण पुत्र कहुं ते वचन,
जाओ रंभानी साथे आज, करो नृप दशरथनुं काज । ३६ ।
कराओ पुत्रेष्टि जगंन, जाओ राखी धीरज मंन,
विभांडिकना सुणी वचन, रंभा लेई चाली मुनिजंन । ३७ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

मुनिवरने रंभा लेई आवी, अवधपुर मोझार रे,
शृंगीने जोई दशरथ हरख्या, स्वागत कीधुं अपार रे । ३८ ।

* * *

महान् हैं । ३२ । योग, आसन, साधना वाले (—के जानकार) हैं, वे अद्‌भुत रुचि वाले फल लाये हैं'। तब मुनि ने ध्यान धारण करके देखा तो उन्हें भान हो गया कि पुत्र भ्रष्ट हो गया है । ३३ । उन्होंने सोचा— यदि इस स्त्री को शाप दूँ तो दुःख से यह पुत्र मरेगा । विभाण्डिक तो सर्वज्ञ थे । उन्होंने मन में ऐसा विचार किया । ३४ । भगवान् अवतरित होने वाले हैं, इसलिए पुत्र को ले जाने दूँ । यह पुत्र यज्ञ कराएगा तो इस महाभाग की निर्मल कीर्ति हो जाएगी । ३५ । ऐसा विचार कर मुनि बोले—'पुत्र सुनो, मैं तुमसे (यह) वचन कहता हूँ । आज तुम रम्भा के साथ जाओ और राजा दशरथ का कार्य (सम्पन्न) करो । ३६ । पुत्रेष्टि यज्ञ (सम्पन्न) कराओ । मन में धीरज रखकर जाओ'। विभाण्डिक के वचन सुनकर रम्भा शृंगी मुनि को ले चली । ३७ ।

रम्भा मुनिवर शृंगी को अयोध्या में ले आयी । शृंगी को देखकर दशरथ आनन्दित हो गये और उन्होंने (उनका) स्वागत किया । ३८ ।

* * *

अध्याय–१२ (दशरथ द्वारा पुत्रेष्टियज्ञ करना)

राग धनाश्री

श्रृंगी आव्या अयोध्या मोझार जी,
दशरथे पूज्या अरच्या अपार जी,
रंभा मूकी गई सुरलोक जी,
मुनिने व्याप्यो विजोग शोक जी । १ ।

ढाळ

थयो शोक संग विजोगनो, सुख संभारी रंभा तणुं,
पछी भोजन आच्छादन वडे, रात्रे मुनि संतोष्या घणुं । २ ।
शुभ कन्या एक ब्राह्मण तणी, राय दशरथे पाळी हती,
ते परणावी श्रृंगी ऋषिने, लग्नविधिए महामति । ३ ।
वसिष्ठ गुरुने पूछीने, उपचार यज्ञ तणो कर्यो,
शुभ लग्न मांहे राय जी, आरंभ विधिए अनुसर्यो । ४ ।
अनेक मुनिवर मळ्या छे, ते शब्द स्वाहा ऊचरे,
हुतद्रव्य होमे सफळ मंत्रे, विप्र वेदधुनि करे । ५ ।
सकळ मुनिना साथ मांहे, मुख्य श्रृंगी छे तथा,
(जेम) तारामंडळ मांहे शोभे, रोहिणीवर सरवदा । ६ ।

अध्याय–१२ दशरथ द्वारा पुत्रेष्टि यज्ञ करना

श्रृंगी ऋषि अयोध्या में आये, (तो) दशरथ ने उनका बहुत पूजन-अर्चन किया। रम्भा (मुनि को वहाँ) छोड़कर देवलोक (में लौट) गयी, (तो) मुनि को वियोग (विरह) का दुःख व्याप्त कर गया। १। रम्भा के (साथ रहने से मिलनेवाले) सुख का स्मरण कर मुनि श्रृंगी को उसकी संगति से बिछुड़ने का शोक (दुःख) हुआ। (फिर भी) बाद में रात को भोजन तथा आच्छादान (वस्त्र-प्रावरण) से मुनि बहुत सन्तुष्ट हो गये। २। (किसी) एक ब्राह्मण की शुभ (—लक्षणा) कन्या राजा दशरथ द्वारा पाली हुई (अर्थात् लालित-पालित) थी। उस महामति राजा ने उसका परिणय (विवाह) लग्न-विधि पूर्वक श्रृंगी ऋषि से कराया। ३। दशरथ राजा ने वसिष्ठ गुरु से पूछकर यज्ञ का अनुष्ठान किया (और) शुभ मुहूर्त पर विधिपूर्वक (यज्ञ का) आरम्भ किया। ४। (उस अवसर पर) अनेक बड़े-बड़े मुनि इकट्ठा हो गये हैं। वे 'स्वाहा' शब्द का उच्चारण करते और मंत्रपूर्वक आहुति-द्रव्य फल सहित होम में

पूर्णाहुति थई यज्ञनी, त्यारे प्रगट अग्नि नरखिया,
यज्ञनारायण रूप जोईने, मुनि सरवे हरखिया । ७ ।
चत्वारी श्रृंग ने सप्त पाणि, चरण त्रय द्रय शीश,
एम ज्वाला मांही प्रगट मूर्ति, जोई हरख्या अवधीश । ८ ।
पयसान्ननु पात्र करमां, आप्युं श्रृंगी हाथ,
त्रिपिंड करी भक्षण करावो, त्रिराणीने साथ । ९ ।
प्रसाद आपी श्रृंगीने हवा, अनल अंतरधान,
श्रृंगीए आप्यो वसिष्ठने, अति घणो आदरमान । १० ।
(त्यारे) वसिप्ठे वहेंचण करी, त्रण पिंड कीधा ने तणा,
जेष्ठ भाग आप्यो कौशल्याने, जेना गुण छे अति घणा । ११ ।
ते थकी मध्यम भाग बे ते, कर्या बह्मकुमार,
केकै सुमित्रा त्रणे कर, चर आपिया तेणी वार । १२ ।
केकै रिसाई ते समे, करी कोप बोली वाण,
चर जेष्ठ आप्यो कौशल्याने, शुं अधिक मुजथी जाण । १३ ।
हुं घणी वहाली रायने, में कर्या बहु उपकार,
में जिताडचा संग्राममां, जश पामिया निरधार । १४ ।

समर्पित करते ; ब्राह्मण वेदमंत्रों का पठन करते । ५ । तब सब ऋषियों के साथ (समूह) में मुख्य श्रृंगी ऋषि हैं । वे उनमें वैसे ही शोभायमान थे, जैसे तारों के समुदाय में रोहिणी-पति चन्द्रमा होता है । ६ । यज्ञ की पूर्णाहुति (सम्पन्न) हो गयी, तब अग्निदेव प्रकट हो गये । यज्ञ नारायण का रूप देखकर सब मुनि हर्षित हो गये । ७ । चार सींग और सात हाथ, तीन चरण और दो मस्तक—इनसे युक्त (यज्ञ नारायण की) मूर्त्ति ज्वाला में से प्रकट हो गयी । उसे देखकर अवधेश दशरथ आनन्दित हो गये । ८ । उनके हाथ में जो पायस (प्रसाद) अन्न का पात्र था, उन्होंने वह श्रृंगी ऋषि के हाथ में दिया (और कहा—) ‘ इसके तीन पिण्ड बनाकर तीनों रानियों को साथ में खाने को दो ’ । ९ । श्रृंगी को प्रसाद देकर अग्निदेव अन्तर्धान हो गये । श्रृंगी ने वह (पायस) अतिशय आदर-सम्मान-पूर्वक वसिष्ठ को दिया । १० । तब वसिष्ठ ने उसका विभाजन करके उसके तीन पिण्ड बनाये । जिसमें अत्यधिक गुण थे, ऐसी कौसल्या को उन्होंने सबसे बड़ा भाग दिया । ११ । (फिर) ब्रह्माजी के पुत्र वसिष्ठ ने उससे मध्यम (आकार वाले) दो भाग किये (और) कैकेयी और सुमित्रा के हाथों में (उन्होंने) उस समय चरु-हविष्यान्न दिया । १२ । उस समय कैकेयी रूठ गयी । यह क्रोध करके यह वचन बोली— ‘ मुझसे क्या

(त्यारे) ब्रह्मनंदन कहे राणी, करो चर प्राशंन,
जो झाझी वार लगाडशो तो, थशे कांई विघन । १५ ।
एम कहेतामां कौतुक थयुं, एक समडी आवी त्यांहे,
झडप मारी पिंड लीधो, ऊडी गई नभ मांहे । १६ ।
कल्पांत केकै करे छे अति, नेत्रे आंसु धार,
शोक धरती रुदन करती, थयो हाहाकार । १७ ।
त्यारे कौशल्याने नेत्रे समस्या, करी दशरथ राय,
सुमित्रानी सामुं जोयुं, समजी ते अभिप्राय । १८ ।
कौशल्या निज चर विषेथी, आप्यो चोथो भाग,
वळी सुमित्राए आपियो, तेटलो धरी अनुराग । १९ ।
कौशल्या ने सुमित्राना, चर तणा बे अंश,
ते केकैये भक्षण कर्या, एम संतोषी अवतंश । २० ।
राणीओ चर भक्षण करी, अति हरखियो मन मांहे,
घणां दान आप्यां रायजी, मुनिवर लाव्या त्यांहे । २१ ।

(किसमें) अधिक (बड़ी) जानकर (प्रसाद का) बड़ा भाग कौसल्या को दिया ? । १३ । मैं राजा की बहुत प्यारी हूँ । मैंने (उनका) बहुत उपकार किया । मैंने उन्हें युद्ध में जितवाया (विजयी बनाया), और निश्चय ही यश प्राप्त कराया '। १४ । तब ब्रह्मा के पुत्र वसिष्ठ ने कहा— 'रानी, यह चरु प्राशन (भक्षण) करो । यदि अधिक समय लगाओगी, तो कुछ विघ्न (संकट) उत्पन्न होगा '। १५ । ऐसा कहते (समय) ही एक आश्चर्य हुआ । एक चील वहाँ आयी । लपककर उसने पिण्ड (छीन) लिया, (और) उड़कर वह आकाश में गयी । १६ । तब कैकेयी भयंकर विलाप करती है । उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बहती है । वह शोक करती है, रोती है । (इस प्रकार) हाहाकार होने लगा । १७ । तब दशरथ राजा ने कौसल्या को आँख से इशारा किया । उन्होंने सुमित्रा के सामने भी देखा, तो वह मतलब समझ गयी । १८ । कौसल्या ने अपने चरु में से चौथा भाग कैकेयी को दिया । इसके अतिरिक्त सुमित्रा ने (भी) प्रेमपूर्वक उतना (ही) भाग उसे दिया । १९ । कौसल्या और सुमित्रा के चरु के दो भाग कैकेयी ने खा लिये । इससे वह नारियों में श्रेष्ठ (कैकेयी) सन्तुष्ट हो गयी । २० । रानियाँ चरु को खाकर मन में अतिशय आनन्दित हो गयीं । राजा वहाँ श्रेष्ठ मुनियों को बुला लाये और उन्होंने बहुत दान दिया । २१ ।

प्रणुतिंपदगुनट्टि फणितार यंदु । गणितकर्कटकलग्नंबुन गवल
धवळलोचन सुमित्रादेवि मित्र । चरितुल लक्ष्मण शत्रुघ्नुल गनें
दिविन्मोसें नपुड्डु देवदुंदुभुलु । दिविनाडिरपुड्डु देवकामिनुलु
सौरिदि बुव्वुलवान सोनलै कुरिसें । बरितोषमंदिरि ब्रह्मादि सुरलु
गलय नयोध्यलो गलवारलेल्ल । वेलसिरुत्सवमुल वीरु वारनक
अप्पुड्डु दशरथुडनघु वसिष्ठु । रप्पिंचि जातकर्ममुल सेयिंचि
पुत्रोत्सवंबुनु बौरयिंचें नेलमि । नेत्रोत्सवंबुगा निखिल पौरुलकु
बुरुड्डु दीऱिन यंत बुण्याहवेळ । 'वरुस ना सुतलकु वंशोन्नतुलकु
नामकरणमुलु नलुवुरकिप्पु । डेमरकीवु सेयिंपु वसिष्ठ'
यनवुड्डु 'नौगाक' यनि तन मदिनि । गनुगोनियतड्डुनु गौसल्यसुतुकु ५७०
रमुक्रीडयनि धातु राजिल्लुचुंड । रमयति यनन्नोप्पु रामनामंबु
कैकेयि तनयुंड्डु घन बलान्वितुड्डु । सुकुमार तनुड्डु सुश्लोकुंड्डु गान
भरतनामंबुन बरुगु, सुमित्र । किरवैन सुतुलकु निंपुसोम्पसग

जिस प्रकार अदिति ने इन्द्र को और प्राच्य (दिशा)-सती ने चन्द्र को जन्म दिया था, उसी प्रकार भूलोक-विनुत (प्रख्यात) पुण्य नक्षत्र युक्त मीन लग्न में कमलाप्त (सूर्य) सम तेज वाले सूर्यवंशी भरत को, कमलनेत्रों वाली कैकयी ने जन्म दिया । ॥ ५६० ॥

—स्तुत्य फणितारा (आश्लेषा नक्षत्र) युक्त कर्क लग्न में तरल लोचनों वाली सुमित्रा ने समान चरित्र वाले जुड़वे लक्ष्मण और शत्रुघ्न को जन्म दिया । तब आकाश में देवदुंदुभियाँ बज उठीं, स्वर्ग में देवस्त्रियों ने नृत्य किया, पुष्पों की अत्यधिक वृष्टि धाराओं के रूप में होने लगी, ब्रह्मादि देवता परितुष्ट हुए, अयोध्या में रहने वाले सभी लोगों ने उत्सव मनाया । तब दशरथ ने पुण्यात्मा वसिष्ट को बुलाकर, जातकर्म करवाए । समस्त पौर-जनों को नेत्रोत्सव प्राप्त हो, इस प्रकार आनन्द से पुत्रोत्सव मनाया । जात शौच के समाप्त होते ही एक पुनीत दिन को (राजा ने वसिष्ट से कहा) 'हे वसिष्ट ! क्रम से मेरे पुत्रों को, वंशोद्धारकों को, इन चारों को अविलम्ब आप नामकरण करवाइए ।' (राजा के) ऐसा कहने पर, हामी भरकर, अपने मन में सोचकर उन्होंने (वसिष्ट ने) कहा कि कौसल्या के पुत्र को, ॥ ५७० ॥

—'रम्' अर्थात् 'क्रीडा' नामक धातु के विराजमान होते देख, 'रमयति' अर्थ देने वाला रामनाम उचित रहेगा । कैकयी का पुत्र अधिक बलान्वित सुकुमार शरीर वाला, कीर्तिवान् होने से भरत के नाम से प्रवर्तित होगा । सुमित्रा के योग्य पुत्रों के सुन्दर तथा श्रेष्ठ गुणों का विचार करने से उनके

लक्ष्यंबु गुणमुलु लक्षिंचि चूड । लक्ष्मण शत्रुघ्नुलनु नाममोंदवु
गान वीरुलु महाघनपुण्यमहिमु । लीनलुवुरकुनु निवि नाममुलन
लक्ष्मी समन्वितुलकु रामभरत । लक्ष्मणशत्रुघ्न ललिताख्यलेसग
नोंगि नामकरणंबुलोंप्प गाविंचि । तग नर्द्धकोट्लु दानंबुलिच्चें५७७

दाशरथुल बाल्यमु

वारुनु दल्लुलु वरुस दादुलुनु । बोरामि दमु नर्थि बोषिंप बेरिगि
कल्लरि नगवुल गन्नुलु देरचि । यल्लनल्लन दप्पुटडुगुलु वेट्टि
मल्लडिगोनु वोक्कुमाटलु नेर्चि । येल्लवारिकि जाल निंपु लोनर्चि५८०
कोंद्दिगा मुत्तेम्पु गोनबुवज्राल । मद्दिकायल डालु मलय जेक्किळ्ळ
ब्राकटंबुग फालबालेंदु कळल । श्रीकराकृति राविरेकलल्लाड
बोंगडोन्दु मगराल पुलिगोळ्ळ गोलुसु । जिगि डेन्दमुलयंदु जिदुलु द्रोक्क
नेंडनेंड बलुपच्चले यड्डिगलुग । गडुनोंप्पु मोलनूगंटलु मोरय
मुव्वलंदेलु पदंबुल रोंदल् सेय । नव्वुलाटल बाल्यनटनलेर्पडग
विद्देलु नेरपुचु विभुनि मुंदरनु । मुद्दलुगुलुकुचु मोहनाकृतुल

लिए लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न नाम (उपयुक्त) होंगे। इसलिए वीर, महाघनपुण्यमहिमा से युक्त इन चारों के ये नाम होंगे।' उन लक्ष्मी-समन्वित (राजकुमारों) को राम, भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न आदि ललित नाम देकर (राजा ने) नामकरण-संकस्कार सम्पन्न किया और अर्द्ध कोटि (धन) दान में दिया। ॥ ५७७ ॥

दाशरथियों का बाल्य (बचपन)

वे (बालक) माताओं तथा धाइयों के स्नेह और इच्छा से पालन-पोषण के कारण बढ़ने लगे। वे कृतक (भोली-भाली) हँसी के साथ आँखें खोलने लगे, धीरे-धीरे अटकटाते हुए चरण धरने लगे, बालोचित तुतली बोली सीखकर सभी लोगों को अत्यन्त आनन्द प्रदान करने लगे। ॥ ५८० ॥

—कतिपय मोती (और) मनोहर वज्रों से बने कर्णालंकार की छबि (उनके) कपोलों पर प्रतिबिम्बित हो रही थी। स्पष्ट रूप से भालरूपी चन्द्रकला पर श्रीकर, पत्ते के आकार वाला आभूषण शोभा दे रहा था। श्रेष्ठ मणियों से खचित बघनखाओं के हार की शोभा वक्षस्थल पर विराज रही थी। स्थान-स्थान पर (बीच-बीच में) हरे रंग की मणियों से युक्त कंठहार था। अति सुन्दर करधनी के घुंघुरू बज रहे थे। घुंघुरूदार नूपुर चरणों में मुखरित हो रहे थे। हँसते-खेलते वे बालक्रीड़ाएँ करते

नंतना नलुवुरु नभिवृद्धि बॊन्दि । संततपुण्युलु समसत्त्वुलगुच्चु
दमलोन गवगूडि दशरथात्मजुलु । रमणीयमूर्तुलु रामलक्ष्मणुलु
भरतशत्रुघ्नुलु पायक चॆलिमि । निरतुलैयुंडिरि नॆगडि यॊकनाडु
मायाविनोदमुल्मरिगि याडगनु । नायॆड रघुरामुडाप्तुलु दानु
निंडारु प्रेमतो नॆट्टलु गट्टि । चॆन्डुनु दंडंबु चॆलुवॊप्प बट्टि
तरमिडि याडॆडुतरिनि गैकेयि । वरवुडामंथर वडि नेगुदॆञ्चि
चिट्टंटु चेतल जॆन्डु दट्टुटयु । गट्टल्क रामुडाकाष्टंबुचेत
नडचिन नॊक्क कालप्पुडे विरिगॆ । दडयक यंदंद दमकिंचि रामु
नडरॆडु वेड्कतो नाडंग जूचि । दडयक रामुपै दगग्रूरमुंचि
विरिगिन कालितो वॆस गैकनगरि । करिगि तद्वृत्तांतमंतयु दॆलुप
दरमिडि कैकेयि दशरथाधिपुन । कॆरिगिंप नंतयु नॆरिगि भूविभुडु
अलवसिष्ठुनि नयोध्यकु राविंचि ।वलगॊनि म्रॊक्कि 'यो वरमुनिचंद्र!
वीरिकि वेदादि विद्यलन्नियुनु । नेरुपु' डनुचु ना नृपुडप्पगिंप
ननघुंडम्मुनिनाथु डट्ल काविंचॆ ।जननाथु तनयु लासंयमि करुण

हुए राजा के सामने अतिप्रिय रूप में, मनोहर आकृतियों के साथ अपनी विद्याएँ प्रदर्शित करते थे। इस प्रकार विकास को प्राप्तकर, सतत पुण्यवान (और) सम सत्त्व (शक्ति) वाले होते हुए दशरथ के वे चारों पुत्र आपस में जोड़ियां बना लेते। रमणीय आकार वाले राम और लक्ष्मण तथा भरत (और) शत्रुघ्न (जोड़ी बनाकर) निरन्तर प्रेम भाव में मग्न रहते। वे एक दिन माया-बिनोद में मग्न होकर खेल रहे थे। उस समय रघुराम आप्त मित्रों और स्वयं, ॥ ५९० ॥

—बड़े प्रेम से जोड़ियाँ बनाकर, गेंद तथा डंडे को सुन्दर रूप से हाथ में लेकर अतीव प्रीति से खेल रहे थे। उस समय कैकयी की दासी मंथरा वेग से वहाँ आई और कुतूहलवश गेंद को रोक लिया। (इस पर) राम ने अत्यन्त क्रोध से उस डंडे से (उस पर) प्रहार किया, (जिससे) उसी समय उसकी टाँग टूट गई। (इसके पश्चात् भी) वह (मंथरा) वहीं रुक कर राम को अधिक उत्साह से खेलते देखकर उन पर क्रुद्ध हुई, (और तब) देरी न करके राम पर मन में क्रोध रखकर, टूटी टाँग से कैकयी की नगरी (महल) में जाकर, (उसने) वह सारा वृत्तान्त कह सुनाया। कुतूहल से कैकयी ने दशरथ राजा को सुनाया। (यह) सब कुछ जानकर राजा ने उन वसिष्ट को अयोध्या में बुलाकर, भक्तिभाव से प्रणाम कर बोले, 'हे श्रेष्ठ मुनिचन्द्र! (आप) इनको वेद आदि सारी विद्याएँ सिखाएँ।' यह

गरिहयारोहण क्रममुलॆरिंगि । वररथारोहण वैखरुल्दॆलिसि
यखिलवेदंबुलु नखिलशास्त्रमुलु । नखिल शस्त्रास्त्रविद्यलु नेर्चिरॊप्प
वारिलो रामुडवार्यशौर्यमुन । सारविवेकादि सद्गुणावळुल
देजरिल्लुचु विष्णुदेवुंडुगान । राजिल्लॆ ना दशरथुड्नु नंत६०४

विश्वामित्रुडु दशरथुनिकडकु वच्चुट

गॊडुकुल पॆण्ड्लिड्लु कॊमरॊप्प जेय । नडरि चिंतिप विश्वामित्र मौनि
वच्चि निल्चुटयु दौवारिकुल्दॆलिसि । वच्चि या दशरथवरु नर्थि जूचि
'यवधारु देव ! विश्वामित्रमौनि । दिविरि वाकिट नेगुदॆञ्चियुन्नाडु'
अनवुडु दशरथुंडाप्तुल तोड । मुनि वसिष्टुडु दानु मुदमुतो नपुडु
परमेष्टि कॆदुरेगु पाकशासनुनि । करणि नॆदुर्कॊनि कडुभक्ति नॆरगि
यम्मुनि गॊनिपोयि यर्घ्यपाद्यमुल ।नॆम्मि बूजिचिन नृपु जूचि यतडु६१०
'कुशलमे प्रजलकु? गुशलमे नीकु? । गुशलमे नी मुद्दु कॊडुकु गुर्रलकु?

कहकर राजा ने बालकों को सौंप दिया, उस पुण्यात्मा मुनिवर ने वैसा ही किया । राजकुमारों ने उस संयमी की करुणा से, ॥ ६०० ॥

—हाथी-घोड़े की सवारी के क्रम को जानकर, श्रेष्ठ रथ के आरोहण की प्रक्रिया को जानकर, अखिल वेद, अखिल शास्त्र, अखिल शस्त्र-अस्त्र विद्याओं को उचित रीति से सीख लिया । उनमें राम अवार्य शौर्य, सार-विवेक आदि सद्गुणावलि से तेजस्वी बन, स्वयं विष्णुदेव होने से विराजमान हुए । उस (समय) दशरथ, ॥ ६०४ ॥

विश्वामित्र का दशरथ के पास आना

—(अपने) पुत्रों के विवाह मनोहर (उत्तम) रूप से करने के चिन्तन में प्रवृत्त हुए, (तो एक दिन) विश्वामित्र मुनि आकर (द्वार पर) खड़े हुए । द्वारपालों ने (उस बात को) जानकर उस दशरथ-वर की ओर इच्छा (प्रेम) से देखकर विनय की, 'हे देव (प्रभू) ! विश्वामित्र मुनि कुतूहलपूर्वक (कोई इच्छा लेकर) द्वार पर आए हुए हैं ।' तब दशरथ ने आप्त जन तथा मुनि वसिष्ट के साथ प्रसन्न भाव से, परमेष्ठी ब्रह्मा का स्वागत करने के लिए जाने वाले पाकशासन (इन्द्र) के समान, (विश्वामित्र की) अगवानी की । अति भक्ति से प्रणामकर, उस मुनि को ले जाकर, अर्घ्य-पाद्य (आदि) से सप्रेम पूजा की । राजा (दशरथ) को देखकर वे (विश्वामित्र) बोले, ॥ ६१० ॥

—'(हे राजन्) तुम्हारी प्रजा सकुशल है न ? तुम कुशलता से हो

विशदव्रताचार विनुत ! वसिष्ट! । कुशलमे ? मुनुलार ! कुशलमे ?'
यनिन
'नेमिट गॊऱत लेदेमु धन्युलमु । ना मंदिरमु पावनम्मु चॆन्नोंद
भावितमूर्ति ! यो परम मुनींद्र! । नीवु विच्चेसिति नेडु माकडकु
गान लोकमुल ब्रख्यातुडनैति । मानवाधिपुललो मान्युंडनैति
वच्चिन कार्यंबु वलनॊप्प जॆप्पु । डिच्चमै जेसॆद ने कार्यमैन'
ननिन विश्वामित्रु डाराजु जूचि। 'जननाथ! दशरात्रसवनंबु दॊडरि६१७

यज्ञरक्षणार्थमै रामुनि बंपुमनुट

कोरि ये जेयुचो ग्रूर राक्षसुलु । दारुणाकारुलिद्दरु वच्चि वच्चि
मा यागशाललो मांसरक्तमुलु । पायक कुरियुचु ब्रबल विघ्नमुलु
सेयुचुनुन्नारु क्षितिपाल ! माकु । ना यागमध्यंबुनं दलगरादु ६२०
अट्टु गान नी पुत्रु नभिरामु रामु । बट्टुसत्त्वु ग्रतुवॊप्प बालिचु कॊऱकु
गॊनिपोव वच्चिति ग्रूरुलद्दनुजु । लनि जाव रॊरुलचे नतनिचे गानि

न ? तुम्हारे लाड़ले पुत्र कुशल हैं न ? हे विशद व्रताचारविनुत ! (विशद व्रताचार के कारण विनुत (सराहनीय) हे वसिष्ट ! आप कुशल से तो हैं न ? हे मुनि ! आप (सब लोग) कुशल से हैं न ?' (तब राजा ने कहा)- 'हमें किसी बात का अभाव नहीं है। हम धन्य हैं। हे भावित मूर्ति ! हे परम मुनीन्द्र ! हमारे यहाँ आकर, (आपने) हमारे मन्दिर (घर) को पवित्र किया, इससे मैं (समस्त) लोकों में प्रख्यात (प्रसिद्ध) हुआ हूँ, (और) सभी राजाओं में आदरणीय बन गया हूँ। अपने आगमन का कारण सप्रेम बताइए। जो भी कार्य हो, इच्छा से उसकी पूर्ति करूँगा।' राजा के ऐसा कहने पर विश्वामित्र ने उस राजा को देखकर कहा—'हे जननाथ ! सप्रयत्न मैं दशरात्र-सवन (दसदिन वाला यज्ञ), ॥ ६१७ ॥

यज्ञ रक्षा के लिए राम को भेजने के लिए कहना

—करने का विचार कर (जब भी) मैं (आरंभ) करता हूँ तो भयंकर आकार वाले दो क्रूर राक्षस आ-आकर, हमारी यज्ञशाला में निरन्तर मांस (और) रक्त बरसा कर प्रबल विघ्न डालते हैं। हे क्षितिपाल (राजा) ! हम (ऋषियों) को यज्ञ-मध्य में (यज्ञ की सफलता के लिए) क्रोधित नहीं होना चाहिए। ॥ ६२० ॥

इसलिए तुम्हारे पुत्र अभिराम (मनोहर), महाबली राम को यज्ञ-रक्षा के लिए ले जाने आया हूँ। वे क्रूर राक्षस सिवाय राम के, युद्ध में और

नितनि महत्त्व मे नॆरुगुदु ब्रह्म। सुतुडैन यी वसिष्टुड्डनु नॆरुगु
ननघ! रामुडु बालुडनु बुद्धिमानु। मनघ! नी पुत्रकुंडनु लोभमुड्डुगु
ऋतुकर्त ऋतुमूर्ति ऋतुभागभोक्त। यतडु लोकाराध्यु डतनि बुत्तॆंपु
मतुल शस्त्राशस्त्रंबु लतनि केनित्तु। नतनिचे ग्रतुरक्ष यगुमाकु' ननुडु ६२६
बॆलुकुरि मूर्च्छिल्लि पेद्द ब्रॊद्दुनकु। दॆलसि वॆल्वॆल बारि दीनुडै मिगुल
गलगि कंपिंचि गद्गद कंठुडगुचु। बलिकॆ विश्वामित्रु ब्रार्थिंचि नृपुडु
'रामुडु मुग्धुंडु रामुडु निसुवु। रामुडॆरुंगडु रणकळाकेळि
बदियुनु नैदेंड्ल प्रायंबुवाडु। कदलॆडि चिप्प कूकटि गलवाडु ६३०
परिकिंचि तनयंदु बगवारियंदु। नुरु बलाबलगतु लूहिंपलेडु
इट्टुवंटि पसिबिड्ड नॆट्लु वेडितिवि। कटकट घनदयाकलितुंडवय्यु
बहुचित्र शस्त्रास्त्रपरुलु राक्षसुलु। महित मायोपायमतुलु राक्षसुलु
निपुण संगरकळानिधुलु राक्षसुलु। विपुल बाहाटोपविभुलु राक्षसुलु
वारितॊ बोराड वशमॆ रामुनकु। वारॆड यितडॆड वरमुनिचंद्र

किसी से नहीं मारे जाएँगे। इनके (राम के) महत्त्व को मैं जानता हूँ (और) ब्रह्मा के पुत्र ये वसिष्ट भी जानते हैं। हे अनघ (पाप-रहित)! 'राम बालक हैं' यह विचार छोड़ दो। हे अनघ! 'मेरा पुत्र है' इस लोभ को छोड़ दो। वे (स्वयं) ऋतु (यज्ञ)-कर्ता, ऋतुमूर्ति, क्रतुभागभोक्ता हैं, लोकारध्य हैं। उन्हें भेज दो। मैं उन्हें अतुल शस्त्र-अस्त्र दूँगा। उनसे हमारे यज्ञ की रक्षा होगी।' ॥ ६२६ ॥

(मुनि के ऐसा) कहने पर (राजा) विह्वल हो मूर्च्छित हो गए (और) बड़ी देर के बाद होश में आए। वे विवर्ण हो गए, दीन हो गए, अत्यधिक व्याकुल हुए, (शरीर-) कंपित हो गए, गद्गद-कंठ से, विश्वामित्र की प्रार्थना करते हुए राजा बोले, 'राम मुग्ध (नादान) है। राम (अभी) शिशु है। राम रण-कला-केलि (युद्ध-विद्या) को नहीं जानता। वह पन्द्रह साल का ही है। हिलते हुए (अभी सुदृढ़ नहीं बने) छोटे-छोटे बालों वाला है। ॥ ६३० ॥

—अपने तथा शत्रुओं के बल-अबल की परीक्षा कर सकने की शक्ति नहीं है। हाय! बड़े दयालु होते हुए भी (आप) ऐसे छोटे बच्चे को क्यों माँग रहे हैं? राक्षस तो बहुचित्र (अनेक प्रकार के) शस्त्र-अस्त्रों से युक्त हैं। राक्षस तो महित (अधिक) माया-उपाय-मति वाले हैं। राक्षस तो निपुण-संगर (समर) कला के निधि हैं। राक्षस तो विपुल बाहुशक्ति के विभु (श्रेष्ठ) हैं। उनसे लड़ने की शक्ति राम में कहाँ है? हे श्रेष्ठ मुनिचन्द्र! वे कहाँ और राम कहाँ? साठ हजार साल पृथ्वी पर शासन करने के बाद

इरुवदिवेलेड्रु लवनि बालिंचि । तरिदप्पि मुदसि यीतनि गंटि नेनु
इतनि बुत्तेंन्चुट के जालनय्य । ऋतुरक्षकै विचारमुलेल मीकु ?
नेनु सेनलगूडि यीप्रोद्दे कदलि । पूनि वच्चेद निदें पोंदडु मी वेंनुक
मुनिनाथ ! मी यागमुन विघ्नकर्त । लगु राक्षसुल शक्तुलवि येन्तगलवु?
वारेव्वरेव्वरु ? वारिपेरेमि । यी राघवुडु वारि नेंभ्भंगि गेलुचु?' ६४०
ननिन विश्वामित्रुडनिये भूपतिकि । 'मनु पुलस्त्यब्रह्म मनुमंडु खलुडु
आविश्रवसु कोडुकखिलकंटकुडु । रावणु डुग्रसंरंभुडै पनुप
बलिसि मारीच सुबाहुलव्वारु । नलिरेगि यागविघ्नमुलु सेयुदुरु
रामुडोंक्कडु दक्क रणभूमि वारि । नेमिचंदंबुन नेंदुरलेरोरुलु' ६४४
अनिन नम्मक्कनि यधिपित मरियु। मुनिनाथु तो बल्कें मोमोट लेक
'ब्रह्म नालववाडु परम साहसुडु । ब्रह्म चे वरमुलु वडसिनवाडु
अट्टि रावणुचेत नट्टु पंपु वडसि । नट्टि वारल गेल्व नतडेमि चालु?
वारिलावेंरुगक वच्चेंदननुचु ।मीरि पलिकिति; निंक मेंल्लन जनुडु'

असमय, वृद्धावस्था में मैंने इसे जन्म दिया (प्राप्त किया) है। मैं इसे भेज नहीं सकता। आपको यज्ञरक्षा की चिन्ता क्यों ? मैं सेनाओं के साथ आज ही निकलकर सप्रयत्न आपके पीछे-पीछे चलूँगा। आप चलिए ! हे मुनिनाथ ! आपके यज्ञ में विघ्न डालने वाले राक्षसों की शक्तियाँ ही कितनी हैं ? (मेरे सामने तुच्छ हैं।) वे कौन-कौन हैं ? यह राघव उन्हें किस प्रकार जीत सकेगा ? ॥ ६४० ॥

—(राजा ने) ऐसा कहा। विश्वामित्र ने भूपति से कहा, 'मानव रूप में पुलस्त्य ब्रह्मा का पोता, विश्रवसु का पुत्र, खल (दुष्टात्मा), अखिल (लोक का) कंटक (रूपी) उस रावण की भयंकर प्रेरणा पर, प्रोत्साहन प्राप्त करके, मारीच (और) सुबाहु नामक (राक्षस) अति ही उद्धत हो यज्ञ में विघ्न डाल रहे हैं। एक राम के सिवा रणभूमि में, किसी भी तरह से अन्य कोई उनका सामना नहीं कर सकता।' ॥ ६४४ ॥

ऐसा कहने पर आश्चर्य चकित हो राजा बिना हिचकिचाए मुनिनाथ से बोले, 'वह (रावण) चौथा ब्रह्मा है। परम साहसी है। उसने ब्रह्मा से वर प्राप्त किए हैं। ऐसे रावण से भेजे गए उन लोगों को जीतने में यह (राम) कैसे समर्थ होगा ? उन (राक्षसों) की शक्ति न जानकर, (मैंने अपनी) शक्ति से बाहर (काम के लिए स्वयं अपने भी) आने की बात कही थी। अब (आप) धीरे से चले जाइए।' ऐसा कहने पर, रोषपूर्ण लाल आँखों से (विश्वामित्र ने राजा की ओर) देखा। रुष्ट बने उनके गाल उत्कट रूप

नपुडु रोषताम्राक्षुडै चूचि । कनलुचु गटमुलुत्कटमुलै यदर
नोंडलेल्ल गंपिंप नुदरुचु बलिकें ।नडरि विश्वामित्त्रुडा राजु जूचि६५०
'काकुत्स्थ कुलजुल गति विचारिंप । कीकष्टदुर्भाषलेल भाषिंप ?
नेनु वच्चिन पनि येर्ऱिगिंपुमंटि । पूनि चेसेंदनंटि बोंन्कॅदविपुडु
ऋतुरक्षकै रामुगडगि वेडुटयु । ध्रुतिमालि यीननि तेंग पल्कॅदीवु
सूनृतेतर निन्नु जूडगारादु । कान पोयेंद'नंचु गडगि पल्कुटयु
जलनिधुलिंकें भूचक्रंबु ग्रुंगें । गलगें लोकमुलु दिग्गजमुलु स्रॉग्गें
दिविजुलु वेरचिरि दिशलु गीड्वडियें । नवशमुल् गाजोंच्चें नखिलभूतमुलु
अपुडु मौनि कोपाटोपवृत्ति । दप्पक भाविंचि दशरथु जूचि६५७

वसिष्टमुनि धैर्यमु चॅप्पुट

या वसिष्टुडु वल्कें 'नर्कवंशजुलु । भूवलयंबुन बोंन्करॅन्नडुनु
मिन्नंदु नी कीर्ति मीवारि कीर्तु । लन्नियु जेंडु गल्ललाडितिवेनि;

से हिलने लगे। सारा शरीर काँपने लगा। डाँटते हुए, रुष्ट विश्वामित्र ने राजा को देख कर यों कहा, । ।। ६५० ।।

—'काकुत्स्थ-वंशजों की रीति पर विचार किए बिना ऐसे कटुवचन क्यों कह रहे हो ? (तुमने) आगमन का कारण बताने के लिए कहा था। (यह भी) कहा था, कमर बाँधकर आपका काम करूँगा। अब (उसी बात को) झुठला रहे हो। यज्ञ-रक्षा के लिए मैंने राम को चाहा (और भेजने के लिए) प्रार्थना की थी। (तुम) हिम्मत हारकर, निर्लज्ज हो, कहते हो कि नहीं भेजूँगा। हे असत्यभाषी ! तुम्हारा (तो) मुँह (तक) नहीं देखना चाहिए। इसलिए मैं (यह) जा रहा हूँ।' (मुनि के) इस प्रकार इच्छा प्रकट करके कहने पर जलनिधि (समुद्र) सूख गये। भूचक्र (पृथ्वी) धँस गया। (समस्त) लोक व्याकुल हो उठे। दिग्गजों ने घुटने टेक दिए। देवता भयभीत हो गए। दिशाएँ हतप्रभ हो गईं। सभी भूत (पंचभूत) अवश हो गए। तब मुनि के क्रोधावेश की कल्पना करके (परिणाम के बारे में सोच), दशरथ को देखकर, ।। ६५७ ।।

वसिष्ट मुनि का धीरज बँधाना

—(मुनि) वसिष्ट यों बोले, "सूर्यवंशी (इस) संसार में कभी असत्य नहीं बोलते। यदि असत्य कहोगे तो आकाश को चूमने वाली (अति उन्नत) तुम्हारी कीर्ति और तुम्हारे लोगों (पूर्वजों) की कीर्ति नष्ट हो जाएगी।

ब्र्याईअ मंझि ब्रोड़े, माया छद्रियो मूढ़नि खे ।
मरनि मति मर्म रे, सदा सिरु फोड़े ।
को प्रेमी लंघे पारि पियो, सामी मुंहुं मोड़े ।
वेठो वंझु खोड़े, आदी अन्भई घर में ।। १४५ ।।

माया ने मूर्खों को द्वैत (की भावना) में डुबो दिया है अतः वे निर्लज्ज एवं बुद्धिहीन हो अपना सिर फोड़कर (कष्ट उठाकर) मर रहे हैं। सामीजी कहते हैं कोई प्रेमी ही (माया से) मुख मोड़कर (द्वैत रूपी समुद्र से) पार हो गया है तथा अपने आदि ज्ञान (आत्मिक ज्ञान) रूपी घर में धूनी रमाकर बैठा है ।। १४५ ।।

विना गप गपी, पिया सभि जीअ जहान जा ।
मरनि मति मर्म रे, खपित मंझि खपी ।
कंहि सुजाग़े सूर्मे, कल्पन ग़ंढि कपी ।
जंहि खे ग़ाल्हि छिपी, सामी ब्रुधाई सतिगुरूअ ।। १४६ ।।

संसार के सब जीव (माया के) झूठे कीचड़ में फँस गये हैं। वे निर्लज्ज तथा बुद्धिहीन होकर, (माया के) झंझट में अपने आप को खपा-खपा कर मार रहे हैं (नष्ट कर रहे हैं)। सामीजी कहते हैं उसी जागृत शूरवीर (ज्ञानी व्यक्ति) ने ही कल्पना की गांठ काट ली है जिसे सद्गुरु ने छिपी हुई बात (ज्ञान का रहस्य) बता दी है ।। १४६ ।।

बिना गप गपी, पिया सभि जीअ जहान जा ।
मरनि मति मर्म रे, खप्ति मंझि खपी ।
कंहि सुजाग़े सूर्मे, सामी कल्प कपी ।
जंहिखे छुटे छिपी, लख्य लखाई अन्भई ।। १४७ ।।

संसार के सब जीव (माया के) झूठे दलदल में फँस गये हैं। वे निर्लज्ज एवं बुद्धिहीन होकर, (माया के) गोरख-धंधे में अपने को खपा-खपाकर (कष्ट उठाकर) मार रहे हैं (नष्ट कर रहे हैं)। सामीजी कहते हैं, उसी जागृत शूरवीर (ज्ञानी) ने कल्पना (प्रपंच) को काट दिया है जिसे मुक्त (माया से मुक्त सद्गुरु) ने अर्न्तज्ञान का लक्ष्य (रास्ता) दिखा दिया है ।। १४७ ।।

बिना ज्ञाति ग़ुलाम, मूर्ख माया जा थिया ।
हर्दमि हथ ब्रधी करे सामी कनि सलाम ।
रहनि अलेपु आकास जाँ, के नेहीं निरब्राण ।
जिनिखे रम्ता राम, पाण लखायो पाण में ।। १४८ ।।

सामीजी कहते हैं कि मूर्ख ज्ञान के अभाव में माया के ग़ुलाम बन गये हैं। वे सदैव हाथ बाँधकर (ग़ुलामों की तरह) सलाभ करते रहते हैं। पर कुछ (माया से) मुक्त प्रेमी, आकाश के समान निर्लिप्त रहते हैं क्योंकि उन्हें व्यापक ब्रह्म ने अपने आप को दिखा दिया है (उन्होंने अपने भीतर ही परमात्मा का दर्शन कर लिया है) ।। १४८ ।।

बिना ड्रर ड्ररी, मूर्ख मरनि ममत्व में ।
मृघ तृष्णा जे जल जी, सघनि न सिन्धु तरी ।
स्याणनि खे सामी चए, पेई ख़बर खरी ।
सटे भर्म भरी, माणिनि सुखु स्वरूप जो ।। १४९ ।।

मूर्ख (अज्ञानी लोग) ममता में पड़कर, (माया के) झूठे भय से भयभीत होकर मर रहे हैं। वे मृगतृष्णा के जल रूपी समुद्र को पार नहीं कर सकते हैं। (जिस प्रकार मरुभूमि में प्यासा मृग चमकती हुई रेत को पानी समझकर, अपनी प्यास मिटाने के लिए दौड़ता ही रहता है, पर कभी भी तृप्त नहीं होता और अन्त में अपने प्राण तक खो बैठता है, उसी प्रकार संसार के लोग चमकती हुई रेत के समान माया के पीछे पड़कर अपने आप को नष्ट कर देते हैं, पर कभी भी शान्ति प्राप्त नहीं कर पाते अर्थात् माया से मुक्त नहीं होते हैं।) सामीजी कहते हैं पर बुद्धिमानों (ज्ञानवानों) को वास्तविक बात का पता लग गया है, अतः वे भ्रम रूपी गठरी को पटककर (माया से मुक्त होकर) स्व-रूप का सुख भोग रहे हैं (ब्रह्मानंद में मस्त हैं) ।। १४९ ।।

बिना ड्रर ड्ररे, ज्ञगतु सभोई जीअ में ।
नांगु ज्ञाणी नोड़ीअ खे, सघे न धीर धरे ।
वह्यो वञे वीचार रे, कूड़ी कल्प करे ।
जन्मे ऐ मरे, स्वप्न में सामी चए ।। १५० ।।

सामीजी कहते हैं कि सारा संसार हृदय में झूठे भय से भयभीत हो रहा है। (भ्रम के कारण) वह रस्सी को सर्प मान कर अधीर हो उठा है तथा झूठे भ्रमों में विचारहीन होकर बह रहा है। और (इस प्रकार) स्वप्न में ही जन्म तथा मृत्यु को प्राप्त करता रहता है ।। १५० ।।

बिना डूर डूरे, जगतु सभोई जीअ में।
पछिन्न ज्ञाणी पाण खे, जन्मे नितु मरे।
पूरणु डिसे पीअ खे, को नेहीं नेण भरे।
जंहिते हथु धरे, सामी पूरो सतिगुरू ।। १५१ ।।

सारा संसार हृदय में झूठे भय से भयभीत हो रहा है, वह अपने को क्षणभंगुर मानकर सदैव जन्म एवं मृत्यु को प्राप्त होता रहता है (वास्तव में आत्मा न मरता है, न जन्मता है, केवल शरीर ही जन्म-मरण के चक्कर में रहता है, पर माया के कारण मनुष्य अपने को आत्मा न मानकर नश्वर-शरीर ही मान बैठता है और सदैव भयभीत होता रहता है)। सामीजी कहते हैं पर कोई प्रेमी जिस पर सद्गुरु ने अपना पूरा हाथ रखा है (दया की है) वह नेत्र भरकर (जी भर कर) पूर्ण प्रियतम को देखता रहता है ।। १५१ ।।

बिना मुख खाई, सन्सो वियो सन्सार खे।
कंहिजी चले कान का, स्याणप चतुराई।
इहा ग़ाल्हि समुझ में, कंहिं गुर्मुख खे आई।
तंहिजी समाई, सामी सुर्ति स्वरूप में ।। १५२ ।।

मुख-रहित भ्रम ने संसार को निगल लिया है; उसके आगे किसी की भी विद्वत्ता तथा चतुराई नहीं चलती है। सामीजी कहते हैं पर जिस गुरुमुख ने यह (रहस्यपूर्ण) बात समझ ली है, उसकी बुद्धि (परमात्मा के) स्वरूप में समा गई है। (वह स्वरूप से तद्रूप हो गया है।) ।।१५२।।

भारी पटु पियो, अग्यों वाच अवाच जो।
साक्षीअ खे सामी चए, तंहिं जोड़े जीउ कयो।
अणहून्दे दर्याह जे, वह में वञी पियो।
जड्रीं साधूअ संगि थियो, तदीं जाग़ी जुर्यो पाण में ।। १५३ ।।

सामीजी कहते हैं कि अवाच (अकथनीय परमात्मा) के आगे माया का भारी आवरण आ पड़ा है, जिससे जीव ने साक्षात् (आत्मा) को शरीर से जोड़ लिया है (माया के कारण जीव अपने को आत्मा न मानकर नश्वर शरीर ही मान बैठा है।) वह (माया के) अस्तित्वहीन समुद्र के प्रवाह में जा पड़ा है। पर जब उसे साधुओं का संग प्राप्त हुआ, तब वह जागृत हो अपने आप (परमात्मा) से जा मिला है।।। १५३ ।।

भारी हिक बला, वेढ़े वेई सभखे।
जोड़े जीअनि खे, थी हणे रात्यू ड्रीह खला।
मोड़े मूंहुं मुठीअ खों, वेठा के व्रिला।
जिनिखे ज्ञान कला, सामी ड्रिनी सतिगुरूअ ॥ १५४ ॥

एक अत्यन्त ही बड़ी नागिन (माया) ने सबको घेर रखा है। वह जीवों को बाँधकर, दिन-रात उन्हें डंक मारती रहती है (बेचैन और दुखी बनाती है।) सामीजी कहते हैं पर जिन विरले-मनुष्यों को सद्गुरु ने ज्ञान की कला सिखाई है (उपदेश दिया है), वे इस दुष्टा से मुख मोड़ बैठे हैं। ॥ १५४ ॥

भुली सभु सन्सारु, देही मने पाणखे।
जन्मे, मरे दुःख सहे, छद्रे न अहंकारु।
व्रिले कंहि गुर्मुख कयो, वास्तव वीचार।
ड्रिसी साक्षी सारु, सन्मुखु थियो सामी चए ॥ १५५ ॥

संसार के सब लोग (माया में) अपने (स्वरूप) को भूलकर, अपने आपको शरीर मान बैठे हैं। वे दुःख सहन कर, जन्मते एवं मरते रहते हैं पर फिर भी अहंकार नहीं छोड़ते हैं। सामीजी कहते हैं बिरले-गुरुमुख ने ही वास्तविक विचार कर अपने सम्मुख साक्षात् परमात्मा को देखा है ॥ १५५ ॥

भुली हिन बन्दे, ख़ासु ख़ज़ानो गुमु कयो।
खणी विधांई पाण खे, धिके मंझि धन्धे।
ड्रीओ ब्रारे घर जो, ड्रिठो कीन अन्धे।
प्रीं पाण कन्दे, सहायता सामी चए ॥ १५६ ॥

यह बन्दा (माया में) अपने आप को भूलकर, विशेष निधि (ज्ञान का ख़ज़ाना) से हाथ धो बैठा है। इसने स्वयं ही अपने को (माया के) झंझट में धकेल दिया है। इस अन्धे (अज्ञानी) ने (हृदय रूपी) घर में (ज्ञान का) दीपक जलाकर नहीं देखा है। सामीजी (मनुष्य को उत्साहित करके) कहते हैं कि परमात्मा स्वयं आकर तेरी सहायता करेगा (यदि तू ज्ञान का दीपक जलाने की कोशिश मात्र करेगा।) ॥ १५६ ॥

महा प्रब्रल ज्ञाणु, माया महबूबनि जी।
सामी सभ कंहिं जो, जंहिं भुलायो पाणु।
साक्षी रहे साणु, सो नज़रि अचे कीन की ॥ १५७ ॥

सामीजी (मनुष्यों से) कहते हैं कि प्रियतम की माया को अत्यन्त ही प्रबल जान। इस (माया) ने सब (जीवों) को अपने स्वरूप से भुला दिया है अतः जो (परमात्मा) सदैव साथ रहता है, वह (माया के कारण) दिखाई ही नहीं देता है ॥ १५७ ॥

महा प्रब्रलु माया, तरी सघे कोन को।
जंहि सिध साधिक जोग़ी जती, भय में भुलाया।
मने वेठा पाणखे, कल्पत जी काया।
सतिगुर छद्राया, सामी, छुटा से दुःख खों ॥ १५८ ॥

माया अत्यन्त ही प्रबल है, इससे कोई भी पार नहीं हो सकता है। इस (माया) ने सिद्ध, साधक, योगी एवं यति, सबको भय से भ्रमित कर दिया है, अतएव वे स्वयं को झूठा (नश्वर) शरीर ही मान बैठे हैं। सामीजी कहते हैं पर जिसे सद्गुरु ने (माया से) छुड़ा दिया है, वह दुःखों से मुक्त हो गया है ॥ १५८ ॥

अण हून्दी हर्कत, माया रची ममत्व साँ।
सामी खस्याईं सभ जी, भुलाए बर्कत।
लिवं साँ हणी लत, चढ़ी वेठो चौड्रोल में ॥ १५९ ॥

सामीजी कहते हैं कि माया ने ममता से अस्तित्वहीन (झूठा) खेल रचा है। इस (माया) ने सबको भ्रमित कर उनकी सम्पत्ति छीन ली है। केवल कुछ विरले पुरुष ही (परमात्मा) के प्रेम में मस्त होकर (माया को) लात मार कर, आत्म-पद को प्राप्त कर सके हैं ॥ १५९ ॥

अण हून्दे ओले, देउ लिकायो देह में।
लधो लिंव सचीअ साँ, फक़ीरनि फोले।
सामी सभि कार्य करे, ड्रिसे ब्रुधे ब्रोले।
पर्च्छिन्न पटु खोले, माणिनि दौर दर्स जा ॥ १६० ॥

झूठे भ्रम ने (आत्मा रूपी) देवता को शरीर में छिपा लिया है (भ्रम के कारण जीव अपने को आत्मा न समझकर शरीर समझ रहा है), पर फकीरों (प्रेमी-भक्तों) ने उसे (आत्मा को) सच्चे प्रेम से ढूँढ कर प्राप्त कर लिया है। सामीजी कहते हैं कि आत्मा ही देखता, सुनता, बोलता तथा समस्त कार्य करता है; पर (कुछ लोग ही) (प्रच्छन्नता) का आवरण हटाकर अपने स्वरूप (परमात्मा) के दर्शन का सुख भोगते हैं ॥ १६० ॥

अन्धनि ड्रे आई, माया बणी मोहणी ।
फुरे कयाईं फोक सभि, ड्रेई वड्राई ।
सामी सुजाग़नि खों, भग़ी भउ खाई ।
मातामी साई, करिनि गुमु ग्याति साँ ।। १६१ ।।

माया अन्धों (अज्ञानी जीवों) के सामने मनहर (सुन्दर) रूप धारण करके आई है । उसने (झूठी) प्रशंसा से सबको लूट कर खोखला बना दिया है । सामीजी कहते हैं पर जागृतों (ज्ञानी जीवों) से वह भयभीत होकर भाग गई (ज्ञानवान् व्यक्तियों पर उसका कुछ भी प्रभाव न पड़ा) । उन्होंने अपने ज्ञान के बल पर रुलाने वाली माया को गायब कर दिया है । (माया के कारण ही मनुष्य रोते-पीटते रहते हैं) ।। १६१ ।।

अन्धा जीअ अपार, माया मोहे वसि कया ।
पच्छिन्न ज्ञाणी पाण खे, मुक्ती खाइन मार ।
माणिनि सुख स्वरूप जो, सुज्ञाग़ा सचार ।
हर्दमि रहनि हुशार, सामी सम स्वभाव में ।। १६२ ।।

माया ने अनेक अन्धे जीवों (अज्ञानी जीवों) को आकर्षित कर अपने वश में कर लिया है अतएव वे अपने को नश्वर जानकर, मुक्ति से मार खाते रहते हैं (मुक्ति से हाथ धो बैठते हैं ।) सामीजी कहते हैं पर जो सच्चे जागृत (ज्ञानवान्) हैं वे सदैव समता भाव में सावधान होकर (द्वैत की भावना से मुक्त होकर) स्वरूप का सुख (आत्म-सुख) भोगते रहते हैं ।। १६२ ।।

कई अणहूंदी हर्कत, माया ख़ाब ख़्याल जी ।
जंहिमें मुठा केतिरा, मूर्ख करे ममत्व ।
ज्ञमनि मरनि मति रे, भवनि इते खाँ उत ।
सामी सहनि दिकत, जाग़ी द्रिसनि न ज्योति खे ।। १६३ ।।

माया ने झूठे विचारों की अस्तित्वहीन (झूठी) बाज़ी (खेल, क्रीड़ा) रची है, जिससे ममता कर कितने ही मूर्ख नष्ट हो गये हैं । सामीजी कहते हैं कि वे बुद्धिहीन जन्म-मरण के चक्कर में पड़कर यहाँ से वहाँ भटक रहे हैं तथा कष्ट भोग रहे हैं, पर जागृत होकर आत्म-प्रकाश को नहीं देखते हैं ।। १६३ ।।

कई ख़लिक अन्धी, माया मोहे ममत्व साँ ।
मृघ तृष्णा जे जल में, वञे सभि वहंदी ।
विरले कंहिं गुर्मुख लधी, कृपा साणु कन्धी ।
ब्राभण जंहिं ब्रन्धी, पंजई कया वसि पंहिंजे ।। १६४ ।।

माया ने लोगों को ममता से मोहित कर अन्धा (अज्ञानी) बना दिया है, अतः वे मृग-तृष्णा के जल में (मृग-तृष्णा के समान माया में) बहते जाते हैं । ब्राह्मण (सामीजी) कहते हैं कि जिस विरले, गुरुमुख ने पाँच विकारों (काम, क्रोध, लोभ, मोह एवं अहंकार) को बाँधकर अपने वश में कर लिया है, उसने ही (परमात्मा की) कृपा से (माया रूपी समुद्र का) किनारा प्राप्त कर लिया है ।। १६४ ।।

कटे कलेजो, माया ड्राइणि सभजो ।
कंहिंखों करे कीन की, पापिणि परिहेज़ो ।
सामी हंयुसि सचजो, कंहिं नेहींअ नर नेज़ों ।
वरी जंहिं वेझों, डि्ठो अन्भय आत्मा ।। १६५ ।।

डाइन-माया सबका कलेजा (हृदय) काट लेती है (आत्मज्ञान से वंचित कर देती है ।) वह पापिन किसी से भी परहेज़ नहीं करती है (दूर नहीं रहती है) । सामीजी कहते हैं कि किसी स्नेही पुरुष ने उसे (माया को) सत्य का तीर मारा है एवं विरक्त होकर आत्मा को अपने ही समीप देखा है ।। १६५ ।।

करे नाचु नटी, माया मोहे सभखे ।
छद्दे न पीर फकीर खे, पापिणि पाड़ पटी ।
सन्तनि विधुसि समुझी, ग़िचीअ में ग़टी ।
वेठा खेप खटी, सुञ वसवँ जे विचमें ।। १६६ ।।

माया रूपी नर्तकी अपने नृत्य से सबको आकर्षित कर देती है । (ज्ञान की) जड़ उखाड़ने वाली पापिन, पीर एवं फ़कीर को भी नहीं छोड़ती (सन्त-महात्माओं को भी अपने वश में कर लेती है) । पर कुछ सन्तों ने सोच-समझकर उस (माया) के गले में रस्सी डाल दी है (उसे अपने वश में कर लिया है) अतः अब वे एकान्त स्थल या बस्ती में रहकर भी अपनी ही मस्ती में मस्त रहते हैं ।। १६६ ।।

ग्रसे ग्रासे, सभ खे माया मोहिणी ।
कंहिंखों थिए कीन की, पलु पापिणि पासे ।
कयुसि गुमु ग्याति साँ, कंहि नेओंअ निरासे ।
हर्दमि हिकु भासे, जंहिंखे अन्दरि आत्मा ।। १६७ ।।

मोहिनी माया सबको निगल लेती है (सबको अपने वश में कर नष्ट कर देती है।) यह पापिन एक क्षण के लिए भी किसी से दूर नहीं रहती है। पर जिसे (सब के) भीतर एक ही आत्मा दिखाई देती है, उस आशा को जीत लेने वाले प्रेमी ने गुरु के ज्ञान द्वारा उसे (माया को) ग़ायब कर दिया है (माया से मुक्त हो बैठा है।) ।। १६७ ।।

छलु प्रब्रलु आहे, माया महबूबनि जी ।
द्रिठा ब्रुधा कीन की, से वहण वहाए ।
विझी ज्ञारु भर्म जो, भला भुलाए ।
पंहिंजा पियो खाए, कंहिंजी चले कीनकी ।। १६८ ।।

प्रियतम की (बनायी हुई) माया छल-कपट करने में अत्यन्त ही प्रबल है। वह (मनुष्य से) ऐसे ऐसे कार्य कराती है, जो कभी न सुने गये हैं, न देखे गये हैं। वह भ्रम का जाल फैलाकर सज्जन पुरुषों को भी (अपने स्वरूप से) भुला देती है अतएव वे अपने ही मन के लड्डू खाते रहते हैं, पर उनके सामने किसी की भी नहीं चलती है (वे मनमानी ही करते रहते हैं, और दूसरे किसी की बात नहीं सुनते हैं।) ।। १६८ ।।

छलु प्रब्रलु आहे, माया महबूबनि जी ।
सामी छद्रियो सभखे, फाहीअ मंझि फाहे ।
को आशिकु चढ़ियो अछ ते, दुत्या गँवाए ।
नकी को ठाहे, नकी भञे भेद भर्म साँ ।। १६९ ।।

सामीजी कहते हैं कि प्रियतम की (बनाई हुई) माया छल-कपट करने में अत्यन्त ही प्रबल है। उसने सब (जीवों) को अपने फन्दे में फँसा लिया है अतः कोई प्रेमी ही द्वैत (भाव) मिटा कर, ज्ञान के मार्ग पर अग्रसर हुआ है। वह न तो भेद तथा भ्रमों को बनाता है और न ही उन्हें मिटाता है। (वह अपने स्वरूप में ही लीन रहता है।) ।।१६९।।

जीअ कया सभि ज़ेरि, माया मोहे मतिसाँ ।
नचाए नाचूअ ज्याँ, पाए पच्छिन्न छेरि ।
कोर्युनि मों को हिकिड़ो, साधू चढ़ियो सुमेरि ।
बिना दिक़त देरि, सामी द्रिसे स्वरूप खे ।। १७० ।।

तल्पमिदेन्नदे बेरे वि-
कल्पिसुवनें गांपनेंनिसुगुं करुमाडं ॥ १२५ ॥

नेलेमाडद पोसदेसिय
नेले माडद कल्पसदनमेय्ददणं कीळ्
नेलेयादुदिदर तेरदिं
नेलेयादुदे सकलजनद कण्गं मनकं ॥ १२६ ॥

बाळतृणंगळेंदेळसुगुं पसुर्गळ्गळ कांतियं मृगी
जाळकमल्लि माणिकद कॆंबॆळपं बिसिलॆंदु नट्टिरुळ्
मेळिसुगुं रथांगमॆरलिक्किद मुत्तिन सूसकंगळं
बाळमृणाळमेंदु कर्दुकल् बगॆगुं कलहंस पोतकं ॥ १२७ ॥

गिळि गिळिवॆण्गॆ चूतफलमं कलहंसिगॆ हंसनब्जकं
दळमनिभं करेणुगॆ लवंग दळंगळनीव चित्रमं
तळॆदु विलासमं मॆरॆव राणियवासद बळ्ळिमाडदु-
ज्वळ मणिभित्ति चॆल्वनॊळकॊंडॊळकॊंडुदपूर्व भित्तियं ॥ १२८ ॥

बॆरलं मिडियिप पुलकां-
कुरमं पुट्टिसुव नोडॆ तलॆदूगिप सुं-
दरमॆनिप कुसुरिवॆसदिं-
दरमनॆ माळ्पुदु मयंगमतिविस्मयमं ॥ १२९ ॥

वहाँ के महलों के विशिष्ट सौंदर्य के आगे स्वर्ग सौंदर्य भी मानो फीका-सा लगता था। महलों का सौंदर्य समस्त लोगों के मन और दृष्टि को तृप्त कर रहा था। १२६ हरे रत्न की कांति (प्रकाश) को हरी घास समझकर उसे चरने के लिए वहाँ के हरिण भ्रमित हुये; माणिक्य के प्रकाश को धूप समझ कर मध्यरात्रि के समय चक्रवाक दम्पति एक हुये; लटकते (झूलते) हुये मोती की मालाओं को कमलदंड समझकर हंस-शिशु चोंच मारने लगे। १२७ रनिवास की लता की दीवारें ऐसे सुन्दर चित्रों से सुशोभित थीं जिनमें तोता अपनी प्रेयसी को आम, हंस अपनी प्रियातमा को कमलकली, हाथी अपनी प्रिया को लवंग के दल देते दिखाई देते थे। १२८ दाँतों तले उँगली दबाने वाले, रोमांच जगाने वाले, दर्शकों का सिर हिलाने के लिये विवश कर देने वाले सुन्दर, महीन कारीगारी से पूर्ण राजप्रसाद यम को भी विस्मय करा देने में समर्थ थे। १२९ अनेकानेक चतुर्मुख (ब्रह्मा) अपने यहाँ आ जमे हैं,

नेरॆदिर्पर् चतुराननर् पलबरॆन्नॊळ् राजबाधापरं-
परॆयुं कंटकराजियुं रजमुमॆन्नॊळ् पॊर्दवॆन्नॊळ् निरं-
तरमॊप्प किडदॆंदु नाभिकमलावासं पुरं नाभिपं-
करुहक्कीवुदु नीलरत्नगृहकांति ध्वांतदिं दैन्यमं ।। १३० ।।

अंत्रतिशयवेनिपयोध्यापुरदधिपति—

मनुचूडामणि नाभि नाभिसुतनादिब्रह्मना ब्रह्मनं-
दन नार्गं मिगिलादनादिभरतं षट्खंड भूनाथना
मनुजेंद्रात्मजनर्ककीर्ति नॆगळ्दं तद्वंशमत्यंत पा-
वनमत्त्युन्नतमाय्तु सद्गुण पताकावंशमॆंबन्नॆगं ।। १३१ ।।

नॆलनं मर्यादॆयिं पालिसि नियमिसि वर्णाश्रमाचारमं दो—
ष लवं मॆय्वॆर्चदंतिद्रिय सुखदॊदवं तीर्चि सम्राज्य दोळ्मु-
न्नलिदल्लिदत्तलात्यांतिक सुखपदमं यॆत्त राजाधिराजर्
पर्लरिंदिक्ष्वाकुवंशं कुलमदियवॊलाय्तुव्यवच्छिन्नरूपं ।। १३२ ।।

मनुनाभि नरेंद्रनिनि- * त्तनुक्रमंगिडदॆ पॆर्चुवडॆदा वंशं
मुनिसुव्रत जिनपति वर* मनूनमादुत्तदात्त शाखाकीर्णं ।। १३३ ।।

राजसगुण की परम्परा या बाधाएँ मुझमें नहीं है, मैं अपने व्यवहार में कभी गलती नहीं कर सकती, इस तरह अभिमान से सोचने वाली लक्ष्मी का निवासस्थान कहलाने वाला वह नगर अपने में स्थित नीलरत्न-गृहों की शोभा से निर्मित अंधकार से नाभिकमल (जो ब्रह्मा का जन्म स्थान कहलाता है) दीन (मुरझाया हुआ) प्रतीत हुआ। १३० इस तरह के अतिशयपूर्ण अयोध्या नगर के अधिपति—मनुचूड़ामणि नाभिराज का आदिब्रह्म (ऋषभदेव) पुरुदेव पुत्र है; उसी ऋषभदेव का पुत्र है श्रेष्ठ षट्खंड चक्रवर्ती भरत, जो समस्तों में श्रेष्ठ है; उसका बेटा अर्ककीर्ति। उससे वह वंश पावन एवं उन्नत होकर प्रसिद्ध हुआ। १३१ गौरव से अपने राज्य की देखभाल करते हुए, प्रजाजन (कभी) वर्णाश्रम धर्म का उल्लंघन न करें इसका ध्यान रखते हुए, इंद्रिय-सुखों का निर्दोष रूप से उपभोग करते हुए, भौतिक सुखों को क्षणिक मानकर, अध्यात्म सुखों को अत्यन्त महत्व देकर यशप्राप्त अनेकानेक राजाओं से इक्ष्वाकुवंश कुलनदी-सा शृंखलाबद्ध रूप से निरन्तर राज्य करता रहा। १३२ मुनिसुव्रत के अखंड तथा श्रेष्ठ बल से निरन्तर चलने वाले उस वंश में अप्रितम (वीर) विजयरथ प्रसिद्ध हुआ। उसकी पत्नी थी हेममालिनी। उसने (विजयरथ ने) विजय की इच्छा से राजाओं को हराकर भूमंडल को

क्षितिनाथं तन्मुनि सु- ❋ व्रतनाथन कालदंदु तद्वंशदोळ-
प्रतिमं विजयरथं त- ❋त्सति हेमलतांगि हेममालिनियेंबळ् ।। १३४ ।।

विजिगीषुवृत्तियिं भू-
भजरं बेसकेयिसि कोंडु भूमंडलमं
भुजदंडदोळिरिसिदने-
नजय्यभुजबलनो विजयरथ नरनाथं ।। १३५ ।।

आ नरेंद्रनं नंदनं—
जितरिपु सुरेंद्रमन्यु
क्षितिपति रिपुनृपकुलांगनाजनमन्यू-
द्गतबाष्प सलिलधारा
प्रतानदिं कीर्तिवल्लियं बेळेयिसिदं ।। १३६ ।।

आ विशदकीर्तिगे कीर्तिश्रीयेंबळरसियागे—
अंदमदटलेये मनसिज ❋ नंदमनळवळविगळेदु केसरियळवं
बेंदगुळे वज्रबाहु पु- ❋ रंदररेंबिर्वरवर्गे नंदनरादर् ।। १३७ ।।

कडिदु विपक्षमनिंद्रं ❋ कडिदंते कुलाद्रिपक्षमं तोळ्वलमं
पडेदं परप्रतापं ❋ पोडर्पुगिडुवंते वज्रबाहु कुमारं ।। १३८ ।।

अपनी बाहुशक्ति के वश में रखा। उसकी वीरता वर्णनातीत है। मुनिसुव्रत के अनून (अखंड) वर-प्रसाद से मनुनाभि राजा से लेकर अचूक क्रमसे (शृखंलाबद्ध हो) अभिवृद्धि पाया हुआ वह वंश पेड की शाखाओं की तरह विशाल रूप से फैल गया। १३३ उस मुनि के जीवनकाल में उस वंश में विजयरथ नाम का अप्रतिम वीर.प्रसिद्ध हुआ। उसकी पत्नी का नाम था हेममालिनी, जो हेमलना के समान थी। १३४ उस विजयरथ ने विजय की इच्छा से राजाओं को पराजित करके भूमंडल को अपनी बाहु-शक्ति के वश में रखा। उसकी अविजेय वीरता वर्णनातीत है। १३५ उस राजा के पुत्र—सुरेन्द्रमन्यु ने शत्रुओं को जीतकर उनकी पटरानियों की अश्रुधारा से अपनी कीर्तिलता को सींचा। १३६ कीर्तिश्री नाम की युवती सुरेन्द्रमन्यु की रानी बनी।—उस दम्पति के सौंदर्य में कामदेव को भी लज्जित कर देनेवाले, (वीरता में) सिंहराज के बल को भी नीचा दिखाने वाले दो पुत्र हुए—वज्रबाहु और पुरंदर। १३७ उनमें वज्रबाहु ने, जिस तरह देवेन्द्र ने कुलाद्रि शिखरों को काटा था, उसी तरह अपने शत्रुओं की बाहुओं को काटकर शत्रुप्रताप को कांतिहीन कर दिया। १३८

परपुरमनुरिपि दॆसॆगुरि * वरिविनॆगं तन्न तेजमरिनृपवदनां-
बुरुहं करिंकुवरिदिरॆ * पुरंदरं नृपपुरंदरं पॊगळिसिदं ॥ १३९ ॥
मगनॊर्वं तनगिर्वरं * मगंगॆ सुतरागॆ मूरुकण्णॊनॆ मूरुं
जगयं तनगॆरगिसिदं * त्रिगुणिसॆ तन्नॊळ्मनोरथं विजयरथं ॥१४०॥
विजयरथं धरित्रिगॆ मनोरथ सिद्धियनित्तु वक्त्रपं-
कज वरराजहंसवधु वाग्वधु रंजिसॆ तन्न कीर्ति दि-
ग्गज रदनक्कॆ कीर्तिमुखमागॆ जगज्जनकंठभूषणं
निजगुण नामवागिरॆ विराजिसिदं कवितामनोहरं ॥ १४१ ॥

इदु परम जिनसमय कुमुदिनी शरश्चंद्र बालचंद्र मुनींद्रचरण नख किरण चंद्रिका चकोर भारती कर्णपूर श्रीमदभिनवपंपविरचितमप्प रामचंद्रचरितपुराणदॊळ् पीठिका प्रकरणं प्रथमाश्वासं ॥

॥ पीठिका-प्रकरण प्रथमाश्वासम् समाप्तम् ॥

और पुरन्दर, वैरीपुर (शत्रुसमूह) को जलाकर उस ज्वाला को दिगंतों तक फैलाकर, उसकी (पुरन्दर की) शौर्यज्वाला से ऐसा प्रशंसित हुआ कि शत्रुराजाओं के मुखकमल काले पड़ गए। १३९ विजयरथ का एक पुत्र (सुरेन्द्रमन्यु) और उसके दो पुत्र (वज्रबाहु और पुरन्दर) मिलकर उसकी (विजयरथ की) मानो तीन आँखें हुईं और अपने बाहुबल से उन्होंने (पुत्र, पौत्रों ने) तीनों लोकों को अपने शरणागत कर लिया तो उसके (विजयरथ के) मनोरथ पूर्ण हुए। १४० विजयरथ ने इस तरह अपने राज्य और प्रजाजनों को मनोरथ-सिद्धि प्रदान कर दी। उसके मुख कमल में वाग्देवी (सरस्वती) निवास करके सुशोभित हुई। उसकी कीर्त्ति रूपी दिग्गजों की दाढ़ के लिए कीर्त्ति स्वयं मुख बनी, कविता मनोहारी विजयरथ जग-जनता का कंठाभरण बनकर विराजित हुआ। १४१

कवि अभिवन पंप, जो परमजिनसमय और कमलों के लिए शरत्काल के चंद्र के समान माने जाने वाले बालचंद्र मुनींद्र के पदनखों के चंद्रप्रकाश से पवित्र एवं जो सरस्वती के कर्णाभरण के समान हैं, के रामचंद्रचरित पुराण का यह पीठिका प्रकरण—प्रथमाश्वास है।

॥ रामचन्द्र-चरित्र-पुराण का पीठिका-प्रकरण प्रथमाश्वास समाप्त ॥

द्वितीयाश्वासं

श्रीयं वितरणदोळ् वाक्-
श्रीयं राज्यव्यवृत्तियोळ् विमलयश ।
श्रीयं जिनप्रवचन
श्रेय दोळनिशयिसि नेगळ्दभिनवपम्पं ।। १ ।।

आ विजय नरनाथनोंदु दिवस वोड्डोलगंगोट्टिर्पुदुं—
सकलक्षत्रकिरीटताडित पदांभोजातनास्थान वे-
दिकेंगुत्तानित चित्रवेत्रलतनोर्वं कार्यविज्ञापनो-
त्सुकंचित्तं धवलोत्तरीयवसनं लंबोदरं लंबकू-
र्चकलापं सितकंचुकं त्वरितदिं बंदं प्रतीहारकं ।। २ ।।

अंतु बंदु मोगसालेयोळ्मेय्यिक्कि मोगसुत्तिन दुगुलद भिन्नपद सेरगनधरपल्लवक्के तेगेदु, देव ! नागपुरदनाळ्विभवाहनन तनूभव-नुदयसुंदरकुमार नरमनेय बागिलोळ्बदुं निंदिर्दिपनेंदु बिन्नविसे बरवेळेंबुदुं—

दिवदोळ् बेळ्दिंगळं बित्तरिसे तरळमुकतावनंसप्रभा प-
ल्लवमाकारं स्मराकारमनजनिसे पोक्क नृपावासमं वा-
सवसौंदर्यं धरावल्लभसुभग सभालोकनाकर्षणं मा-
डे विशालोरस्स्थली निस्तुल चकचकित स्फारहारं कुमारं ।। ३ ।।

आश्वास—२

सम्पत्ति को दान के रूप में, वाक्सम्पत्ति को कृति के रूप में, कीर्ति-सम्पत्ति को जिनधर्म प्रसार में व्यय (व्यतीत) करके अभिनव पम्प (कवि) यशोभागी हुआ। १ एक दिन विजयरथ, जो समस्त क्षत्रियों के मुकुटों से वंद्य चरणकमल वाला था, अपने राजदरबार में बैठा था कि उसके दरबार में किसी के आगमन की सूचना देने के लिए उत्सुक एवं श्वेत वस्त्रधारी लंबोदर चारण (भाट) जल्दी आकर सम्मुख दिखाई पड़ा। २ ओढ़े हुए उत्तरीय के आंचल से होंठों को छिपाकर उसके यह कहने पर कि 'हे देव ! नागपुर के राजा इभवाहन के पुत्र उदयसुंदर प्रासाद के द्वार पर आपके दर्शन की प्रतीक्षा में खड़े हैं', विजयरथ ने आगंतुक को भीतर ले आने की आज्ञा दी--दिन में चाँदनी बिखेरने वाले सुन्दर मोतियों के शिरोभूषण से कामदेव को प्रतिबिंबित करने वाले

कतिपय परिजन परिवृत ❋ नतिललिताकृति सितातपत्रद नेरलोळ् ॥
सित शतपत्रच्छायां ❋ चित बाल मराल लीलेयं पालिसिदं ॥ ४ ॥

अंतु बंदु नृपसभासदनमं पोक्कु—

ओलगिसि वस्तुवाहन ❋ मालेयनुत्तंस मणिमरीचिर्गाळि भू-
पालन चरणसरोज ❋ क्कोलगिसिदनुदयसुंदरं तण्बिसिलं ॥ ५ ॥

अंतु विनतनादनंतरं सुरेंद्रमन्यु वज्रबाहु पुरंदरोळं विनय-वृत्तियं मेरेदु समुचितासनदोळ् कुळ्ळिर्दु मुकुलितांजलि पुटनागि—

सकलक्षत्रपवित्र निन्नचरणांबोजात सेवासमु-
त्सुकनस्मत्पितृवेन्न तंगेयननंग श्रीनटी नाट्यवे-
दिकेयं तन्न मगळ् गुणोदेयननंगोन्मादेयं वज्रबा-
हु कुमारंगिभवाहनं मदुवेमाळ्पुत्साहदिंदट्टिदं ॥ ६ ॥

एंदु बिन्नविसे विजयरथ महीनाथनुदयसुंदरन मुखारविंदमं नोडि—

कन्यके वज्रबाहुगनुरूपे गडं कुडुवं गडं जग
न्मान्यवेनिप्पुदात्तेनिभवाहनवल्लभनिंतिदन्य सा-
मान्यमे नम्म कोळ्कोडेगे नक्केडेयं समकट्टि कोट्टनें
धन्यनो धात्रनेंदु नुडिदं प्रियमं विजयांगनाप्रियं ॥ ७ ॥

सुन्दर उदयसुन्दर ने दरबार में प्रवेश किया। उसके विशाल वक्षस्थल पर सुशोभित कंठाभरण ने सभासदों को अनायास आकर्षित किया। ३ थोड़े ही परिजनों के साथ आया हुआ राजकुमार अपने मोहक रूप के साथ श्वेत छत्र की छाया में चलते समय ऐसा प्रतीत होता था मानो श्वेत कमल के पत्तों की छाया में शिशुहंस चल रहा हो। ४ इस तरह राजा (विजयरथ) के दरबार में पहुँचकर उसने अपने साथ लाई गई वस्तु, वाहन, शिरोभूषण, मणिमाला आदि बहुमूल्य भेंट राजा के चरण-कमलों में चढ़ाकर सिर नंवाया। ५ इस तरह सिर नंवाने के पश्चात् वह सुरेंद्रमन्यु, वज्रबाहु, पुरंदर आदि सबको मान सम्मान देकर उचित आसन पर बैठकर हाथ जोड़कर बोला—समस्त क्षत्रियों से सेवित आपके चरणकमलों की सेवा में उत्सुक मेरे पिताजी ने मेरी बहन गुणोदे, जो अनंगोन्मादसे पूर्ण है, को वज्रबाहु को देकर विवाह कराने की उत्सुकता से मुझे आपके पास भेजा है। ६ इतना निवेदन करने पर विजयरथ ने उदयसुन्दर के मुखकमल को देखकर कहा—वज्रबाहु के लिए अनुरूप कन्या है, यह सच है; देनेवाला जब जगत्मान्य उदात्त इभवाहन है तब यह

अधिराजं वदनांबुज ❋ मधुवॆनिसिद मधुरवचनदिं तणिपॆ मनो-
मधुकरमनुदयसुंदर- ❋ नदिकोत्सब रसतरंगिताराशयनादं ॥ ८ ॥

अंतातनं संतोषंबडिसि बिजयरथं विवाहमंगलोपकरण पुरस्सरमाशीर्निनदमॊदवॆ शुभदिन मुहूर्तदॊळ्—
ओरन्नरॆनिप राजकु- ❋ मारकरॊडनेरॆ वज्रबाहुकुमारं ।
वारणमनेरिदं दि- ❋ ग्वारणमं दिक्कुमाररेरुव तॆरदिं ॥ ९ ॥

पटुपटह शंक रुति दि- ❋ क्तटमं तळ्पॊय्यॆ गंडमंडलतटदॊळ् ।
नटियिसॆ मणिकुंडल रुचि ❋ पटलं नृपनणॆदु नूंकिदं वारणमं ॥ १० ॥

एरडुंपक्कदॆ पण्णिदोजॆविडियं कैगॆय्दु बंदेरि चा-
मरमं कन्नॆयरिक्कॆ लोहखुरवाहं सुत्ति कालगापिनॊळ् ॥
बरॆ बंदं धवळातपत्रदडियॊळ् कालगोदु गंधांध सिं-
धुरमं मॆय्गलि वज्रबाहुमहिपं वज्रायुधं बर्पवोल् ॥ ११ ॥

कॆलकॆलदॊळ् राजसुतर् ❋ कॆलबर् बरॆ राजचिह्न पाळिध्वज सं-
कुलमुं भटकटकमुमा- ❋ दलॆयॊळ्बरॆ वज्रबाहु पमणंबंदं ॥ १२ ॥

सामान्य विषय नहीं है। परस्पर स्थान-मान का ख्याल रखकर दान देने वाला दानी धन्य है। ७ जब इस प्रकार राजा ने अपने मुखकमल के मधु (मधुर वचनों) से सींचा तो उदयसुन्दर का मधुकर तुल्य मन अत्यन्त हर्षित हो आनंद-रस-तरंग में डूब गया। ८ इस तरह विजयरथ ने उसे खुश किया और शुभ दिन के शुभ मुहूर्त में विवाह मंगलोपकरण के साथ तथा आशीर्वाद के वचनों के साथ—वज्रबाहु अपने परिजनों के साथ हाथी पर उसी तरह सवार हुआ जिस तरह दिक्पाल दिग्गजों पर (सवार होते हैं)। ९ शंखनाद दिशाओं का आलिंगन करने लगा और हाथी के कुंभस्थलों में मणिकुण्डलों की कान्ति नृत्य करने लगी, इस प्रकार राजा हाथी पर सवार होकर आगे बढ़ने लगा। १० दोनों ओर से कतारों में खड़ी होकर कन्याएं क्रमसे चामर डुला रही थीं, पीछे से पैदल सेना और घुड़-सवार सैनिक अंग-रक्षार्थ आ रहे थे। ऐसे में श्वेतछत्र की छाया में चलता हुआ पराक्रमशाली वज्रबाहु वज्रायुधधारी इन्द्र के समान आगे बढ़ा। ११ दोनों ओर से राजकुमार कतार से चल रहे थे और वज्रबाहु समस्त सेना के साथ प्रयाण करता हुआ आगे बढ़ता रहा। १२ इस

अंतु बरुत्तुं—

मुगिलं मुट्टिद रत्नकूटरुचियिं ज्योतिर्विमानंगळं
नगुवंतुद्गत निर्झरपल्लवर्नदिं गंगासरित्पूरमं ॥
नगुवंतुन्नतिवेत्त कल्पतरु सानूद्यानदिं मेरुवं
नगुवंतोप्पुवुदं वसंतगिरियं कंडं महीमंडनं ॥ १३ ॥

आ वसंतगिरियोळेडेयाडुव विद्याधरवधूजनद सोर्मुडियिं सूसिद पूगेदगेय कुत्तुंगरिय तुरुंगलुमं, सिद्धकामिनियर कपोलपत्रदिंमदनकेळि योळुदिर्द कत्तुरियुमं, कनककदळीदळद पत्रभंगगळुमं, किंपुरुष दम्पतिगळ सुरतकोलाहलदिंदनंग संगीतक सदनमेनिसुवेळलतेय जोंपंगळुमं, किन्नर नितंबिनियर् चेंबोन्नशिलेय मेले विरचिसिद चेन्नेय्दिलेसळ पसेगळुमं, गंधर्वगणिकेयर बहुळपरिमळक्केळसि बळसुवेळदुंबिगळ नादक्के बेंचि बिसुट कर्णपूर पारिजात स्तबकंगळुमं, ओरोंदेडेयोळ् किसुसंजेयं पसरिसुव किसुगल्ल कूटंगळुमं, ओरोंदेडेयोळंधकारमं केदरुविंद्रनीलदोड्डुगल्गळुमं, अल्लिगल्लिगे निर्द्रवजलद्रुतियनोडरिसुव वैडूर्यशिखरंगळुमं, अत्तलित्तलेळवेळ्दिंगळं बित्तरिसुव चंद्रकांतद पासरेगळुमं, एल्लदेसेगं तण्बिसिलनवटियिसुव वज्रशिलातलंगळुमं,

---

तरह आते हुए, राजकुमार ने वसंतगिरि को देखा जो बादलों को छूनेवाली रत्नप्रभा से जगमगा रही थी, और जहाँ बहुत ऊँचाई से गिरनेवाली जलधारा से (मिलकर) गंगा नदी का प्रवाह बह रहा था, और आकाश से बातें करने वाले कल्पतरुओं के उद्यान-वन मेरुपर्वत का उपहास करते हुए सुशोभित थे। १३ उस वसंतगिरि में विचरण करने वाली विद्याधर स्त्रियों की दीर्घ केशराशि से गिरे हुए स्वर्णिम केवड़े के लघु किसलय के समूह को, सिद्धस्त्रियों के कपोलों से, रतिकेलि के समय झड़े हुए कस्तूरी लेप को, स्वर्णरंग की कदलियों से गिरे हुए पत्तों को, किंपुरुष दम्पतियों की कामक्रीडा से कामदेव के संगीतभवन कहलाने वाले लतामंडप को, किन्नर स्त्रियों द्वारा स्वर्णशिला पर रचित कमलों की चादर को, एवं गन्धर्व गणिकाओं द्वारा अपने शरीर के सुगन्ध को घेरने वाले भ्रमरों के झनकार से तितर-बितर होकर फेंके गये पारिजात के गुच्छों के कर्णाभरणों को, तथा कहीं-कहीं लघु संध्या फैलाने वाले काले पत्थरों के समूह को, और कहीं-कहीं लघु अंधकार फैलाने वाले नीलरत्नों की राशि को, जहाँ पानी न हो ऐसे स्थानों पर जलप्रपात की भ्रान्ति कराने वाले वैडूर्य्य शिखरों को,

जानाको मतलब् बुझी जनकजी रामको चरण्मा पऱ्या ।
खूशी मन् सबको गराइ बहुतै बीदा जनक्ले गऱ्या ॥
सीताजी महतारिका अगि गई अलिङ्गनादी गरी ।
लागिन् रूनर सोहि सूनि सबका आँसू खसे बर्बरी॥१२१॥

सीताजीकन अर्ति यो पनि दिया सासू ससूरा सरी ।
आर्को छैन बडो यही बुझि गऱ्या तिन्को टहल् बेस् गरी ॥
स्त्रीको धर्म पतिव्रता हुनु ठुलो जानेर हूनू भनी ।
अर्ती येति दिया र तेस् बखतमा बीदा भया ती पनि॥१२२॥

यै बीच्मा नगरा बज्या प्रभुजिका भेरी मृदङ्गा पनि ।
स्वर्गैमा पनि हर्ष भो प्रभु गया फेरी अयोध्या भनी ॥
राम्को लश्कर बाह्र कोश् जनकपुर्- देखी जसै ता गयो ।
सब्का चित्तमहाँ बडो भय दिन्या उल्का बहूतै भयो॥१२३॥

यस् पृथ्वीतलका ति क्षत्रिहरुको ठूलो विनाशै गरी ।
आया तेस् बिचमा तहाँ परशुराम् उल्का भयो जुन् घरी ॥
पृथ्वी कम्प भइन् तसै बखतमा हा हा सबैमा परी ।
राजाका मनमा विचार् यहि पऱ्यो छोरा बचुन् क्या गरी॥१२४॥

अब श्रीरघुनाथ की इच्छा अयोध्या लौटने की हुई। १२० सबको अत्यन्त प्रसन्न करके जनक ने विदाई दी। सीता जी की माता आगे बढ़कर पुत्री को आलिंगन में भर कर रोने लगीं। यह देख सभी की आँखों से अश्रु प्रवाहित होने लगे। १२१ सीता जी को यह सीख भी दी कि सास-ससुर के समान महान् और कोई नहीं। अतः उनकी सेवा-टहल भली प्रकार करना। पतिव्रता स्त्री का मूल धर्म तथा उसका पालन आदि उपदेश देने के पश्चात् उन्होंने सीता को विदा किया। १२२ इसी समय प्रभु [के कटक का] नगाड़ा बज उठा और यह जानकर कि प्रभु (राम) पुनः अयोध्या चले गए, स्वर्ग में भी मृदंगादि बज उठे। जनकपुर से बारह कोस ही लम्बे राम का जलूस गया था कि सबके मन में एक भयानक विघ्न उत्पन्न होने की आशंका हुई। १२३ इस पृथ्वी-तल पर तमाम क्षत्रियों का विनाश करने वाले परशुराम का उसी समय आगमन हुआ। उस समय पृथ्वी काँप उठी और चहुँ ओर हाहाकार मच गया, सभी भयभीत हो गए। राजा दशरथ मन में सोचने लगे कि पुत्र की रक्षा किस प्रकार हो। १२४ इस प्रकार विचलित

यस्तो चञ्चल चित्तले परशुराम्- का पाउमा झट् पऱ्या ।
मेरा पुत्र बचून् प्रभो परशुराम्! भन्न्या इ बिन्ती गऱ्या ॥
यस्तो बिन्ति पनी अनादर गरी कालाग्नि जस्ता भया ।
राम्को गर्व हरूँ भनी परशुराम् राम्कै अगाडी गया॥१२५॥

कस्को पुत्र तँ होस् बता मकन लौ जाबो पुरानू धनू ।
भाँच्तैमा अति गर्व भो तँकन ता धेरै कुरा क्या भनूँ ॥
यो ता हो हरिको धनू विर भया ताँदो यसैमा चढा ।
भन्दै खुप् रिसले रह्या परशुराम् राम्कै अगाडी खडा॥१२६॥

ताँदो आज चढाउँछस् त यसमा संग्राम् तँथ्यैं गर्दछु ।
सक्तैनस् तब हेर् म राख्तिन सबै- को प्राण् सहज् हर्दछु ॥
यस्ता क्रूर वचन् गरी परशुराम् कालाग्नि झैं रूप् धऱ्या ।
पृथ्वी कम्प गराइ लोकहरुको सम्पूर्ण सातो हऱ्या॥१२७॥

यस्तो क्रूर वचन् सुनेर रघुनाथ् क्रोध्ले अगाडी सरी ।
खोसी लीनुभयो धनुष परशुराम्- को त्यो बलैले गरी ॥
ताँदो जल्दि चढाइ बाण् पनि तहाँ लीनूभयेथ्यो जसै ।
ठूलो बल् रघुनाथको बुझि सबै खूशी भयो लोक् तसै॥१२८॥

होकर दशरथ ने परशुराम के चरणों में पड़ कर विनती की कि हे प्रभु परशुराम ! मेरे पुत्र बच जायें। ऐसी विनय को भी ठुकरा कर कालाग्नि की भाँति क्रोधित हो, राम के बल के गर्व की परीक्षा लेने के लिए परशुराम उनके सम्मुख गए। १२६ तुम किसके पुत्र हो ? मुझे बताओ। एक साधारण पुराना धनुष तोड़ने से ही तुम पर अत्यन्त गर्व छा गया है; और ज्यादा क्या कहूँ। यह तो हरि का धनुष है; यदि वीर हो तो इसकी प्रत्यंचा चढ़ाओ। यह कहते हुए परशुराम अत्यन्त क्रोधित होकर राम के ही सम्मुख आकर खड़े हो गए। १२६ यदि आज तू इसमें प्रत्यंचा चढ़ा देता है तो तुझसे मैं युद्ध करूँगा और यदि चढ़ा नहीं सकेगा तो किसी को मैं जीवित नहीं छोड़ूँगा। सहज ही सब का बध कर डालूँगा। ऐसे क्रूर वचनों का उच्चारण करके परशुराम ने कालाग्नि का रूप धारण किया। पृथ्वी को कम्पित कर सम्पूर्ण मानवों को भयभीत कर दिया। १२७ ऐसे क्रूर वचनों को सुनकर श्रीरघुनाथ जी क्रोधित हो कर आगे बढ़े और परशुराम के धनुष को बलपूर्वक छीन लिया। शीघ्रता से जैसे ही प्रत्यंचा चढ़ाकर उन्होंने बाण भी ले लिए, वैसे ही श्रीरघुनाथ जी की शक्ति को समझकर सब लोग अत्यन्त हर्षित

हूकुम् श्री रघुनाथको परशुराम्- लाई भयो यो तहाँ ।
तारो आज बताउ हान्छु अहिले ब्राह्मण् म हानूँ कहाँ ।।
चाँडो उत्तर देउ यस् बखतमा यस्लाइ लौ हान् भनी ।
तारो क्यै नदिया त काट्छु अहिले तिम्रा इ गोडा पनि।।१२९।।

हूकुम् येति गरेर तेज् परशुराम्- को खैंचनूभो जसै ।
चिन्ह्या श्रीरघुनाथलाइ अधिको वृत्तान्त सम्झ्या तसै ।।
बिन्ती येति तहाँ गऱ्या पनि हरे चिन्ह्याँ जगन्नाथ् भनी ।
जस्को अंश मिल्यो र केहि भगवान् यस्तो भयाँ मै पनी।।१३०।।

पापी भो अति कीर्तवीर्य अब ता यस्लाइ मार्छू भनी ।
बालक् पो म थियाँ गऱ्याँ हजुरको ठूलो तपस्या पनी ।।
यस्तो वर् खुशि भै मलाइ दिनुभो शक्ती समेतै गरी ।
इच्छा पूर्ण हुन्याछ जाउ अब ता क्यै शक्ति मेरो धरी।।१३१।।

पैल्हे मार र कार्तवीर्यकन फेर् सब् क्षत्रिको नाश् पनी ।
एक्काईस बखत् गऱ्या प्रभुजिको हूकुम् छ यस्तै भनी ।।
क्षत्री शून्य भयाकि पृथ्वि तिमिले कश्यप्जि लाई दिया ।
येती कर्म गरी सकेर अधिको सेखी पुऱ्याई लिया।।१३२।।

हुए। १२८ परशुराम को श्रीरघुनाथ की यह आज्ञा हुई कि हे ब्राह्मण! इसी समय कोई लक्ष्य बताओ जिस पर मैं प्रहार करूँ। शीघ्रता से उत्तर दो कि इस समय इस पर प्रहार करो, अन्यथा मैं तुम्हारे ये पाँव काट डालूँगा। १२९ यह आज्ञा देकर जैसे ही परशुराम की शक्ति भगवान् ने खींच ली, वैसे ही उन्हें (परशुराम को) पूर्वजन्म की बात स्मरण हो आई और उन्होंने श्रीरघुनाथ को पहिचान लिया। उसी समय इस प्रकार विनती की—हे हरि! मैंने पहिचान लिया कि आप वही जगन्नाथ हैं जिनका कुछ अंश पाकर मेरा भी अवतार हुआ है। १३० कार्तवीर्य अत्यन्त पापी हो गया है। अब मैं इसका बध करूँगा, यह निश्चय करके मैंने बालपन में ही आपकी घोर तपस्या की। उससे प्रसन्न होकर आपने मुझे शक्ति सहित ऐसा वर दिया कि अब जाओ, मेरी कुछ शक्ति को धारण करने से तुम्हारी इच्छा पूर्ण होगी। १३१ सर्वप्रथम कार्तवीर्य का वध करो, तत्पश्चात् सब क्षत्रियों का नाश करो। मेरी ऐसी आज्ञा है। तुम क्षत्रियों पर इक्कीस बार (प्रहार) करोगे। क्षत्रियों से रिक्त होते ही पृथ्वी को पुनः कश्यप जी को अर्पित कर दोगे। इतने कर्मों को पूरा कर अपनी अभिलाषाओं को पूर्ण करोगे। १३२ त्रेतायुग में

त्रेतामा अवतार् लिन्याछु नरमा राम्नाम् जगत्मा धरी।
भेट् होला तिमिथ्यैँ उही बखतमा यो शक्ति ल्यूँला हरी॥
ताहाँ देखि तपै गरेर रहनू ब्रह्माजिका दिन् भरी।
येती अर्ति मलाइ दिईकन गया बैकुण्ठ धाम्मा हरि॥१३३॥

मैले काम् पनि सो सबै गरिसक्याँ राम्लाइ भेटयाँ पनी।
मेरो शक्ति हजूरले हरि लिंदा चिन्ह्याँ प्रभू हुन् भनी॥
मेरो जन्म सफल् भयो सहजमा पायाँ परात्मा पनी।
बुझ्याँ तत्त्व पनी सबै हजुरको पात्रै कृपाको बनी॥१३४॥

जो छन् भक्त हजूरका ति सँगको सत्सङ्ग मेरो हवस्।
यो भक्ति दृढ भै प्रभू! हजुरका येही चरण्मा रहोस्॥
येती बिन्ति तहाँ गरी सकल पाप् पुण्यै समर्पण् गन्या।
इच्छित् वर् प्रभुले दिंदा परशुराम् आनन्दमा ती पन्या॥१३५॥

ताहाँ श्रीरघुनाथका वरिपरी घूमी नमस्कार् गरी।
मर्जीले ति गया महेन्द्र गिरिमा मन् राम्चरण्मा धरी॥
देख्या तेज् दशरथ्जिले र सुतको हर्षाश्रुधारा धरी।
प्रेम्का सागरमा तहाँ डुबिगया आलिङ्गनादी गरी॥१३६॥

येती काम् गरि राम् गया सहजमा पुग्या अयोध्या महाँ।
सीतालाइ लियेर राज्य सुख भोग् राम्ले गन्या क्यै तहाँ॥

राम के नाम से मनुष्य होकर मैं जन्म लूँगा। उसी समय तुमसे भेंट होगी। यह शक्ति पुनः हरण होने के पश्चात् दिन भर ब्रह्मा का ध्यान करते रहना। मुझे इस प्रकार शिक्षा देकर भगवान् हरि बैकुण्ठ लोक को चले गए। १३३ मैंने उन सब कार्यों को पूर्ण किया। राम से भेंट भी हो गई। आपसे मेरी शक्ति हरण किये जाने पर आप को प्रभु जानकर पहिचाना। मेरा जन्म सफल हुआ। सहज ही परमात्मा को भी पा लिया। आपका कृपा-पात्र वन उस सभी तत्व-ज्ञान को भी समझ लिया। १३४ आपके जो भक्त जन हैं उनसे मेरी संगति रहे। आपके इन्हीं चरणों में यह भक्ति दृढ़ रहे। इतनी विनती करके पाप एवं पुण्य वहीं समर्पित कर दिया, तथा प्रभु से वांछित वर पाकर परशुराम आनन्दमग्न हो गये। १३५ श्रीरघुनाथ जी के चारों ओर परिक्रमा कर परशुराम ने नमस्कार किया। राम के चरणों में अपने मन को अर्पित कर वे प्रसन्नता-पूर्वक महेन्द्र पर्वत पर चले गये। पुत्र राम की दिव्य ज्योति को देखकर नेत्रों में हर्षाश्रु भरकर प्रेम-सागर में मग्न दशरथ

क्यैदिन् भानिज हुन् भरत्कन यहीं ल्याऊँ घरैमा भनी ।
भानिज्लाइ लिना निमित्त खुशिले आया युधाजित्पनि।। १३७।।
बीदा श्रीदशरथ्जिले पनि दिया बीदा मिलेथ्यो जसै ।
एक् शत्रुघ्न लिई भरत्जि त गया मामा कहाँ पो तसै ।।
आया राम बिहा गरेर पुरिमा जस्सै उठेथ्यो खबर् ।
सारा रैयतको प्रसन्न मन भो हुन्थ्यो खुशी क्या अवर्।। १३८।।
सीताराम् अघि तप् गरिन् र त यहाँ छोरा बुहारी भया ।
कौशल्याकन ता मिल्यो अदितिको शोभा सबै ताप् गया ।।
सीताराम् पनि लोकमा सकलको आनन्द मङ्गल् गरी ।
चेष्टा मानिसको गरीकन रह्या त्रैलोक्यका नाथ् हरि।। १३९।।

बालकाण्ड समाप्त

जी ने उन्हें आलिंगन में भर लिया । १३६ इतना कार्य समाप्त कर राम सहज ही अयोध्या पहुँच गये । राम ने सीता को लेकर राजसी सुख भोग करने लगे । भरत जी के मामा के मन में भान्जे को अपने घर ले जाने की इच्छा हुई और वे उन्हें लिवाने के लिए आये । १३७ श्री दशरथ जी ने सहर्ष विदा दी और भरत शत्रुघ्न को साथ लेकर मामा के यहाँ चले गये । राम के विवाह करके नगर में आने की सूचना जैसे ही प्राप्त हुई सारी प्रजा आनन्द से विभोर हो उठी । १३८ पूर्वजन्म में किये तप के प्रभाव से राम और सीता का पुत्र तथा वधू के रूप में यहाँ अवतार हुआ । माता कौसल्या को सूर्य के समान शोभा प्राप्त हुई और सभी दुःख व चिंताओं का नाश हुआ । सीता-राम ने भी संसार को आनन्द-मंगल प्रदान किया । त्रिलोकीनाथ मानव-रूप में मानवोचित कार्यों में रत रहे । १३९

अयोध्याकाण्ड

एकान्त स्थलमा सितापति थिया सीता हजुर्मा रही ।
हात्मा चामर ली प्रभूकन तहाँ हाँक्थिन् समीप्मा गई ॥
आकाश् मार्ग गरी बहुत् खुशि हुँदै नारद्जि ताहीं गया ।
नारद्जीकन दण्डवत् गरि तहाँ राम्जी बहुत् खुश् भया ॥१॥
संसारी म थियाँ बडो हुन गयाँ दर्शन् मिलेथ्यो जसै ।
यो भाग्योदय हो बुझ्याँ पनि यहाँ दर्शन् मिल्याको उसै ॥
मैले गर्नु छ काम् कउन् हजुरको चांडो उ आज्ञा हवस् ।
त्यो काम् सिद्ध गराउँला हजुरको आनन्द मन्मा रहोस्॥२॥
यस्ता बात् प्रभुका सुनीकन जवाफ् सोही बमोजिम् दिया ।
नारद्ले बहुतै गऱ्या स्तुति तहाँ राम्लाइ मन्मा लिया ॥
बिन्ती गर्नु कुरो थियो मनविषे बिन्ती गऱ्या त्यो पनि ।
ब्रह्माको बिनती लिई हजुरमा आई रह्याँछू भनी ॥३॥
भूको भार म दुष्ट मारि हरुँला जान्छू अयोध्यामहाँ ।
भन्न्या येति वचन् गरीकन हजुर् पाल्नू भयेथ्यो यहाँ ॥

एकान्त स्थान में सीतापति श्रीराम बैठे थे । प्रभु के निकट जा कर सीता जी भी हाथ में चँवर ले कर डुला रही थीं । आकाश-मार्ग से होते हुए नारद जी ने अत्यन्त हर्षित होते हुए उन्हें दण्डवत किया । १ मैं एक तुक्छ सांसारिक प्राणी हूँ । आपके दर्शनों से ही इतना महान् हुआ हूँ । मैं यह समझ गया हूँ कि आपके दर्शनों से ही मुझे ऐसा भाग्योदय प्राप्त हुआ है । शीघ्र आज्ञा करें । श्रीमन् का जो भी कार्य करने को है, मैं शीघ्र ही उन सब को सिद्ध करूँगा; जिससे आपका मन प्रसन्न रहे । २ नारद जी ने भी राम की स्तुति मन में ही की और उनकी ऐसी बातों को सुन कर [राम ने] उत्तर भी उसी प्रकार दिया । सर्वभाँति मन ही मन विनती करते हुए प्रन्होंने कहा कि ब्रह्मा जी की एक प्रार्थना को लेकर आपके पास आया हूँ । ३ आप यह कह कर पधारे थे कि अयोध्या जा कर दुष्टों को मार कर पृथ्वी को भार से मुक्त करूँगा । परन्तु अब तो राजा दशरथ की इच्छा आपको राजगद्दी प्रदान करने की हुई

यस्तो हो तर गादि दीन दशरथ् राजाजिको मन् भयो ।
ख्वामित्‌ले अब राज्यमा भुलिदिया भार् हर्नु काम्‌ता रह्यो॥४॥

नारद्‌का ई वचन् सुनी खुशि भई उत्तर् प्रभूले पनी ।
जल्दी बक्सनुभो म राज्य नगरी भोली म जान्छू भनी ॥
ख्वामित्‌का इ वचन् सुनेर बहुतै नारद्‌जि खूशी भया ।
तीन् फेरा प्रभुको प्रदक्षिण गरी आकाश् गतीले गया ॥५॥

सन्तोष्‌ले दशरथ्‌जिको मनविषे आनन्द मङ्गल् भयो ।
राम्‌लाई अब राज्य द्यूँ भनि उसै मन् यस् लहड्‌मा गयो ॥
यस्तो मन् हुनगो र डाकि गुरुथ्यैं यस्तो हुकूम् भो पनी ।
भोली राज्य म दिन्छु पुत्रकन सब् सामग्रि ल्याऊ भनी ॥६॥

मन्त्री डाकि हुकूम् भयो सँग रह्या जो जो कहन्छन् गुरु ।
सो सो चीज् झटपट् तयार् गर अवर् सब् काम छोड्‌नू बरु ॥
मन्त्रीले पनि यो हुकूम् सुनि तहाँ साथै गुरूको रह्या ।
चाहिन्छन् जति चीज् ति खोज्न गुरुले खोलेर सब् चीज् कह्या॥७॥

मन्त्रीलाइ अह्राइ राघवजिका साथ्‌मा वशिष्ठै गया ।
पैले श्री रघुनाथले गुरु भनी सन्मान गर्दा भया ॥

है। हे स्वामी! यदि आप राज्य-कार्य में भूल गये तो पृथ्वी का भार-हरण करने का कार्य तो ऐसे ही रह जायगा। ४ नारद के इन वचनों को सुन कर प्रभु ने प्रसन्न हो कर उत्तर दिया। राज्य यदि इतनी शीघ्रता से दिया गया तो बिना राज्य किये ही चल दूँगा। स्वामी (राम) के इन वचनों को सुन कर नारद जी अत्यन्त प्रसन्न हुये। तीन बार प्रभु की परिक्रमा कर बड़ी तीव्र गति से आकाश की ओर चले गए। ५ सन्तोष से राजा दशरथ का मन परिपूर्ण था। वे आनन्द-मंगल में मग्न थे। इसी बीच उन्हें राम को राजगद्दी देने की उत्कण्ठा हुई। अतः गुरु को बुलाकर कहा कि अब कल मैं अपने पुत्र (राम) को राज्य सौंप दूँगा, अतः सभी आवश्यक सामग्री का संग्रह कीजिए। ६ मंत्री को बुला कर आदेश दिया कि सारे कार्य छोड़ कर गुरु जी जो सामग्री कहें वह शीघ्रता से तैयार करो। मंत्री भी इस आदेशानुसार गुरु के साथ ही रहे। जिन सामग्रियों की आवश्यकता थी, गुरु ने स्पष्ट वर्णन किया। ७ मंत्री को इतना भार दे कर गुरु बशिष्ठ राघव जी के संग गये। पहले श्रीरघुनाथ ने गुरु का सम्मान किया। वशिष्ठ बोले, हे त्रिलोकीपति! वैसे

हे त्रैलोक्यपते ! गुरू हुन त हूँ तिम्रो म क्या हूँ गुरु ।
इन्का हुन् इ गुरू भनेर इ सबै भन्छन् भनुन् लौ बरु॥८॥

तिम्रो दर्शन पाउँला भनी यहाँ प्रोहित् भयाकै म हूँ ।
गुह्यै खल्छ भनेर डर् हुन गयो धेरै कुरा क्या कहूँ ॥
खोल्न्या छैन म गुह्य चुप्प रहुँला सब् जान्दछू तापनि ।
जानी जानि म बिन्ति गर्न अहिले आयां हजुर्मा पनि ॥९॥

भोली हुन्छ तिलक् हजुर्कन यहाँ सामग्रि जम्मा भयो ।
पृथ्वीमा सुकला हवस् हजुरको सब् शास्त्रले भन्छ यो ॥
सब् इन्द्रीय जितेर आज उपवास् गर्नू सिताले सँगै ।
आज्ञा पाउँ म जान्छु काम् छ बहुतै सब्काम् विचार्छू म गैं॥१०॥

यस्तो बिन्ति गरी बशिष्ठ गुरु फेर् जस्सै गयाथ्या पनि ।
राम्ले लक्ष्मणथ्यै भन्या मतिमिलाइ काम् गर्न द्यूँला भनी ॥
छैनन् भाइ भरत् पनी त तिनका खातिर् छ मेरी दया ।
कौशल्या सुनि खुश् हुनिन् भनितजो सम्चार् बताउँदै गया॥११॥

राजाले त खतम् गर्न्या दिनु भनी क्या गर्दछिन् कैकेयी ।
यस्मा विघ्न कदापि पर्न नदिउन् लक्ष्मी र दुर्गा भई ॥

तो मैं तुम्हारा गुरु हूँ ही, पर मैं भला क्या गुरु हूँ ! हाँ, इनका गुरु अवश्य हूँ जो ये सब [मुझे गुरु] कहते हैं । ८ तुम्हारे दर्शन पाने के लिए मैं यहाँ पुरोहित हुआ हूँ । कहीं रहस्योद्‌घाटन न हो जाये इसका भय हुआ है और अधिक क्या बताऊँ । मैं सब कुछ जानते हुए भी रहस्योद्‌घाटन नहीं करूँगा । चुप ही रहूँगा । सब कुछ जान कर भी मैं अभी आपकी शरण में विनती करने आया हूँ । ९ कल आपका तिलक होगा । सब सामग्री एकत्रित हो गई है । भूमि पर ही सोने की कृपा करें, जैसा कि सभी शास्त्र कहते हैं । सब इंद्रियों को जीत कर आज सीता जी के साथ ही उपवास करने की कृपा करें । आज्ञा दीजिए । अत्यधिक कार्य है, जाकर कार्यों के विषय में विचार करता हूँ । १० ऐसी विनती कर गुरु वशिष्ठ जैसे ही चले गये, राम ने लक्ष्मण से सलाह की और कार्यभार सौंपा । भाई भरत भी जिनके प्रति मेरा अत्यधिक प्रेम है, यहाँ मौजूद नहीं हैं । कौशल्या माता भी सुनकर प्रसन्न होंगी, और उन्हें समाचार सुनाया । ११ राजा ने तो समाचार समाप्त करते हुये कहा, कैकेयी क्या करती है । लक्ष्मी और भगवती दुर्गा इसमें कदापि विघ्न न होने दें ।

ज़नख राज़स निशि रूयोश पानु ञावुय ।
दोपुन तस ञंन्द्रमस प्यठ सिरयि आवुय ॥
वेश्वामेत्रन ज़नख राज़स दोपुन डेश ।
छु नेछतुर जान रुत रूहिन तु बेयि तेश ॥
कमर गंड नेर दशरथ राज़ु छारुन ।
अनुख सारिय कौमार्य तारु तारुन ॥
ञली शर अंछ्य मुञरिथ कर नमस्कार ।
लख्यन छि रुत्य ञे टोठ्योय रामु अवतार ॥ ३० ॥

अनुन दशरथ करिव तोंह्य आशनावी ।
फिकिर ञंज्य सारिची नंव गयि बजायी ॥
न्यचुव छुय खोश यिवुन गाटुल हौनर मन्द ।
हौनर मंज़ूर लख्यमी वाति कस अन्द ॥
अगाफिल निशि पानस वातुनावुन ।
वुछुन पूशीदु पाठिन आज़मावुन ॥
हकीमा बे दवा करि ज़िन्दु मौरदन ।
कलमज़न बर हवा तसवीर लेखन ॥

बाहुबल से उन्होंने कमान को खींचकर ऐसा तीर चलाया (कि वह टूट गई) और उसका शोर (टूटने का स्वर) सकल दिशाओं में गूँज उठा। विश्वामित्र ऋषि स्वयं राजा जनक के पास गये और कहा तुम्हारे चाँद (सीता) पर सूर्य (रामचन्द्र) का योग बैठा है। विश्वामित्र ने राजा जनक से (आगे) कहा—अभी नक्षत्रों का योग भी अच्छा है—रोहिणी व पुष्य भी श्रेष्ठ हैं। उठिए, कमर कसिए और राजा दशरथ से मिलिए। वहाँ से सभी को बुला लाइए और अपनी कुमारी (सीता) को तार दीजिए। आपकी सारी चिन्ताएँ अब दूर हो जाएँगी। उत्तम लक्षण हैं और रामावतार आप पर प्रसन्न हो गये हैं ॥ ३० ॥ दशरथ को बुलाइए और आप दोनों आशनाई कर लीजिए (संबंध स्थापित कर लीजिए), सारी चिन्ताएँ आपकी अब दूर हो जायेंगी। लड़का (रामचन्द्रजी) बहुत ही खुश-शक्ल, प्रबुद्ध एवं हुनरमंद (कलावंत) है। ऐसे हुनरमन्दों के पास लक्ष्मी की कोई सीमा नहीं होती। आप चाहें तो उन्हें अगाफ़िल रूप से बुलाकर तथा अनजाने में (पोशीदा रूप में) देखकर उन्हें आज़मा सकते हैं। वे बिना दवाई के मुर्दों को ज़िन्दा करने वाले

इमारतगर छु बर आबे रवाना ।
करन संगीन बनावान तैमीर खाना ।। ३५ ।।

मुंनजिम त्युथ ख़बर आगाज़ो अंजाम ।
दिलस लीखित ज़ि गरदिश हाये अयाम ।।
बनन ती यी वनन द्रशटान्त हावन ।
अमा छु नु कांसि निश यिम सीर बावन ।।
अपुज़ पोंज़ वोंनुन तंम्य लोगुन मंज़िम योर ।
तिमन ओस लानि तंम्य पानस ह्योतुन बोर ।।
करुन सोरुय दयस छु पानु आसन ।
ख़बर छा कोनु छुख दयि व्याद कासन ।।
कबीलस तान्य त्युथुय राजु प्रछुनि गव ।
वनुनि लोंग कार दयि सुन्द आशच्चरस गव ।। ४० ।।

तिथय बगवान्य तस माया पनुन्य हांव ।
यि कथ कर अदु कबीलस कांसि तंम्य बांव ।।

हकीम हैं। कलाकार वे ऐसे हैं कि हवा में अपनी क़लम से तसवीरें बनाते हैं, कारीगर ऐसे हैं कि बहते पानी (आबेरवानी) में संगीन (कठोर, स्थायी) तामीर-ख़ाना (भवन) बना सकते हैं।। ३५ ।। ज्योतिषी ऐसे हैं कि उन्हें सभी के आग़ाज़ो-अंजाम की ख़बर रहती है तथा कायनात के गरदिश की सारी बातें उनके दिल पर लिखी रहती हैं। जो वे कहते हैं वह होता भी है और उसका दृष्टांत भी प्रस्तुत करते हैं। परन्तु वे किसी पर अपना रहस्य प्रकट नहीं करते हैं। इस प्रकार (रामचन्द्र जी की बड़ाई में) सत्य-असत्य कहकर उस (ऋषि) ने एक मध्यस्थ की भूमिका अच्छी तरह निभा ली। दरअस्ल, उन दो (राम और सीता) का संयोग होना लिखा था और ऋषि ने यह भार अपने ऊपर ले लिया—वे निमित्त बन गये। भगवान् को सब कुछ स्वयं करना होता है और इसकी ख़बर बिल्कुल नहीं रहती कि कब वे किस की विपदा दूर करेंगे। इस पर राजा जनक अपने क़बीले वालों के पास (राय पूछने के लिए) गये। वे आश्चर्य-मग्न होकर (रामचन्द्रजी) भगवान् की महिमा का वर्णन करने लगे।। ४० ।। और भगवान् ने कैसे अपनी माया दिखाई (धनुष को क्षणभर में तोड़ा आदि)—यह बात वे अपने क़बीले वालों तथा अन्य कुटुम्बियों से कहने लगे। वे आगे कहने लगे कि भगवान् को (नियति

वनुनि लोंग दय छु मिलुवान लॉन्य कारन ।
पतो नाहक़ छु लूकन बा'र्य खारन ।।
तवय आ'सुस शिवन दिञ्‌ मुञ्‌ कमान तीर ।
तमिस व्यवाह छु तस सुत्य त्रावि युस तीर ।।
सु अबिलाश ओस मनुक तस सोर द्रामुत ।
सु तीर ओसुस दपान वा'लिजि ञ्रामुत ।।
मुक़र्रर गव वेश्वामेत्रस लोंदुख बोर ।
ह्योंतुन तम्य मटि पानस ओस मंज़िम योर ।। ४५ ।।

वेश्वामेत्रन गछ्छिथ वोंन दशरथस यी ।
व्यवाह तस रामुचंन्दुरस वोंन्य करुन छुय ।।
यि बूज़ित कूत सा'पुन शाद दशरथ ।
वेश्वामेत्रस लोंगुस पादन वंदुनि रथ ।।
यि वुछितव करमुलीखा क्याह छि आसान ।
मंज़िमयोर छु बहानु खुर छु कासान ।।
लख्यन बूज़िथ ज़नख राज़ुह सपुन शाद ।
अ'छिन मन्ज़बाग रं'टिन रामुजुवुन्य पाद ।।

के चक्र के अनुसार) मेल कराना होता है और नाहक़ ही (दूसरे) लोगों पर इसका भार चढ़ता है (वे कारण बन जाते हैं)। इसीलिए शिवजी ने यह तीर-कमान दी थी कि (सीता का) विवाह उसी के साथ सम्पन्न होगा जो इससे तीर छोड़ेगा। अब उस (राजा) के मन की अभिलाषा पूर्ण हो गई थी और दिल में लगा तीर (कहीं सीता कुँआरी ही न रह जाय) निकल गया था। (बाद में) यह मुक़र्रर हुआ कि पहले दशरथ को मनाने का काम विश्वामित्र को सौंपा जाय। इस तरह (विश्वामित्र ने) यह काम अपने ज़िम्मे ले लिया और मध्यस्थ बन गये ।। ४५ ।। (बाद में) दशरथ के पास जाकर विश्वामित्र ने यह कहा कि रामचन्द्रजी का विवाह अब आप को करना ही चाहिए। यह सुनकर दशरथ अत्यन्त शाद (प्रसन्न) हुए और विश्वामित्र की पाद-वन्दना करने लगे। यह देखिए, कर्म का लेख इसी को कहते हैं—मध्यस्थ तो बहाना होता है जो मात्र व्यवधान दूर करता है। इधर, रामचन्द्र के लक्षण सुनकर राजा (जनक) भी शाद हो गये और उन्होंने रामचन्द्र जी के पाद-कमलों को अपनी आँखों के साथ लगाया। उनका

स्यठा गोस मन प्रसंद खोॅशहाल साॅपुन ।
वेॅज़्राॅरिथ शेॅछ्य लंज़ुन तस दशरथस कुन ।। ५० ।।

लंज़ुन शेॅछ्य दशरथस तंम्य राज़ु ज़नखन ।
च्रे मा व्यवाह करुन छुय राज़ु पोॅत्रन ।।
स्यठा सामानु पूरिथ राज़ु दशरथ ।
गछेम युन सुत्य ह्यथ सालुर्‍य बअशरत ।।
त्युथुय युथ मन गछेम यंज्रसाविदान शाद ।
वेॅश्वामेॅत्रस दोॅपुन सद आफरींबाद ।।
यि वुछतव क्याह छु आसन दयि कारन ।
गछान छु येॅलि मिलुवा लांन्य कारन ।।
मुक़रर यी सपुन बासाज़ो सामान ।
तिथय महाराज़ु गछि युन खोॅश तु खेलान ।। ५५ ।।

पगाह सिरियन ज़ि कोह येॅलि शोलु त्रोवुन ।
दपान दशरंथ्य समय यंज्र शोरुनोवुन ।।
संमिथ तस आस कबीलु सोर क्रोनुय ।
दपान खांदर करनि गछि राज़ु सोनुय ।। ५७ ।।

मन बहुत प्रसन्न व ख़ुशहाल हुआ और उन्होंने विचार कर के दशरथ के यहाँ सन्देश भिजवाया ।। ५० ।। कि आप को अपने राजपुत्रों का विवाह तो नहीं करना है ? हे राजा दशरथ ! ख़ूब सजधज कर ब (ऐशो) इशरत आप बरातियों को संग लेकर पधारना ताकि मेरा मन पर्याप्त शाद हो जाये। (इसके बाद राजा जनक ने) विश्वामित्र को आफ़रींबाद (धन्यवाद) कहा (क्योंकि उन्हीं की वजह से यह शुभकार्य सम्पन्न होने जा रहा था।) देखिए, भगवान् की लीला भी कितनी अपरंपार है। जब दो व्यक्तियों का संयोग लिखा होता है तो वे कैसे उन्हें मिला देते हैं। (बाद में) मुक़र्रर यह हुआ कि दूल्हा ब-साज़ो-सामान (साज-सज्जा से युक्त) ख़ुशियाँ मनाता व खेलता हुआ आयेगा ।। ५५ ।। दूसरे दिन जैसे ही सूर्य (कोह) पहाड़ के उस पार से चमकता हुआ उदित हुआ तो कहते हैं दशरथ के यहाँ ख़ूब शोर-गुल (जोश-ख़रोश) हुआ। उसके सभी क़बीले वाले व बन्धु-बाँधव (कुटुम्बी) आगये और कहने लगे कि हमारा राजा विवाह करने जा रहा है ।। ५७ ।।

यैनि वाल्युक ग्यवुन

वनु वुनु मंज़ु रुत्र वासना द्राये ।
शामु रूपु रामु गछि सीताये ॥
ओम शबदु सुतिन शोकलम करिथ ।
बनुवुन ह्योतनय माजि बवाने ॥
लोलु सुत्य सरस्वती बेयि व्यज़ुयाये ।
शामु रूपु रामु गछि सीताये ॥ १ ॥
व्यज़ुया सों बरिथ दीवियि आये ।
प्यंगला तु मंगला शारदा ह्यथ ॥
शोंबुफल द्युतुनय माजि राग्नियाये ।
शामु रूपु रामु गछि सीताये ॥ २ ॥
छांविथ हियि पोश माजि शिवाये ।
वोत्रुसि वोमायि कोरनय बाव ॥
सामानु गोण्डुनय माजि शारिकाये ।
शामु रूपु रामु गछि सीताये ॥ ३ ॥
लंखिमी सुत्य सुत्य रोपु बवाने ।
सोनु मालु मोख्तु मालु छुनिनस नाली ॥

बरातियों का गीत

(इन) गीतों से शुभ बोल फूट रहे हैं, हमारे श्याम रूप राम सीता को वरण करने जा रहे हैं। ओम् शब्द के साथ शुक्लम् का उच्चारण करके माता भवानी मंगलगीत गाने लगी है। सरस्वती और विजया भी प्रेम-मग्न होकर गाने लगीं—(हमारे) श्याम रूप राम सीता को वरण करने जा रहे हैं। १ विजया के संग अन्य देवियाँ पिंगला, मंगला और शारदा भी आ गईं। माता राज्ञी ने शुभफल की बौछार की—(हमारे) श्याम रूप राम सीता को वरण करने जा रहे हैं। २ माता शिवा ने हिय-पुष्पों की वर्षा की, उत्रस की उमा§ ने प्रेमभाव प्रकट किया तथा माता शारिका ने साज़ो-सामान से (श्रीरामचन्द्र) को सुसज्जित किया—(हमारे) श्याम रूप राम सीता को वरण करने जा रहे हैं। ३ लक्ष्मी के साथ-साथ रूपभवानी भी आ गईं और उन्होंने सोने की मालाएँ व

§ उत्रस ग्राम की देवी 'उमा'। इस गीत में कश्मीर प्रदेश के स्थानीय देवी-दवताओं के कई नाम आये हैं।

वा̆ल्य त्रालु गंजिनस माजि कालिकाये ।
शामु रूपु रामु गछ़ि सीताये ।। ४ ।।

शीतला तु तोतला रामुनि माये ।
ड्यकस प्यठ च्रंदरमु प्रज़लान छ़ुस ।।
सो̆नु जामु गॅंडिनय कौशल्याये ।
शामु रूपु रामु गछ़ि सीताये ।। ५ ।।

गायत्री तु सावित्री त्रिसन्द्याये ।
ज़लन गामि नारु मंज़ु रॅटनय जाये ।।
पवुनु सन्द लो̆दरु सन्द बरगुशिखाये ।
शामु रूपु रामु गछ़ि सीताये ।। ६ ।।

वसिष्ट तु ब्रह्मा वीद परान द्राये ।
ब्रह्मा व्यॆशिन तु ईशर द्राव ।।
नमस्कार बोविनय करमु लीखाये ।
शामु रूपु रामु गछ़ि सीताये ।। ७ ।।

यॅन्दुराजु दरमु राजु बरक अन्दाज़ुय ।
चाव बरान कीकी वनुवान द्राये ।।
बरथजी शुत्रगुन वुछ़िने द्राये ।
शामु रूपु रामु गछ़ि सीताये ।। ८ ।।

मुक्ताओं की मालाएँ (उनके) गले में डालीं । अन्य आभूषण (कुण्डल, अंगूठी आदि) माता कालिका ने पहनाये—(हमारे) श्याम रूप राम सीता को वरण करने जा रहे हैं । ४ शीतला (देवी) और तोतला (देवी) भी प्रिय रामचन्द्रजी के लिए आ गईं । उन (रामचन्द्रजी के) माथे पर चन्द्रमा प्रज्वलित हो रहा है । कौशल्या ने स्वर्ण-वस्त्र (उन्हें) पहनाये—(हमारे) श्याम-रूप राम सीता को वरण करने जा रहे हैं । ५ गायत्री, सावित्री और त्रिसन्ध्या भी आ गईं । जलनगाँव की देवी तथा पवन-सन्ध्या, लो̆दरु सन्ध्या और बरगुशिखा भी पधारीं—(हमारे) श्याम रूप राम सीता को वरण करने जा रहे हैं । ६ वशिष्ठ और ब्रह्मा वेद-पाठ करते हुए निकल पड़े । ब्रह्मा के साथ-साथ विष्णु व ईश्वर भी निकल पड़े । कर्म के लेख को नमस्कार हो—(हमारे) श्याम रूप राम सीता को वरण करने जा रहे हैं । ७ राजा इन्द्र और धर्मराज ने मुख्य कार्यकर्त्ताओं की भूमिका निभाई और कैकेयी चाव से मंगलगीत

साविदान मन गोस शाद्य करानुय ।
मनु किन्य लोलु सुत्य सोमेताये ।।
नाल्य मालु छ्रनिनस कौशल्याये ।
शामु रूपु रामु गछि सीताये ।। ९ ।।

ह्यंगला तु मंगला बंदरकल आये ।
बावुकि सरु मंजु ह्यथ पंपोश ।।
येंछि सुत्य रामस लागुनि आये ।
शामु रूपु रामु गछि सीताये ।। १० ।।

तपीशर मुनीशर सुत्य तस द्राये ।
वनु वंन्य लोलु येंछ सुत्य ह्यथ द्राये ।।
नमस्कार बोविनय वेशनु मायाये ।
शामु रूपु रामु गछि सीताये ।। ११ ।।

दीवियि विगने पतु ब्रोंठु द्राये ।
ब्रोंठु ब्रोंठु विगिनि छ सोज़ करान ।।
पतु पतु दीवियि वनुवान द्राये ।
शामु रूपु रामु गछि सीताये ।। १२ ।।

गाती हुई निकली । भरत और शत्रुघ्न भी (श्रीराम को) देखने के लिए निकल पड़े । (हमारे) श्याम रूप राम सीता को वरण करने जा रहे हैं । ८ सुमित्रा का मन निश्चिंत होकर शादमानी करने लगा और वह प्रेम-मग्न हो उठी । उसके गले में कौशल्या ने मालाएँ डालीं—(हमारे) श्याम रूप राम सीता को वरण करने जा रहे हैं । ९ हिंगुला, मंगला और भद्रकाली भी आ गईं । बड़ी लगन के साथ सभी अपने भावना के सरोवर के कमल (श्रद्धा-पुष्प) श्रीरामचन्द्र को लगाने के लिए आ गईं—(हमारे) श्याम रूप राम सीता को वरण करने जा रहे हैं । १० (बड़े-बड़े) तपीश्वर और मुनीश्वर भी सप्रेम तीनों के साथ-साथ निकल पड़े । विष्णु की माया को नमस्कार हो—(हमारे) श्याम रूप राम सीता को वरण करने जा रहे हैं । ११ (विभिन्न) देवियाँ व अप्सराएँ (नृत्य-गान करती हुईं) आगे-पीछे निकल पड़ीं । आगे-आगे देवांगनाएँ (अप्सराएँ) संगीत (वाद्य) बजाने लगीं और पीछे-पीछे देवियाँ मंगल-गान करती हुईं निकल पड़ीं—(हमारे) श्याम रूप राम सीता को वरण करने जा रहे हैं । १२ नीलनाग (नील-सरोवर) के तरह-तरह के कमलों (पंकपुष्पों)

कम कम पंपोश नीलुनागु द्राये।
येंछि सुत्य लागु हा श्री रामस ।।
मनु किन्य येंछि सुत्य लागुनि द्राये।
शामु रूपु रामु गछि सीताये ।। १३ ।।

प्रकाश चोनुय छुय प्रथ जाये।
गट च्रंज्य असि चानि दशरनु सुत्य ।।
दीवियि तु दीवता शरनुय आये।
शामु रूपु रामु गछि सीताये ।। १४ ।।

श्री रामुसुन्द यॆनिवोल

गोंडुख सामानु सोरुय राज़ुपोत्रन।
सपुन खोंश राज़ु डीशिथ राज़ुपोत्रन ।।
बंरिथ सामाना अज़ ज़र बफ्त अतलास।
स्यठाह नाल्य मोंख्तु मालु सासु बंद्य सास ।।
गुरेंन हसितेंन गोंडुख सामानु अज़ ज़र।
सरापा ग़रक़ गयि दर ज़रो ज़ेवर ।।

की भावाञ्जलि श्रीराम पर चढ़ाई गई। सभी मन व लगन से ये पुष्प (उन पर) चढ़ाने के लिए निकल पड़े—(हमारे) श्याम रूप राम सीता को वरण करने जा रहे हैं। १३ (हे राम !) आपका ही प्रकाश प्रत्येक स्थान पर है। आपके दर्शन से हमारा अंधकार दूर हो गया। सभी देवी-देवता आपका दर्शन करने के लिए आ गये हैं—(हमारे) श्याम रूप राम सीता को वरण करने जा रहे हैं। १४

श्रीराम की बरात

राजपुत्रों को (विभिन्न प्रसाधनों से) अलंकृत किया गया और राजा उन्हें देखकर खुश हो गये। (सभी राजपुत्र) मूल्यवान् बाफ़्ता, अतलस आदि (क़ीमती वस्त्रों) से युक्त थे। गले में हज़ारों की संख्या में मुक्ताओं की मालाएँ (सुशोभित हो रही) थीं। घोड़ों व हाथियों पर मूल्यवान् सामान लादा गया और उन्हें सिर से पैर तक ज़रो-ज़ेवर से ग़र्क (निमग्न) किया गया। सभी ख़ुशी-ख़ुशी अराबों (गाड़ियों) पर सवार हो गये और रथों व हाथियों पर से नक़्क़ारे (नगाड़े) बज उठे।

सरनि जोगु सुनि सरनी आए करि किरपा प्रभ आप मिलाए ॥
मिटि गए बैर भए सभ रैन अंमृत नामु साध संगि लैन ।
सुप्रसंन भए गुरदेव पूरन होई सेवक की सेव ।
आल जंजाल बिकार ते रहते राम नाम सुनि रसना कहते ।
करि प्रसादु दइआ प्रभि धारी नानक निबही खेप हमारी ॥ ४ ॥

सुन कर पुश्तीबान[1] ख़ुदा को पुश्तीबान बनाया है
उसने फ़ज़ल[2] किया है ऐसा अपने साथ मिलाया है
बैर अदावत झूठे सारे ख़ाक में होकर जीता है
संतों की संगत में रहकर नाम का अमरित पीता हूँ
देख के मेरी सेवा को गुरदेव मेरे खुरसन्द[3] हुये
सेवा मेरी पूरी उतरी सेवक को आनन्द हुये
नाम प्रभू का सुनने से और नाम प्रभू का कहने से
झूठे सब जंजालों से और पाप कपट में रहने से
अपने गुरु की रहमत से यह बख़्शिश ख़ास ज़रूर हुई
'नानक' खेप[4] हमारी सारी पहुँची और मन्ज़ूर हुई ॥४॥

प्रभ की उसतति करहु संत मीत सावधान एकागर चीत ।
सुखमनी सहज गोबिंद गुन नाम जिसु मनि बसै सु होत निधान ।
सरब इछा ताकी पूरन होइ प्रधान पुरखु प्रगटु सभ लोइ ।
सभ ते ऊच पाए असथानु बहुरि न होवै आवन जानु ।
हरि धनु खाटि चलै जनु सोइ नानक जिसहि परापति होइ ॥ ५ ॥

आओ प्यारे सन्तों आओ मालिक के गुन गायें हम
एक प्रभू को याद करें और उस पर ध्यान जमायें हम
'सुखमनी' जिसमें धीरज हम्द और नाम ख़ुदा का आया है
जिसके मन में बस जाये गन्जीना[5] उसने पाया है
जो जो मन की ख़्वाहिश है वह हासिल करता जाता है
बनता है परधान वही और जग में शोहरत[6] पाता है

---

१ आश्रय दाता, सहारा २ कृपा ३ प्रसन्न ४ करनी ५ ख़ज़ाना ६ कीर्ति, प्रसिद्धि ।

सब से आली सब से ऊँचा ऐसा रुतबा पाता है
जिसमें क़ायम रहता है वह आता और न जाता है
'सुखमनी' ऐसा निअ्‌मत है जो 'नानक' उसको पायेगा
दौलत रब के नाम की लेकर वह दुनिया से जायेगा ॥५॥

खेम सांति रिधि नव निधि बुधि गिआनु सरब तह सिधि।
बिदिआ तपु जोगु प्रभ धिआनु गिआनु स्रेसट ऊतम इसनानु।
चारि पदारथ कमल प्रगास सभ कै मधि सगल ते उदास।
सुंदर चतुरु तत का बेता समदरसी एक दृसटेता।
इह फल तिसु जन कै मुखि भने गुर नानक नाम बचन मनि सुने ॥६॥

उसको सुख आनन्द मिले नौ गञ्जीने[1] भी दौलत भी
अक़्ल[2] बढ़े और इल्म[3] बढ़े वह पाये ज़ोर करामत[4] भी
ज्ञान मिले और ज़ुहद[5] कमाये योग भी रब का ध्यान भी हो
हासिल हो इरफ़ान भी उसको पाकीज़ा स्नान भी हो
चार मुरादें हासिल हों और नूर से मन भरपूर रहे
सब के अन्दर रह कर भी वह लाग-लपट से दूर रहे
हुस्न मिले चतुराई भी और असल हक़ीक़त जाने वह
सबको एक नज़र से देखे सब को यकसा माने वह
'सुखमनी' दिल से पढ़ने वाला यह सारे फल पायेगा
गुरु 'नानक' से नाम की महिमा सुन कर ध्यान जमायेगा ॥६॥

इहु निधानु जपै मनि कोइ सभ जुग महि ताकी गति होइ।
गुण गोबिंद नाम धुनि बाणी सिम्रिति सासत्र बेद बखाणी।
सगल मतांत केवल हरिनाम गोबिंद भगत कै मनि बिस्राम।
कोटि अप्राध साध संगि मिटै संत कृपा ते जम ते छुटै।
जा कै मसतकि करम प्रभि पाए साध सरणि नानक ते आए ॥ ७ ॥

'सुखमनी' एक ख़ज़ाना है जो हाथ में उसको लायेगा
जिस जुग में भी जायेगा संसार से मुक्ती पायेगा

---

१ नौ निधि २ बुद्धि ३ ज्ञान ४ चमत्कार ५ संयम, तप ६ अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष।

उसमें नाम ख़ुदा का है तुम हम्द उसी का गाओगे
शास्त्रों स्मृतियों वेदों सब में नाम यह पाओगे
असल हक़ीक़त नाम है रब का हर मज़हब यह कहता है
सब भक्तों के मन के अन्दर नाम ख़ुदा का रहता है
पाप करोड़ों लाखों हों सब साध की संगत दूर हटाये
सन्तों की जब किरपा होगी मौत से भी छुटकारा पाये
भाग हैं जिनके माथे पर वह ख़ुशक़िस्मत कहलाते हैं
साधों की किरपा से 'नानक' उनके साये में आते हैं ।।७।।

जिसु मनि बसै सुनै लाइ प्रीति तिसु जन आवै हरि प्रभु चीति ।
जनम मरन ताका दूखु निवारै दुलभ देह ततकाल उधारै ।
निरमल सोभा अंमृत ताकी बानी,
एकु नामु मन माहि समानी ।
दूख रोग बिनसे भै भरम साध नाम निरमल ताके करम ।
सभ ते ऊच ताकी सोभा बनी नानक इह गुणि नामु सुखमनी ।।८।।

प्रेम से उसको सुन-सुन कर जो मन उससे आबाद करे
मन में रब को याद करे वह मन में रब को याद करे
मरने का ग़म दूर हो उससे जीने का दुख जायेगा
यह जीवन नायाब[1] है उसका पल में मुक्ती पायेगा
जिनके मन में एक प्रभू का प्यारा नाम समाता है
उसकी बोली अमरित है वह ख़ालिस सोभा पाता है
दुख जाये सब रोग मिटें शक दूर हों ख़ुद बेबाक[2] रहे
उसका साधू नाम पड़े हर काम में साफ़ और पाक रहे
सब से ऊँची शान है उसकी रुतबा उसका आली है
'सुखमनी' उसका नाम है 'नानक' यह ऐसी गुनवाली है ।।८।।

---

१ दुर्लभ, अलभ्य २ निर्भय ।

अरदास

१ ओं वाहिगुरू जी की फ़तह ॥
श्री भगौती जी सहाइ ।

वार श्री भगौती जी की पातशाही १० । प्रथम भगौती सिमरि कै गुरु नानक लई धिआइ । फिर अंगद गुरु ते अमरदासु रामदासै होईं सहाइ । अरजन हरगोविंद नो सिमरौ श्री हरिराइ । श्री हरिकिशन धिआईऐ जिस डिठे सभि दुखि जाइ । तेगबहादर सिमरिऐ घर नउ निधि आवै धाइ । सभ थाईं होइ सहाइ । दसवें पातशाह श्री गुरु गोबिंदसिंह जी महाराज ! सब थाईं होइ सहाइ । दशहों सत्गुरुओं के ज्योतिस्वरूप श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी के पाठ व दर्शन का ध्यान धर कर बोलो जी वाहिगुरू ! पांच प्यारों, चार साहिबज़ादे (गुरुकुमारों), चालीस मुक्तों, हठी-जपी-तपियों, जिन्हाँने नाम जपा, बांट छका, देग चलाई, तेग़ वहाई, देख के अणडीठ किया, उन प्रेमी गुरुमुख (सत्यवादियों) प्यारों की पवित्र कमाई का ध्यान धर के ख़ालसा जी ! बोलो जी वाहिगुरू !

जिन सिंह सिंहनियों ने धर्म्म पर बलिदान दिये, अंग-अंग कटवाए, खोपरियां उतरवाईं, चर्खियों पर चढ़ाए गये, आरियों से तन चिरवाए, धर्म नहीं छोड़ा, सिख धर्म को केशों तथा प्राणों सहित पालन किया । उनकी कृत्य कमाई का ध्यान धर के ख़ालसा जी ! बोलो जी वाहिगुरु !

चारों तख़तों, समूह गुरुद्वारों का ध्यान धर के बोलो जी वाहिगुरु !

प्रथमे सर्व ख़ालसा जी की अरदास है, सर्वं ख़ालसा जी को वाहिगुरु, वाहिगुरु, वाहिगुरु चित आवै, चित में आने से सर्व

सुख हो। जहां-जहां ख़ालसा जी साहिब, तहां-तहां रक्षा रिआयत, देग-तेग फ़तह, बिरद की लाज, पन्थ की जीत, श्री साहिब जी सहाय, ख़ालसा जी का बोलबाला, बोलो जी वाहिगुरू !!!

सिखों का मन नम्र, मति ऊँची, मति का रक्षक स्वयं वाहिगुरू। हे नि:मानों के सम्मान, नि:त्राणों के त्राणी, नि:ओटों की ओट, निराश्रयों के आश्रय, सच्चे पिता वाहिगुरू ! आप की सेवा विखे.........................की अरदास है।

अक्षर, लग, मात्र, भूल, चूक क्षमा करनी, सर्व के कारज सिद्ध करने।

उन प्रेमियों का मिलाप कराओ जिन के मिलने से चित में तेरा नाम बसे।

नानक नाम चढ़दी कला।
तेरे भाणे सर्वत्त का भला ॥

★ ★ ★ ★ ★ ★

वाहिगुरू जी का ख़ालसा। श्री वाहिगुरू जी की फ़तह ॥

नोट—यह अरदास पंजाबी भाषा में है। हिन्दी पाठक भी इसका पाठ समझ कर अरदास कर सकें इस लिए भाषा में थोड़ा परिवर्तन करते हुये पंजाबी छाप को भी साथ-साथ कायम रखा गया है।

—लिप्यन्तरणकार

रामायण कृत्तिवास हिन्दी में

गोस्वामी तुलसीदास से एक शती पूर्व सन्त कृत्तिवास रचित बंगला की अति लोकप्रिय 'रामायण कृत्तिवास' के पाँच काण्ड का ललित हिन्दी पद्यानुवाद तथा बंगला मूल पाठ का देवनागरी लिपि में लिप्यन्तरण हिन्दी भाषी समुदाय के लिए अनायास बंगला का ज्ञान प्राप्त कराने में नितांत सक्षम है। अनेक नये और अद्भुत कथा-प्रसंगों को पढ़ते हुये बंगला और हिन्दी दोनों भाषाओं के काव्य रस का आनन्द उठाइये। एक दूसरे की सहायता से दोनों भाषाएँ बिना शिक्षक की सहायता के सरलता से सीखी जा सकती हैं। इसके 'आदिकाण्ड संस्करण' को हिन्दी समिति, उत्तरप्रदेश द्वारा पुरस्कृत होने का गौरव प्राप्त है। भूमिका—स्वामी रामकृष्ण परमहंस आश्रम, बिलूरमठ, हावड़ा। सजिल्द पाँच काण्ड का मूल्य १२·००। रवानगी खर्च अलग। जो सज्जन आदिकाण्ड पहले खरीद चुके हैं उनके लिए बाक़ी चार काण्ड ७·०० में भी उपलब्ध हैं।

क़ुरआन शरीफ़ [हिन्दी]

बीस साल की मुसलसल अिल्मी मिहनत के बाद देवनागरी रस्मुलख़त में क़ुर्आन शरीफ़ छप कर अवाम की पेश नज़र है। इसमें मिलते जुलते हुरूफ़ मसलन ज़ाल, ज़े, ज़ाद, ज़ो वग़ैरः को अलाहदः मुमताज़ करते हुये रमूज़ औक़ाफ़ (विरामाविराम चिह्न), आयत संख्या, वक़्फ़ नबी स०, व० मंज़िल, व० ग़ुफ़रान, वक़्फ़ लाज़िम, हर पारे के रुबुअ, निस्फ़, सुलुस, रुकूअ, सज्दः, मद्द, हमज़ः साकिन, हमज़ए वस्ल, मुआनक़ः,हर सफ़े पर आयत ख़त्म, शुमार मंज़िल, पारः और सूरः, ग़रज़ कि शास्त्रीय अरबी पद्धति पर इमकानी सूरत में सही तिलावत (पाठ) का पूरा इहतियात मुहय्या किया गया है। हिन्दी रस्मुलख़त में आयतें लिखने के साथ-साथ हर सफ़े पर क़ुर्आन शरीफ़ के असली ख़त याने अरबी ख़त में इन्तहाई सही ब्लाक भी देकर नक़्स की गुन्जाइश ही ख़त्म कर दी गई है। साथ-साथ आसान आम फ़हम ज़बान में मुस्तनद उर्दू तर्जुमों की बुनियाद पर, आलिमों की नज़र सानी के बाद, हिन्दी तर्जुमा व तफ़्सीरी नोट्स को भी मतन (मूल) के मुक़ाबिल दिया गया है।

हिन्दी रस्मुलख़त में क़ुर्आन शरीफ़ को पढ़ने-लिखने के क़वायद, तलफ़्फ़ुज़, इदग़ाम, वस्ल-फ़स्ल व अनेक याद-दहानियों का एक वसीअ चार्ट, और मज़ामीन

की फ़िहरिस्तों ने हिन्दी में तरीक़े तिलावत को निहायत आसान कर दिया है। अलावा, मौलाना सय्यद अबुल हसन अली अलहसनी अलमदनी जनाब अली मियाँ साहब ने इस हिन्दी क़ुर्आन शरीफ़ पर 'पेश लफ़्ज़' लिख कर इस मिहनत को ज़ीनत बख़्शी है।

स्व० डा० ज़ाकिर हुसैन साहब राष्ट्रपति, उत्तर प्रदेश सरकार, मुस्लिम युनीवर्सिटी अलीगढ़, निज़ाम ट्रस्ट हैदराबाद, यू० पी० सुन्नी वक़्फ़ बोर्ड लखनऊ वग़ैरः से इस बेशब्रहा मिहनत को सताइश व इमदाद इनायत होने का फ़ख़्र हासिल है। इस बड़े कारनामे का हद्यः (उपहार) भी महज़ ३५'०० रखा गया है। रवानगी ख़र्च अलाहदः। जिल्दबन्दी व डाकख़र्च के लिए कमज़ कम १०'०० फ़ी जिल्द पेशगी ज़रूर इनायत कर मश्कूर फ़रमाइये। केवल हिन्दी अनुवाद लेना हो तो १०'०० में। केवल पारः अम्म बच्चों के लिए १'००।

साहबे दौलत से तवक़्क़ोहहै कि इसके नुस्ख़े कसीर तादाद में ख़रीद कर अवाम के उस हिस्से तक पहुँचायें जो किसी वजह से इसको ख़ुद ख़रीद नहीं सकते।

अरब एक संक्षिप्त इतिहास

मैकमिलन कम्पनी लन्दन से प्रकाशित और अरब के इतिहास पर निहायत मक़बूल पी० हिट्टी की अंग्रेज़ी पुस्तक का एक एडिशन के लिए कापी राइट हासिल कर हिन्दी में योग्य विद्वानों से हिन्दी तर्जुमः (अनुवाद) करवा कर छापा गया है। हर लाइब्रेरी, स्कूल, कालेज, यूनीवर्सिटी और अिल्म से शौक़ रखनेवाले साहबान को इसकी एक प्रति ज़रूर ख़रीद कर रखना चाहिये। एकही एडिशन छापने का इख़्तियार मैकमिलन कम्पनी से हासिल हुआ है, इसलिए ख़त्म होजाने पर फिर यह हिन्दी में दस्तयाब न होगा। नक्शों से सजी इस सजिल्द पुस्तक का मूल्य सिर्फ़ ८'०० है। रवानगी ख़र्च अलग।

हिन्दी में कुछ इस्लामी जीवनचरित्र

पैग़म्बरे इस्लाम, ००.५० हज़रत अबूबकर, ००'५० हज़रत उमर, ००'५० हज़रत उस्मान, ००'५० हज़रत अली, ००'५०।

स्वामी रामतीर्थ-साहित्य

१. यथार्थ समाजवाद २) २. गृहस्थ-धर्म २)
३. व्यावहारिक वेदान्त २) ४. विश्व-धर्म २)
५. राष्ट्रीय-धर्म २) ६. सफलता सोपान २) ७. नक़द धर्म २)

प्राप्ति स्थान—भुवन वाणी, १०६ रानीकटरा, लखनऊ-३

संपूर्ण बंकिम-साहित्य

यों तो बंकिम साहित्य लोग गली-लगी छाप कर बेच रहे हैं। परंतु बंगला भाषा से हिन्दी में मूर्धन्य अनुवादक साहित्यमनीषी स्व० श्री रूपनारायण पाण्डेय द्वारा अनुवादित सम्पूर्ण प्रामाणिक बंकिम सीरीज़ हमारे ही यहाँ से प्राप्य है।

आनन्दमठ २।।) विषवृक्ष २।।) चन्द्रशेखर २।।) कपालकुण्डला २।।)
कृष्णकांत का वसीयतनामा २।।) बंगशार्दूल सीताराम २।।)
देवी चौधरानी २।।) राधारानी ।।) दुर्गेशनन्दिनी २।।)
मृणालिनी २।।) इन्दिरा २।।) राजसिंह ३) रजनी २।।)
युगलांगुरीय ।।) लोकरहस्य २।।) कमलाकान्त का पोथा २।।)
राजमोहन की स्त्री २।।) नवाबनन्दिनी ३।।) मृण्मयी ३।।)

राष्ट्रीय आल्हा—प्राग् ऐतिहासिक काल से चीनी आक्रमण पर्यन्त भारत के शौर्य-पराक्रम का इतिहास वीर आल्हा छन्द में वर्णित। मूल्य ३·०० मात्र।

टाम काका की कुटिया (सचित्र)—(अंकिल टाम्स केबिन (अंग्रेज़ी) का भावानुवाद), अफ्रीकी गुलाम-व्यापार की दर्दनाक कहानी। अमरीका से दास-व्यापार को समाप्त कराने में इस पुस्तक का बड़ा हाथ रहा। मूल्य १।।)

सम्राट् नीरो—सामन्तवादी युग के रोमन साम्राज्य के अत्याचारों का रोमाञ्चकारी उपन्यास 'कोवाडिस' का हिन्दी रूपान्तर। मू० ४।।)

हरिश्चन्द्र—टीका सहित पद्याख्यान। मू० १)

हमारा भोजन—उत्तरप्रदेश राज्य द्वारा पुरस्कृत। लेखक श्री ज्ञानेन्द्रनाथ शुक्ल। मू० १।।)

भारतीय कृषि विज्ञान—चार खण्डों में सम्पूर्ण। अनाज, सब्ज़ी, फल, फूल, मेवा की खेती-बागबानी का विस्तृत वर्णन अगणित चित्रों सहित इतने सरल ढंग से समझाया गया है कि सामान्य ज्ञान वाले भी इस एक पुस्तक की सहायता से सफल फ़सल तैयार कर सकते हैं। मू० ७।।) मात्र

नोट—प्रत्येक आर्डर के साथ पेशगी रुपया आना ज़रूरी है।

प्राप्ति स्थान—भुवन वाणी, १०९ रानीकटरा, लखनऊ-३

गाँधी जी ने कहा था :—

हमें अछूत प्रथा की अपवित्रता को समाप्त करना है। जब तक हम दरिद्र तथा निःसहायों को पीड़ा देते हैं तब तक स्वराज्य की बात करना मूर्खता है और यदि स्वराज्य मिल भी गया तो वह छिन जायेगा।

आइए ! गाँधी जयंती के इस पुनीत अवसर पर
हम संकल्प करें कि

समाज से छूआ-छूत मिटायेंगे

पिछड़े हुए लोगों की उन्नति के लिए प्रयास करेंगे तथा समानता के आधार पर देश की समृद्धि के लिए प्रयत्न करेंगे

उत्तर प्रदेश सरकार ने

आज़ादी की पच्चीसवीं वर्ष-गाँठ के वर्ष में हरिजनों तथा अन्य पिछड़े वर्गों के लिए शिक्षा, आवास, सफ़ाई, पेयजल आदि की व्यवस्था के लिए विशेष कार्य-क्रम चलाये हैं।

ग १२२६७ सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश द्वारा प्रसारित

स्थापित वर्ष १९४९:५० फोन २५६३४
२२६९८

उत्तर प्रदेशीय सहकारी गन्ना समिति संघ लि०,

लखनऊ

१२, राणा प्रताप मार्ग लखनऊ

प्रदेश की १३३ सहकारी गन्ना समितियों की सर्वोच्च संस्था

गन्ना संघ व सदस्य समितियाँ लगभग २२ लाख गन्ना उत्पादकों के क्रय-विक्रय सम्बन्धी सभी समस्याओं का समाधान करते हुए तथा कृषि-उत्पादन व गन्ने की पैदावार बढ़ाने हेतु सभी आवश्यक साधनों को सुलभ करने में सतत प्रयत्नशील हैं।

लघु सिंचाई-साधनों को बढ़ावा देना, खादों का उपयोग बढ़ाने हेतु खाद-भण्डारों का निर्माण, विभिन्न प्रकार के उर्वरकों, खादों व कीट-नाशक पदार्थों का प्रबन्ध, उन्नतिशील बीजों का वितरण आदि कार्यों को सुविधाजनक बनाते हुये कार्यान्वित करना संघ का मुख्य कार्य है।

आधुनिकतम मशीनों से युक्त गन्ना-संघ-प्रेस सदस्य समितियों की मुद्रण-आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।

वाणी सरोवर

(अपने ढंग का निराला त्रैमासिक पत्र)

इस पत्र में हिन्दी, उर्दू, अरबी, फ़ारसी, संस्कृत, पारसी, बंगला, ओड़िया, मराठी, गुरमुखी, तमिळ, मलयाळम, असमी, गुजराती, तेलुगु, कन्नड़, सिन्धी, कश्मीरी और नेपाली के अनुपम ग्रंथों का हिन्दी अनुवाद तथा देवनागरी लिपि में उनका मूल पाठ धारावाहिक प्रकाशित हो रहा है। वार्षिक शुल्क १०.०० मात्र। पाली, प्राकृत आदि का धारावाहिक कार्यक्रम भी शीघ्र ही अपनाया जायगा।

नवीन ग्राहक बननेवाले सज्जनों को सन् १९७० से १९७२ तक का शुल्क ३०.०० और इसी प्रकार वर्ष १९७३ के लिए १०.०० अर्थात् ४०.०० चार वर्ष के लिए भेजना उनके हित में होगा। बीते हुए वर्षों के अंक न मंगाने पर धारावाहिक चलनेवाले पहले से शुरू अनेक ग्रंथ उनके संग्रहालय में अपूर्ण रह जायँगे।

प्रा० स्थान—भुवन वाणी ट्रस्ट ४०५/१२८ चौपटियाँ रोड, लखनऊ—३

बच्चों की स्वास्थ्य सुरक्षा एवं भयानक बीमारियों से बचाइए

★ चेचक
★ डिप्थीरिया (घट सर्प)
★ टीटनेस
★ कुकुर खाँसी
★ क्षय रोग

उर्पयुक्त टीके समयानुसार लगवाइए, विस्तृत जानकारी के लिए निःशुल्क सेवा तथा सलाह के लिए निकट के प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र अथवा जिला चिकित्सालय से सम्पर्क करें।

प्रसारितः—
निदेशक, चिकित्सा, स्वास्थ्य एवं परिवार नियोजन
ग १२७२७ उ० प्र० लखनऊ (स्वा० शिक्षा ब्यूरो)

कृषि सम्बन्धी नवीनतम जानकारी के लिए पढ़िए

'कृषि और पशुपालन'

(वार्षिक चन्दा तीन रुपये मात्र)

पत्रिका एवं अन्य सभी प्रकार के कृषि-प्रकाशनों के लिए लिखिएः—

संयुक्त कृषि निदेशक, प्रसार, शिक्षा एवं प्रशिक्षण ब्यूरो,
ग १३२२७ कृषि विभाग, उत्तर प्रदेश, लखनऊ।

Regd. No. R.N. 19347-70 Govt. of India

भुवन वाणी ट्रस्ट,

'प्रभाकर निलयम्', ४०५/१२८ चौपटियाँ रोड, लखनऊ–३

जो कार्य किये जा रहे हैं (सानुवाद देवनागरी-लिप्यन्तरण):—

१—(तमिळ) तिरुक्कुर्ळ् २—(तमिळ) कम्ब रामायण
३—(तॅलुगु) रंगनाथ रामायण ४—(कन्नड़) पम्प रामायण—जैनसाहित्य
५—(असमिया) माधवकंदली रामायण ६—(कश्मीरी) रामावतार चरित
७—(नेपाली) रामायण भानुभक्त कृत ८—(गुजराती) गिरधर रामायण
९—(बंगला) कृत्तिवास रामायण लं०कां० १०—(सिंधी) स्वामी के श्लोक
११—(मलयाळम) तुञ्चत्त् एळुत्तच्छन् कृत महाभारत
१२—(ओड़िआ) वैदेहीश-विळास—उपेन्द्र भञ्ज कृत
१३—(मराठी) श्रीराम-विजय—श्रीधर स्वामी कृत मूल एवं अनुवाद ।
१४—(उर्दू) 'उमराव जान अदा' के प्रसिद्धि-प्राप्त श्री 'रुसवा' का (नैतिक) उपन्यास "शरीफ़ज़ाद:" सम्पूर्ण-मूल्य ४.०० ।
१५—(फ़ारसी) दाराशिकोह कृत ५१ उपनिषदों के फ़ारसी-भाष्य (डॉ० ताराचंद द्वारा सम्पादित तथा ईरान में प्रकाशित 'सिर्रे अक्बर') का धारावाहिक हिन्दी अनुवाद ।
१६—(अ़रबी) रियाज़ुस्सालिहीन—(ज़ादॅ सफ़र) इस्लामी हदीसों के प्रामाणिक समुच्चय का हिन्दी रूपान्तर ।
१७—(वाणी सरोवर)—विविध भाषाओं के उपर्युक्त अनुपम ग्रंथों का सानुवाद धारावाहिक देवनागरी लिप्यन्तरण का त्रैमासिक पत्र—वार्षिक मूल्य १०·०० ।
१८—इनके अतिरिक्त संस्कृत, पाली-प्राकृत, पारसी (ज़रथूस्त्र-गाथा) आदि के अनेक सानुवाद देवनागरी-लिप्यन्तरण-ग्रंथ ।

ट्रस्ट की स्थापना से पूर्व, सानुवाद देवनागरी-लिप्यन्तरण के अन्य कार्य जो अन्यत्र हो चुके हैं:—

१—(अ़रबी) क़ुर्आन (मूल आयतें अरबी व देवनागरी लिपि में, अनुवाद, टिप्पणी सहित)—इस्लामी धर्माचार्यों द्वारा प्रतिपादित
२—(बंगला) कृत्तिवास रामायण—(पाँच काण्ड) बंगला मूल देवनागरी में लिप्यन्तरित, अवधी पद्यानुवाद—
३—(गुरमुखी) जपुजी तथा सुखमनी साहब—गुरमुखी मूल पाठ तथा गीता के यशस्वी अनुवादक खा०ब० ख़्वाज: दिलमुहम्मद कृत उर्दू पद्यानुवाद—दोनो देवनागरी लिपि में—

विज्ञापन के लिए, व्यवस्थापक, 'वाणी सरोवर' १२८, चौपटियाँ रोड, लखनऊ–३ से पत्र-व्यवहार कीजिए ।

वाणी प्रेस, लखनऊ-३ में मुद्रित एवं भुवन वाणी ट्रस्ट, रानीकटरा, लखनऊ द्वारा प्रकाशित ।
—द्वारा नन्दकुमार अवस्थी, सम्पादक